भारतीय-वाङ्मयेषु रामकथावर्णनम्



लेखकः
आचार्य आद्याचरण झा





भारतीयवाङ्मयेषु रामकथावर्णनम्

प्रथम खण्डम्

वाल्मीकि-आनन्द-अद्भुत-अध्यात्म-बालरामायणानां
हनुमन्नाटकस्य च संक्षिप्तं संस्कृत-
गद्यात्मकविश्लेषणम्

लेखकः

आचार्य पण्डित आद्याचरण झा



प्रकाशकः

तिरहुत विद्यापीठः, ग्राम-पात्रालयः-राँटी

जिला-मधुबनी (बिहार)

डॉ० इन्द्रमोहन झा "सच्चन" द्वारा

प्राप्तिस्थानम् :—

१ आचार्य चन्द्रदीप शुक्ल महामन्त्री

बिहार राज्य संस्कृत सम्मेलनम्

चौक-पटना सीटी

२ श्री घूरन झा

ग्राम-पोस्ट-मंगरौनी

जिला-मधुबनी (बिहार)

प्रबन्धकः

पण्डित श्वेतनाथ ओझा

प्रकाशन व्यवस्थापकः

आचार्य चन्द्रदीप शुक्ल

मूल्यम्—१७५ रूप्यकाणि

आषाढ़ शुक्ल द्वितीया-'रथयात्रा'

५ जुलाई १९८९ ई०

मुद्रणालय—

श्रीगोकुल मुद्रणालय

गोपाल मन्दिर लेन

वाराणसी-२२१००१

BHĀRTĪYA VĀNMAYESU
RĀM KATHĀ VARNANAM

Vol. I

Achārya Pt. SRI ADYĀCHARAN JHA



Publisher
Dr. INDRAMOHAN JHA 'SACHHAN'
TIRHUT VIDYAPEETH
P. O. RANTI
MADHUBANI (BIHAR)

AVAILABLE FROM

1—Sri Chandradip Shukla
Bihar Rajya Sanskrit Sahitya
Sammelanm
Chowk, Patna City

2—Sri Ghuran Jha
P. O. Mangarauni
Madhubani (Bihar)

Price :—175-00

Printer :
SRIGOKUL MUDRANALAYA
Gopal Mandir Lane
Varanasi-221 001

"समर्पणम्"

(१)

नो रक्षां व्यदधात् **भगवती तारा** समाराधिता,
नो वा पूजाविधानं विविधविधियुतं **शारदं** सर्व-सर्वकालम्
नो वा विद्याप्रदानं समधिकशते जीविकासंप्रदानम्,
न जाने सर्वमेतत् कथमिव सहसा शेषमायान्मदीयम्,

(२)

दैवेनाभिहतो विपत्तिपरिधौ दुर्भाग्यपूर्णो गतः,
श्री आद्याचरणोऽधुनाऽति विमनाः व्यापन्नखिन्नोजनः
श्री **नित्येन्द्र कला** विहाय यं सुगृहिणी गोलोकमासेविता,
तस्या एव सुकोमलस्मृतिपथे **श्री रामकाव्यं** भजे ।

(३)

वज्राधातेन सन्तप्तः **'कला' हीनो** निराश्रयः
'सीता-राम'-कथां वक्ष्ये ध्यात्वा **रामपदाम्बुजम्** ।

शोकसन्तप्तस्वान्तः

आद्याचरणः ।



गोलोकवासिनी-श्रीमती इन्द्र कला झा
(धर्मपत्नी-आद्याचरण झा)



आचार्य पण्डित आद्याचरण झा



RAJ BHAVAN
BANGALORE-560001
1-6-88

MESSAGE

I convey my best wishes for the success of the publication Vol.I of Bharatiya Vangmayeshu Ramakatha Varnanam written by Pandit Adyacharan Jha.

1/6
(P.VENKATASUBBAIAH)
Governor of Karnataka

Prof. R. N. DANDEKAR

Bhandarkar Oriental Research
Institute,
POONA 411 004 (India)
Phone No. : 56936

Ref No- 1309/88-89

27th January 1989

Dear Acharya Adyacharanji,

Thank you for your letter of January 9, 1989.

I am glad to know that the first volume of your <u>Rāmakathāvarṇanam</u> is expected to be published very soon. I am quite sure that the work will be found very fascinating by all students of the Rāmakathā.

With kind regards,

Yours sincerely,

(R. N. Dandekar)

Pandit Adyacharan Jha
Vill. & P.O. - Mangarauni
Dist. Madhubani (Bihar)

Prof. S. D. Laddu
M.A., M.Ed., Ph.D
Director,
Post-Graduate and Research Department

Bhandarkar Oriental Research Institute,
Poona 411004 (India)
Phone No. 56936

356/88-89

May 31, 1988

To

Pt. Adwacharan Jha
Vill. & P.O. Mangarauni
Dist. Madhubani,
Bihar

Dear Panditji,

Thank you for your letter no.51-100, dt.20.5.88, accompanied by the handout regarding the publication of Vol. I of your ambitions project of presenting the contents of the different versions of Ramayana as found in the different languages of India. Doing that in simple Sanskrit prose is, again, a very happy idea, as that will appeal to readers from every part of the vast land of Bhāratavarṣa. Inclusion of the two Sahasranama-s will add to the holiness of the Volume. It seems you have kept the Tulasiramayana and the Kambaramayana for an independent treatment.

The artificial walls of separation between man and man melt quickly while hearing the different episodes in the life of Rama and Sita. May Lord Rama bless you and your companions in your pious service. May your service stimulate every Indian to noble thoughts and actions.

Yours sincerely,
S D Laddu
(S. D. Laddu)

न्यायमूर्ति श्री विश्वनाथ मिश्र
सेवानिवृत्त न्यायाधीश, पटना उच्च न्यायालय

फोन : 23809

"हीरा-मोती"
रोड नं. 2, फ्लैट 16
श्रीकृष्ण नगर
पटना – 800 001

17 - 8 - 1986

My dear Panditji,

I am happy to go through your scheme of Ram Katha. To collect from different Ramayanas and to bring at one place in a few volumes the essence of all that has been said about Lord Rama, who has been painted by some as an embodiment of all that is good great and noble and by some as incarnation of Parabrahma , the Supreme Reality itself , to show their differences and to coordinate and integrate them is, by no means, an easy task. Your Sankalpa to do it even single handed shows the courage of a real Bhakta . Your decision to present this monumental work in Sanskrit , the mother of all languages, is again commendable, as translation from Sanskrit to any other language has always been the facination of writers but not vice-versa.

May "Shankar Suvan Keshrinandan" the greatest ever Bhakta be always there to guide you in this ludable endeavour

Congratulations.

Yours ever,

(V.Mishra)

Pt.Adyacharan Jha,
Camp-Patliputra,
Patna.

प्रो० वि० वेङ्कटाचलम्
कुलपति
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी–२२१ ००२

दिनांक २२–६–८९

शिवसङ्कल्पः

पण्डितप्रवरा आद्याचरण झा महाभागा अस्माकं चिरपरिचिताः सुहृदः। इमे हि विद्वांसः वैदुष्यविनयस्नेहसुनृतवागादिभिः प्रशस्तैरात्मगुणैः सर्वत्र विद्वन्मण्डलेषु प्रीतिसमादरभाज इति विदितमेव सहृदयानाम्। दरभङ्गा-संस्कृतविश्वविद्यालये आचार्यप्रतिकुलपतिप्रभृतिपदमलङ्कृत्य संप्रति प्राप्तावकाशाः स्वाध्यायप्रवचनपरायणाः श्रीरामचन्द्रकथापठनमनननिदिध्यासने कालमतिवाहयन्तीति यत्सत्यं भृशमुपकृतो भविष्यति भारतीयः जनसमाज इति निश्चप्रचम्।

एषां स्वाध्यायफलमेतत्पुस्तकव्याजेन समस्तहृदयहस्तं प्राप्स्यतीति नूनं प्रमोदावसरोऽयं रामकथारसिकानाम्। तत्रापि श्रीरामकथामाश्रित्य विश्वस्मिन् जगति यदुपबृंहणं जातं भगवद्वाल्मीकिप्रणीतस्य श्रीमद्रामायणस्य, तस्य सर्वस्याप्याकलने इमे प्रवृत्ता इति नूनं धन्याः सर्वे आदिकाव्यरसिकाः श्रीरामकथाभक्ताश्च। एतेषामयं श्रीरामकथानुसन्धानसङ्कल्पः परिपूर्णतामियादिति भगवन्तं विश्वेश्वरं प्रार्थयामहे।

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम्।
एकैकमक्षरं प्रोक्तं महापातकनाशनम्॥

इति रामायणसंप्रदायश्लोकरीत्या सर्वे ग्रन्थपाठकाः उपचितसत्त्वप्रकर्षाः भवन्तु इत्याशास्महे।

वि० वैङ्कटाचलम्

श्री रामकरण शर्मा

६३ विज्ञान विहार
दिल्ली–११००९२
२१–६–१९८९

पण्डित प्रवरैः श्री आद्याचरण झा महोदयै–विरचितं 'भारतीय-वाङ्मयेषु रामकथावर्णनं, प्रसभमाकृषति चेतो रामकथारसिकानाम् । वाल्मीकि–आनन्द–अद्‌भुत–अध्यात्म–बाल रामायणानां हनुमन्नाटकस्य च संक्षिप्त सारात्मकोऽयं रामकथा संग्रहः कल्पिष्यते प्रसाराय मर्यादा पुरुषोत्तमस्य भगवतः श्रीरामस्य सत्यशील सौन्दर्य सम्पदा मित्याशास्महे ।

नूनं वर्धापनार्हा विद्वद्वरेण्याः श्री पं॰ आद्याचरणझा महोदया रामकथासंग्रहात्मकस्यास्य प्रकाशनाय ग्रन्थस्येति सप्रश्रयं निवेदयते—

रामकरण शर्मा

(पूर्वकुलपतिः कामेश्वरसिंहदरभङ्गा संस्कृत विश्वविद्यालयस्य तथा वाराणसेय सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालयस्य च)

फोन : ६७२५

साहित्य वाचस्पति

डा० प्रभुदयाल अग्निहोत्री

ई-२/७२ महावीर नगर,

भोपाल-४६२०१६

ता० ३१-५-८८

पण्डित-धुरीणाः,

भवद्भिरनुष्ठीयमाने रामकथानुवर्णनाख्येऽस्मिन् सारस्वतेयागे ममातीव श्रद्धा। बहु विपश्चित्संपाद्यमेतत्पुण्यं कार्यमेकाकिनैव भवताऽहर्निशं तपस्यता भूरिश्रमार्जितं द्रव्यञ्च व्ययीकुर्वतायत्पूर्णतां प्रापितं तत्कस्य न रामकथामधुकरस्यहृदयं हर्षारितं विदध्यात्। पञ्चशतपृष्ठेषु एतावत्संख्याकानां रामायणानां नाटकादीनां च सारं बहुटिप्पणी समेतं समीक्षण पुरस्सरं च यत्समाहितं तदाप्याश्चर्यकरमेन।

भगवान् सीतापतिः भवत्सु, कार्येऽस्मिन् सहाय्यतेष्वन्येष्वपि च श्रद्धावत्सु स्वीयानुकम्पाप्रसादं वितरिष्यतीत्यहमाशासो प्रार्थये च भगवन्तं भवत्स्वास्थ्योत्साहस साधन-श्रद्धानां च दृढ़ीकरणाय।

सादर

प्रभुदयाल अग्निहोत्री

एन० नागमणि
उपाध्यक्ष
बिहार राज्य योजना आयोग एवं
योजना परामर्शी-सह-विकास आयुक्त
बिहार



पटना—800015

दिनांक २४ मई, 198६

अ० प्र० पत्रांक 104 /

प्रिय पंडित आद्याचरण झा

मुझे अपार हर्ष हुआ कि विभिन्न भारतीय भाषाओं के रामायणों की समीक्षा कर आप संस्कृत ग्रन्थ प्रकाशित कर रहे हैं। यह बहुत ही कठिन कार्य है और आपकी सफलता के लिए हमेशा मेरी शुभकामनाएँ,

भवदीय,
एन० नागमणि
(एन० नागमणि) 23/5/86

सेवा में,
श्री पंडित आद्याचरण झा,
ग्राम- पो० मंगरौनी,
जिला - मधुबनी (बिहार)।

हिन्द : एन० आई० जी० रोड
अरेरा कालोनी
भोपाल–१६
ता० ३–६–८८

आदरणीय झा महोदय,

सादर नमस्कार

भारतीय वाङ्मयों में रामकथा वर्णन की महती योजना आपने अपने हाथ में ली है और उसका प्रथम भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। आप सरल संस्कृत भाषा का प्रयोग अपने ग्रन्थों में करेंगे। यह भी अभिनन्दनीय निर्णय है।

आपकी 'राम भक्ति' वन्दनीय है। आपकी योजना राम कृपा से अवश्य सफल होगी।

कृपया मेरी मंगल कामना सहित बधाई स्वीकार करें।

आपकी राम भक्ति ही आपकी योजना को व्यापक बनायेगी और राम कथा प्रेमी आपके प्रयत्नों का निश्चय ही आदर करेंगे।

भवदीय

विनयमोहन शर्मा

दूरभाष : ७३८३७

मध्यप्रदेश रामचरितमानस चतुश्शताब्दी समारोह समिति
(जिसमें तुलसी-समिति सन्निहित है)

गांधी भवन
श्यामला हिल्स,
भोपाल ४६२००३

क्रमांक १३३/ विविध/ ८८ दिनांक २५ मई ८८

सम्मान्य झा महोदय,

सादर प्रणाम।

आपकी विज्ञप्ति क्रमांक १–३० दिनांक १६–५–८८ द्वारा भारतीय वाङ्मयेषु रामकथा वर्णनम् जिल्द के प्रकाशन की सूचना मिली। संस्कृत सहित सभी भारतीय भाषाओं में वर्णित रामकथा को सरल संस्कृत गद्य में प्रकाशित करने की आपकी परियोजना को फलीभूत होते देखकर संतोष होता है। इसके प्रथम खण्ड का शीघ्र प्रकाशन आपकी सतत साधना तथा रामकथा में आपके अनुराग की फलश्रुति है। निश्चय ही इससे एक बड़ी कमी की पूर्ति होगी तथा इसका 'ऐतिहासिक पावन यज्ञ' अभिधान सार्थक होगा।

मैं परियोजना की सफल पूर्णाहुति की उत्कंठापूर्वक प्रतीक्षा में हूँ।

भवदीय
गोरेलाल शुक्ल

सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड
CENTRAL COALFIELDS LIMITED
(कोल इण्डिया लिमिटेड की एक सहायक कम्पनी)
(A Subsidiary of Coal India Limited)

प्रेषकः—श्री वैद्यनाथ झा

अ. स. पत्र. सं. तिथि ६–८–१९८८

D. O. No. पी. ओ./के. टी./88/9539 Dated 6-8-1988

पत्रांक संख्या :–205-230 दिनांक 7-7-88

उद्गार

मुझे यह जानकर अपार हर्ष हुआ है कि राम कथा पर आधारित अनादि काल से संस्कृत वाङ्मय में रचित अनेकों ग्रन्थों एवं महाकाव्यों का सार संकलन संस्कृत गद्य में पं० श्री आद्याचरण जी द्वारा किया जा रहा है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का जीवन चरित्र भारतीय जीवन दर्शन का प्रेरणा स्रोत है। विभिन्न समयों में विभिन्न ऋषियों एवं मनीषियों द्वारा रचित राम कथा महाग्रन्थों में विषयान्तर एवं कथान्तर हो जाना स्वाभाविक ही है। किन्तु भारतीय जीवन दर्शन के विरोधियों एवं आधुनिक तर्कप्रधान बुद्धि जीवियों के लिए यह अन्तर भारतीय जीवन दर्शन पर आक्षेप करने का प्रशस्त आधार प्रस्तुत करता है। अतः राम कथा सम्बन्धी सभी महाकाव्यों एवं ग्रन्थों का समन्वित तथा उनके घटना चक्रों का क्रमबद्ध एवं तर्क संगत विवेचन परम आवश्यक है। पं० श्री झा का यह प्रयास इसी आवश्यकता की पूर्ति की दिशा में है। आशा है यह ग्रन्थ बृहदारण्य की तरह राम कथा के माध्यम से भारतीय जीवन दर्शन का सुन्दर एवं ससुचित मीमांसा प्रस्तुत करेगा।

भवदीय

वैद्यनाथ झा

प्रोफेसर डॉ० विष्णु किशोर झा 'बेचन'
प्रति-कुलपति
भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर-812007
फोन : कार्यालय-8271, आवास-20376, 20057
दिनांक, मई 24, 1988

149/PVC/88
24-5-88

मान्यवर,

सादर प्रणाम,

आपकी अधिसूचना क्रमांक 51-100 दिनांक 20/5/88 के द्वारा यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि आप भारतीय वाङ्गमेषु रामकथा वर्णनम् का प्रकाशन करने जा रहे हैं। जिसका प्रथम खण्ड शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। मैं इस ऐतिहासिक पावन प्रकाशन की अभ्यर्थना करता हूँ। मेरी हार्दिक शुभकामना है कि यह प्रकाशन यथासमय सम्पन्न हो।

श्रद्धा सहित,

आपका
डॉ० बेचन

अवतरणिका

बालमीकि-गिरि-सम्भूतारामसागर-गामिनी ।
पुनाति भुवनं पुण्या रामायणमहानदी ॥

इति साधारणतया जनाः निगदन्ति । मनोषिणस्तु--विशालपारावारायमाणं वालमीकि-रामायणं पाठंपाठं तस्य रत्नाकरत्वं निश्चिन्वन्ति । एनदेव रामायणं समेषामन्येषां रामायणानां मूलरूपमिति च विजानन्ति ।

भगवान् श्रीरामचन्द्रः स्वावतार-प्रयोजनं संसिद्धयन् एतादृशीं मर्यादां भुवि संस्थापयामास, एतादृशं च प्रजानुरञ्जनं राज्यं व्यवस्थापयामास येन अद्यापि तद् रामराज्यं सर्वत्र आदर्शायते । "रामादिवद् वर्तितव्यम्" इति रामचरितमनुकर्तुं प्रयत्यते लोकैः ।

श्रीरामचरितं 'धर्म्यं यशस्यमायुष्यं हितं बुद्धिविवर्धनम्' इति विश्वजनीनभावनया विश्वस्मिन्नपि अमरवाण्यां जगवाणीषु च श्रीरामकथाश्रितरचना अभूवन्, अद्युनापि भवन्ति । तासु एताः प्राधान्यं वैशिष्ट्यञ्च भजन्ते । अकारादि क्रमेण--

१. अगस्त्य रामायणम्
२. अग्निवेश रामायणम्
३. अत्रिरामायणम्
४. अद्भुत रामायणम्
५. अद्भुतोत्तरकाण्डम्
६. अध्यातमरामायणम्
७. अनर्घराघवनाटकम्
८. आनन्दरामायणम्
९. उत्तररामचरितनाटकम्
९. (क) उन्मत्त रामायणम्
१०. कपिलरामायणम्
११. कम्बरामायणम्
१२. कृत्तिवासरामायणम्
१३. क्रौञ्चरामायणम्
१४. गरुड़रामायणम्
१५. गोविन्दरामायणम्
१६. गौतमरामायणम्
१७. चम्पूरामायणम्
१८. जटायुरामायणम्
१९. जमदग्निरामायणम्
२०. जानकीहरणमहाकाव्यम्
२१. जैमिनिरामायणम्
२२. देहरामायणम्
२३. धर्मरामायणम्
२४. नारदीयरामायणम्
२५. नारदोक्तरामायणम्

२६. नैषधीयरामायणम्
२७. पुलस्त्यरामायणम्
२८. प्रसन्नराघवनाटकम्
२९. बालरामायणनाटकम्
३०. ब्रह्मरामायणम्
३१. भट्टिकाव्यम्
३२. भरतरामायणम्
३३. भरद्वाजरामायणम्
३४. भुशुण्डिरामायणम्
३५. मङ्गलरामायणम्
३६. मनुरामायणम्
३७. महावीरचरितनाटकम्
३८. महाभारत-बनपर्वान्तिर्गत श्रीरामकथा
३९. महारामायणम्
४०. महेश्वररामायणम्
४१. याज्ञवल्क्यरामायणम्
४२. योगवासिष्ठम्
४३. रघुवंशमहाकाव्यम्
४४. रामचरितचिन्तामणि
४५. रामसंहिता
४६. रामतापनीयोपनिषद्
४७. रामनाममाहात्म्यम्
४८. रामरक्षास्तोत्रम्
४९. रामाश्वमेधम्
५०. रामेश्वर संहिता
५१. ललितरामचरितम्
५२. ललितरामायणम्
५३. लोमशरामायणम्
५४. वसिष्ठरामायणम्
५५. बाल्मीकिरामायणम् (आदिकाव्यम्)
५६. विभीषणरामायणम्
५७. विरञ्चिरामायणम्
५८. विश्वामित्ररामायणम्
५९. वृत्तरामायणम्
६०. शिवरामायणम्
६१. श्वेतकेतुरामायणम्
६२. सुग्रीवरामायणम्
६३. सुतीक्ष्णरामायणम्
६४. सुनन्दरामायणम्
६५. सुमन्त्र रामायणम्
६६. सूर्यरामायणम्
६७. सौभरिरामायणम्
६८. स्कन्दरामायणम्
६९. हनुमद्रामायणम्
७०. हनुमन्नाटकम्

एतदतिरिक्तानि रामचरितमानस, विनयपत्रिका, मैथिली चन्दाझारामायण, मैथिली लालदासरामायण, द्विजवररचिन सीतायन, मैथिलीशरणकृत साकेत, बुल्केरचित रामसाहित्य, कुवेरनाथ शुक्लरचित वाल्मीकिरचनामृत, रामसाहित्याश्रित शताधिक शोध प्रबन्धादीनि प्रकाशितानि अप्रकाशितानि च रामकथाश्रितरचनानि विश्वस्मिन् विराजन्तेतमाम् ।

विविधासु भाषासु एतासु विभिन्नासु रचनासु विद्यमानास्वपि

अद्यापि श्रीरामचरिताश्रितकथां विलिख्य मनीषिणः जीवनसाफल्यम् अनुभवन्ति ।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तः सम्यगेव अवोचन्--

"राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है ।
कोई कवि बन जाय सहज संभाव्य है ।।" इति ।

रमणीयताया रूपमिव प्रतिक्षणं रमणीय नवरूपतां दधाति श्रीरामकथेति मन्वानः एतस्यामेव परम्परायाम् स्वात्मानं धन्यं कर्तुंकामः कामेश्वरसिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय पूर्वप्रतिकुलपतिः स्वनामधन्यः पण्डित श्रीमदाद्याचरण झा "भारतीय वाङ्मयेषु रामकथा वर्णनमिति" वृहतीं योजनां समारम्य प्रतिकूलायामपि परिस्थितौ कृतसंकल्पः श्रीरामचर्चाऽर्चां प्रकुर्वन्नास्ते इति महान्तं प्रमोदं जनयति ।

विभिन्नेषु खण्डेषु प्रकाशयिष्यमाणस्य प्रकृत रामकथा वर्णनस्य प्रथमोऽयं खण्डः जायतां जगन्मङ्गलाय विश्वजनहिताय । अवशिष्टविशिष्टखण्डानां प्रणयनाय सम्पादनायच पण्डित श्रीझा महोदयस्य नैरुज्यं चिरायुष्यञ्च कामयमानः तमेव विग्रहवन्तं धर्मम्--

मनोऽभिरामं नयनाभिरामम्
वचोऽभिरामं श्रवणाभिरामम् ।
सचाभिरामं सतताभिरामम्
वन्दे सदा दाशरथिं च रामम् ।।

भूयोभूयः प्रणमामि । इतिशम्--

जयमन्त मिश्रः

१६-५-८८

(राष्ट्रपति पुरस्कार सम्मानितः पूर्वकुलपतिः, कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृतविश्वविद्यालयः दरभङ्गा)

"आमुखम्"

(१) "भारतीय वाङ्मयेषु रामकथावर्णनम्"–विशालमेतस्याः परियोजनायाः कल्पनाविषये एका संक्षिप्त विवरणात्मिका पुस्तिका हिन्दी-आँग्ल भाषयोः मया लिखिता या च परियोजनायाः संयोजकेन डॉ० सच्चन महोदयेन मुद्रापयित्वा वितरिता। पुस्तिकेयं पूर्वपीठिका स्वरूपा।

(२) यद्यपि परियोजनेयं संस्कृतवाङ्मयी किन्तु विवरणात्मिकापुस्तिकायाः अविकलरूपेणैवात्र संन्निवेशः समुचितः इति विचार्य परिशिष्टे आँग्लभाषाविवरणं प्रदत्तम्।

(३) संस्कृतगद्यमयी परियोजनेयं समुत्साहेन प्रारब्धा। किन्तु **"श्रेयांसि बहुविघ्नानि" निरपवादोऽयं प्रवादः**। विश्वविद्यालय-सेयानिवृत्त्यनन्तरमपि यथा संभवं प्रगतिरासीत्, मध्ये विगत १९८७ ई० वर्षेऽक्टूयरमासे सहसा स्वल्परूपेण हृदयाघातेन पीडितः सन् विशेषज्ञ चिकित्सा परिधावेवासम्।

(४) ततश्चैकेन सुहृदा दरभङ्गास्थ आकाशवाणी–केन्द्रनिदेशकेन प्रख्यातनाटककारेण श्री चतुर्भुज महाभागेन कथितं यत् संक्षिप्तरूपेणैव प्रथमखण्डं यथाशीघ्रं प्रकाशयितव्यम्। विचारोऽयं सर्वथा व्यावहारिकः सामयिकश्चासीत्। यतो हि नीलाकाशवदनन्तं सागरवद् गम्भीरं विशालव्ययश्रमसाध्यं कार्यमिदं न सुकरम्। जीवनं च चलम्, चलेऽपि जीवने जीवनयात्रा कठिना, सहायकश्च क्रमशः क्षीणतरः। फलतस्तमेव पन्थानमनुसृत्य प्रारब्धयोजनायां लघूकरणं विहितम्।

(५) परिणामतः **"वाल्मीकि–आनन्द–अद्भुत–अध्यात्म–बालरामायणानां कथानां काण्डानुसारविवरणं संस्कृतगद्यमयं विधाय** प्रकाशनार्थं बद्धपरिकरोऽभूवम्। हनुमच्चर्चां विना रामकथा परिपूर्णा नैव स्यादिति विचिन्त्यान्ते **"हनूमन्नाटक"–कथामपि संयोजितवान्**।

(६) सर्वेषामेतेषां रामायणानां मध्ये कथानां विभिन्नता विभिन्नावर्णनशैली चाद्भुता चमत्कारात्मिका। यद्यपि सर्वेषां मूलं स्रोतस्तु "वाल्मीकि रामायण"मेव नात्र कुत्रापि मतभेदलेशः। किन्तु मूलस्रोतसा संगृहीतमुख्यकथातिरिक्तमनेकानेकवर्णनं भिन्नम्।

(७) तत्र तत्र तासां भिन्नतानां स्पष्टं चित्रं विविच्य प्रदत्तमस्मिन् ग्रन्थे। एतत् सर्वं सर्वथा मनोग्राहि ज्ञानविज्ञानवर्धकं तत्त्वज्ञानप्रदायकम्। समग्रभारतीयवाङ्मयेषु प्रायः 'रामकथा' पद्यमयी। सत्यामपि विविधटीका-टिप्पण्यां कस्यामपि भाषायां गद्ये रामकथानोपलब्धा दृश्यते। अनयादृष्ट्याऽभिनवोऽयं प्रयासः इति तु स्पष्टम्।

(८) "गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति" पारम्परिकेऽस्मिन् परिप्रेक्ष्ये केवलं रामनाममाहात्म्य-बलेन दुष्करे कार्ये स्वान्तःसुखाय रामचर्चाऽर्चया जीवनान्तं सफलीकर्तुमेव ममायं दुःसाहसः "अब्धिर्लङ्घित एव वानरभटैः किन्त्वस्य गंभीरतामापातालनिमग्नपीवरतनुर्जानाति मन्थाचलः", हनूमतः इत्युक्तिरिव तथा च महाकविकालिदासेन सूर्यवंशवर्णनक्रमे रघुवंशमहाकाव्ये प्रोक्तं "क्व सूर्यप्रभवोवंशः क्वचाल्पविषयामतिः, तितीर्षुर्दुस्तरां मोहादुडुपेनास्मि सागरम्" एवं च "मणौवज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः" इत्युक्तिरिवापि मम स्थितिर्न वर्तते यतो हि मां निकषा न स उडुपः, न तत् सूत्रं न चापि हनूमतो गतिः। फलतः यथायोग्यं दीर्घसन्धिसमासादिरहितं प्रचलितशब्दात्मकमेव गद्यं प्रयुक्तं येनेदं सार्वजनीनं स्यात्।

(६) अस्मिन् महति पावनयज्ञे येषां सुहृदां विद्वज्जनानां वरेण्य रामकथामर्मज्ञानां पारिवारिकसदस्यानां च सहयोगः परामर्शश्च प्राप्तः तेषामतिसंक्षिप्तविवरणमत्र दीयते।

"कृतज्ञता ज्ञापनम्"

(क) अस्याः परियोजनायाः आजीवनमध्यक्षाः ममाभिन्नहृदयाः बालसुहृदो डॉ० जयमन्तमिश्र महाभागाः स्तुत्याः यैरारम्भत एव प्रोत्साहनं विधाय ग्रन्थस्यास्य गवेषणापूर्णाऽवतरणिका लिखिता। न तान् प्रति किमपि कथनीयं केवलं मौनस्नेहश्रद्धावनतोऽहम् ।

(ख) परियोजनायाः **समर्थ संचालकः डॉ० इन्द्रमोहन झा "सच्चन"** महोदयः शुभाशिषा संयोज्य संवर्ध्यते । नाधिकमत्रवचनीयम् ।

(ग) मङ्गरौनी ग्रामस्य प्रख्यात "फणदह" (फन्नावार) वंशावतंसो मम प्रतिवेशी प्रतिभान्वितः **श्रीविनयानन्द झा, एम. ए. (द्वय)** महाभागः सर्वथाऽभिनन्दनीयः यो युवा मनीषी धृतियुक्तः शोभनाक्षरी दुष्करं "प्रेसकापी"-कारण-कार्यं सोत्साहं प्रसन्नचेतसा सुसम्पादितवान्, यथायोग्यं यत्र तत्र परामर्शं च प्रदत्तवान् । भगवती तारा सुयोग्याय विदुषेऽस्मै कल्याणं वितरतात् ।

(घ) स्नेह-कल्याण-भाजनमनुजप्रतिमो व्युत्पन्नो विद्वान् स्व. विद्यावाचस्यति आचार्य ब्रह्मदत्तद्विवेदि-महाभागानां योग्यतमः पुत्रः डॉ. वाचस्पति द्विवेदी सर्वथाऽभिनन्दनीयः श्लाघ्यश्च योहि पुस्तकस्यास्य प्रकाशने सद्यः निमित्तकारणतां भजते ।

सोऽय 'वाचस्पतिः' वाचस्पतितुल्यप्रतिष्ठामासादयन् नैरुज्यं दीर्घायुष्यं च लभताम् ।

भोजपुरमण्डलस्थ धौरीग्रामस्य श्रीचन्द्रिकादास संस्कृत महाविद्यालयस्य प्राचार्यः **आयुष्मान् पण्डित श्वेतनाथ ओझा महोदयः** (ममात्मजप्रतिमः तथा गोलोकवासिन्या श्री इन्द्रकला झा देव्याः चतुर्थ पुत्रतुल्यत्वेन स्वीकृतः) सर्वात्मनाऽस्मिन् पावनयज्ञे संलग्नो विद्यते । अयमेवास्य ग्रन्थस्य प्रबन्ध-सम्पादकश्च ।

(च) मम चिरमित्रं सुरभारती सेवासंश्लिष्टः व्युत्पन्नो वरिष्ठो विद्वान् विहार राज्य संस्कृत-साहित्य-सम्मेलनस्य महामन्त्री **आचार्य**

चन्द्रदीप शुद्ध महाभागः सर्वथा प्रतिकूलपरिस्थितावपि यदि मां नासंवर्धयिष्यत् तर्हि--परियोजनाप्रथमचरणसम्पादनेऽपि मम प्रवृत्तिर्न सुलभा। ग्रन्थस्यास्य प्रकाशने साद्यन्तं संलग्नोऽयं प्रकाशकश्चापि। कायिकवाचिकमानसिकरूपेण मया साकं सर्वथा सर्वदा संश्लिष्टं शुक्ल महोदयं प्रति सस्नेहमानतोऽस्मि।

(छ) मम बालसखा विख्यातगणितज्ञो व्युत्पन्नो वरिष्ठो विद्वान् सेवा निवृत्त प्राचार्यः **पण्डित फुलकुमार झा महोदयस्तु** यज्ञस्यास्य प्रधानो ऋत्विक्। यो हि विभिन्नरामायणानुवादे कृतभूरिपरिश्रमः सद्यः सहयोगी प्रेरणादायकः। ग्रन्थेनानेन सह स सदैवस्मरणीयः।

(ज) एतद्ग्रन्थरचना निबन्धनाङ्कादिविधौमम हृद्यः समुत्साही सहायकः स्नेहभाजनं वरीयान् प्रधानाध्यापकः **पण्डित मायानन्द झा** नित्यं सर्वथा कल्याणभाजनं भूयात्।

(झ) मधुबनीस्थ डाबर-आयुर्वेद संस्थानस्य संचालकः **वैद्य श्रीनत्थूराम शर्मा महोदयोऽ**स्मिन् यज्ञे पुरोधा वर्तते। अयं हि मम पारिवारिक सदस्य एव। समुत्साहवन्तमेनं विद्वांसं मङ्गलकामनया संयोज्यते।

(ञ) मध्यप्रदेश-भोपालस्थित 'मानस चतुःशती' समारोहस्याध्यक्षः "मानस भारती" पत्रिकायाः प्रधान सम्पादकः, मध्यप्रदेश शासनस्य सेवा-निवृत्तो भारतीयप्रशासनसेवायाः वरिष्ठः सेवानिवृत्तसदस्यः **श्री गोरेलाल शुक्ल महोदयस्तथा** मां समुद्बोधितवान् येनाहं सोत्साहमस्मिन् यज्ञे संप्रवृत्तोऽभूवम्।

मानसमर्मज्ञो रामकथाचर्चाऽर्चायां संलग्नः शुक्ल महाभागः सर्वथा वन्दनीयः।

(ट) लक्ष्मणपुरी (लखनऊ) स्थित 'भुवन-वाणी-ट्रस्ट-मुख्यन्यासी सभापतिः विद्यावयोवृद्धः **पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी महाभागस्तु** भक्त्या श्रद्धया च प्रणम्यः। येनावस्थी महोदयेन देवनागरी लिपेः राष्ट्रभाषायाश्च सार्वभौमसत्तास्थापनार्थमभूतपूर्व सेवाकार्याणि कृतानि। एतेषां प्रसंगे मम वाणी मौनीभूता-"गिरा अनयन नयन बिनु वाणी"। परिशिष्टे चास्य महानुभावस्य पत्रस्याविकल प्रतिलिपिर्वर्तते। पत्रमिदं किमपि गूढतत्त्वं स्वयं वक्ति।

(ठ) नात्र मया पारिवारिक प्रत्येकसदस्यनामोल्लेखपूर्वकं किमपि कथ्यते । एतेषां नामानि ग्रन्तकर्तुः संक्षिप्तपरिचयेऽन्ते सन्निविष्टानि । **विनीतो ममानुजः, गुणशालिनो मम पुत्राः, भ्रातुष्पुत्राः आयुष्मत्यः पुत्रबध्वः, योग्यतमाः सर्वे जामातारः, सर्वाः सुशिक्षिताः कन्यकाः, एका संवेदनशीला पौत्री च** ममाशीर्वादभाजनानि सन्ति शोभन्ते च । तेभ्यः परिपूर्णं कल्याणं भवतात् ।

"पुण्यं स्मरणम्"

(१) एकषष्ठि (६१) वर्षपूर्वमेव दिवं गतानां प्रख्यातयशसां प्रतिभाशालिनां विद्वज्जनशिरोभूषणानां स्वपितृचरणानां **ताराचरण झा महाभागानां पादपद्मं ध्यायं ध्यायं भूयोभूयो नमामि ।**

(२) पञ्चचत्वारिंशद्वर्ष (४५) पूर्वमेव स्वर्गतानां सरस्वती-**वरदपुत्राणामुत्तरभारत भूखण्डे** संहिता–विज्ञानोभयरीत्यवेदशास्त्र निष्णातानां पितृव्यगुरुचरणानां **कालीचरण झा महानुभावानां** चरणारविन्दं स्मृत्वाऽवनतोऽस्मि ।

(३) एकपञ्चाशत् (५१) वर्ष पूर्वमेव नित्यब्रह्मलीनां विदुषीं शीलसौजन्यमयीं **मातरं भुवनेश्वरी देवीं** भक्त्या स्मारं स्मारं विह्वलोऽहमानतोऽस्मि ।

(४) वृहस्पतिरिवापराणां गुरुवर्याणां विद्यावाचस्पति **पण्डितराज श्रीनमोनारायण झा महानुभावानां** चरणारविन्दे समानतोऽस्मि येषामाशीर्वचोभिर्विद्या प्राप्ता । ये चाद्यापि नित्यं मङ्गलं कामयन्ते ।

(५) अन्ते च पञ्च (५) वर्ष पूर्वमेव (१९८४ ई० वर्षे ११ फरवरी दिनाङ्के) सद्यो गोलोकवासिनीं परियोजना–प्रेरणामूर्ति सर्गगुणोपेतां **धर्मपत्नीम् इन्द्रकलां** विदीर्णहृदयेन सस्नेहं संस्मृत्य विरमामि ।

आद्याचरण झा

श्री रामकथा-प्रसङ्गे

(I) वैदिकवाङ्मयादारभ्य शतकोटि रामायणान्तर्गते विस्तृतासीमितरामकथाप्रसङ्गे किमपि कथनं सर्वथा बालचापल्यमेवेति नात्र वैमत्यम् । तथापि सूत्ररूपेण-संकेतरूपेण-स्वज्ञानुसारं नाममात्रमेव कियती सूचना प्रदीयते ।

(II) सर्वप्रथममस्यामेव शताब्द्यां सद्यो दिवंगतानां डॉ० कॉमिल बुल्के महाभागानां चर्चा सादरं ससम्मानं क्रियते येषां सान्निध्यं १९६३ ई० वः १९७० ई० पर्यन्तं मम राँची कार्यकाले सर्वथा श्रेयस्करं चासीत् ।

(III) डॉ० बुल्के महाभागस्य शोधग्रन्थः "रामकथा" १९५० ई० वर्षे प्रयाग विश्वविद्यालयस्य हिन्दीपरिषद् द्वारा प्रकाशितो योऽधुना दुष्प्राप्यः ।

(IV) संयोगवशात् तं ग्रन्थं कुतोऽप्यधिगत्य तस्य सम्पूर्णग्रन्थस्य छायाऽनुकृतिं (फोटो स्टेट) कारयित्वा सानुकृतिर्मम समीपं वर्तते । मूलग्रन्थस्तु प्रत्यावर्तितः ।

(V) एतस्मिन् शोधग्रन्थेऽनेकाः सप्रमाणं महत्वपूर्णाः सूचनाः विद्यन्ते । यया सूचनया रामकथा विषये नवं नवं तथ्यं समक्षमायातम् । रामकथाप्रसङ्गे संकलिता नेदृशी सामग्री एकत्र समुपलब्धाऽवलोकिता ।

(VI) एतदतिरिक्तं विविधभाषायां समुलब्धरामकथा सम्बन्धित-शोधग्रन्थेभ्यः यानि तथ्यानि समुपलब्धानि तेषां दिग्दर्शनमत्र वर्तते ।

(१) रामकथायाः मूलमुत्सं स्रोतश्च 'वेद' एव इति "बाल्मीकि रामायणम्-पुरोवाक्"-शीर्षके संक्षिप्तरूपेणोद्धृतं वर्तते ।

(२) ऋग्वेदे 'इक्ष्वाकु' शब्दस्य चर्चा वर्तते, यथाः "यस्येक्ष्वाकुरूपव्रते रेवान् मरायी एधते' ।

(३) **अथर्ववेदे**—त्वा वेद पूर्वं इक्ष्वाकोयं (१९-३९-९)

(४) **ऋग्वेदे**—"चत्वारिंशद्दशरथस्य शोणाः सहस्रस्याग्रे श्रेणिं नयन्ति" (१-१२६-४)

(५) **तैत्तिरीय आरण्यके**—संवत्सरं न मासमश्नीयात्, न रामामुपेयात्, नास्य राम उच्छिष्टं पिवेत्, तेज एव तत् संश्यति ।

अत्र सायणाचार्यानुसारं "राम" शब्दस्य रमणीयपुत्रोऽर्थः ।

(६) **ऋग्वेदे**—"प्रतद्दुःशीमे पृथवाने वेने पुरामे वोच मसुरे मघवत्सु" (१०-९३-१४)

(७) **ऐतरेय ब्राह्मणे**—"राममार्गवेय श्यापर्णीये ब्राह्मण" (७-२७-३४)

(८) **शतपथ ब्राह्मणे**—राम औपस्त्विति (४-६-१७)

(९) **बृहदारण्यक उपनिषद्ग्रन्थे**—अत्र जनक-याज्ञवल्क्य प्रसङ्गे विस्तृतं वृतान्तं (४-१-१ ताः ४-४-७ पर्यन्तं) विद्यते ।

एतदरिक्तं कौषीतकी-उपनिषद् ग्रन्थेऽपि विदेहजनकस्य चर्चा समायाता ।

एवं प्रकारेण राशकथा बैदिककालादारभ्य उपनिषत्कालपर्यन्तं विविधप्रकारेण विविधशैल्यां समुपलभ्यते ।

(VII) तदनन्तरं "रामायण-कालः" समायातः । रामायणयुगे सर्वप्रथमं बाल्मीकि-रामायणमेव समक्षमायाति । नानाविध-समीक्षा-गवेषणानन्तरं निर्विवादरूपेण बाल्मीकि-रामायणस्थ प्राथमिकता सिद्धा, प्रमाणिता च विद्यते नात्र वैमत्यम् ।

(१) ऐतिहासिकानुसन्धानक्रमे 'आदिरामायण' नामकग्रन्थः समक्षमायातः । द्वादशसहस्रसंख्यात्मकपद्यसमूहोऽयं ग्रन्थः बाल्मीकिना निर्मितः इति निश्चितम् ।

(२) आदिरामायणे बालकाण्डम्-उत्तरकाण्डम् च नैव विद्यते । अयोध्याकाण्डतो युद्धकाण्डपर्यन्तमेवास्मिन् रामायणे विद्यते यत्र द्वादश सहस्रसंख्यकपरिमिताः श्लोकाः सन्ति ।

(३) चतुर्विंशतिसहस्रात्मके प्रसिद्धे आदिकाव्ये बाल्मीकि रामायणे क्रमशः बालकाण्डम्-उत्तरकाण्डम् च संनिवेश्य यत्र तत्र

कथासु परिवर्तनं परिवर्धनं च विधाय आदिकाव्यमिदं रामायणं निरमायि बाल्मीकिना। यथा उत्तरकाण्डे [बाल्मीकिना प्रोक्तं यत् :—

"कृत्स्नं रामायणं काव्यं गामतां परयामुदा"

(उ० का० ९३)

एतेन ज्ञायते यत् रामकथा मौलिकरूपेण प्रचलिता आसीत्। प्रायः तदेवकाव्यमादिरामायणम्।

(४) समीक्षाक्रमे सुस्पष्टमिदं यत् बालकाण्डस्य उत्तरकाण्डस्य च वर्णनशैली-रचनाशैली च अयोध्याकाण्डादारभ्य युद्धकाण्डपर्यन्तं रचनशैलीतः [सर्वथा भिन्नाः विद्यते।

परिणामतः आदिरामायणस्यैव 'आदि' शब्दमादाय सर्वत्र "इति श्री बाल्मीकीये आदिकाव्ये" इति वाक्यं प्रचलितम्।

(५) इति तु ऐतिहासिकानामनुसन्धानकर्तृणां च तर्क-वितर्कः। भवतु नामैवं विचार-विमर्शस्तर्कवितर्को वा।

'रामकथा' भारतीयजीवनपद्धतयाः मानवीय जीवन-यात्रायाः एकमेवाधारीभूता यामनुसृत्यैव किमपि कर्तुं कोऽपि शक्नोति।

(६) वाल्मीकिकृतमेव-"आनन्दरामायणम्" 'अद्भुतरामायणम्' च समुपलभ्यते यत्र कथायां वर्णनशैल्यां च सर्वथा विभिन्नता दृश्यते। यस्य विश्लेषणमस्मिन् ग्रन्थेऽग्रे विद्यते।

(७) तदनन्तरं महति संस्कृत वाङ्मये महाभारते, सर्वस्मिन् पुराणे, उपपुराणे च 'रामकथा' सर्वत्र विद्यते एव ! विशेषतः अग्निपुराणे प्रथमस्कन्धे पञ्चमाध्यायतः एकादशाध्याय (५-११) पर्यन्तं, सप्तसु अध्यायेषु बाल्मीकिरामायणस्य सप्तकाण्डानां संक्षिप्तकथा-'बालकाण्ड-अयोध्याकाण्ड-अरण्यकाण्ड-किष्किन्धाकाण्ड-सुन्दरकाण्ड-युद्धकाण्ड-उत्तरकाण्ड"—नामभिरेव पृथक्-पृथक् एकैकस्मिन्नध्याये विद्योतते।

(८) श्रीमद्धेवीभागवत-महापुराणेऽपि रामकथा सुविशदं मनोग्राहिणी सुमधुरकाव्यात्मिका दृश्यते। तत्र रामचन्द्रस्य भगवत्या दुर्गादेव्याः विशेषाराधनं देव्यावरप्रदानादिकं चातिमहत्वपूर्णम्।

(९) ततश्च सागरवद्विस्तृते संस्कृतवाङ्मयकाव्य-नाटके राम-काव्यं तु राजते एव ।

(१०) भारतीयवाङ्मयस्य संस्कृतेत्तर सर्वासु प्रसिद्धभाषासु, आञ्चलिकक्षेत्रीय भाषासु च रामकाव्यं विद्यते । बौद्ध-जैनादि जातक-कथायामपि विस्तृतरूपेण रामकथा समुपलभ्यते ।

(११) आँग्ल-पर्सियन-अरबी-जर्मन-थाई-रसियन-फ्रेंच प्रभृति समृद्धवैदेशिकभाषासु विशदरूपेण विशालग्रन्थेषु रामकथा समुप-लब्धा विद्यते ।

फलतोऽसंख्यरामकाव्येषु विविधरूपेण 'रामकथा' चर्चाऽर्चा सर्व-त्राखण्डरूपेण विराजतेऽवलोक्यते च या च, यावच्चन्द्रदिवाकरौ न केवलं भारतभूखण्डमपि तु समग्रं भूमण्डलं पथप्रदर्शनं कारयति कारयिष्यति चेति शम् ।

आद्याचरण झा

पुरोवाक्

बाल्मीकि-रामायणम्

'रामकथा' सन्दर्भे सर्वप्रथमं **'बाल्मीकिरामायणं'** समक्षमायाति। विशालपारावारवत् रामायणमिदं विश्वस्मिन् मूर्धन्यं विद्यते। चतुर्विंशति-सहस्रपद्यात्मकेऽस्मिन् रामायणे रामकथा-सम्बन्धि-मूलतत्वं समग्रवर्णनं च विराजते।

बाल्मीकिमुखात् कथमिदं काव्यमुद्गतं कथं च तदेव काव्यं भारतीय-समस्तवाङ्मयकाव्यानामिदं काव्यमित्यस्य वर्णनेन सह प्रथमकाण्डे-बालकाण्डे-एवादितः पञ्चमाध्यायमध्ये एव समस्त रामकथा संक्षिप्तरूपेण वर्णिताऽस्ति। बाल्मीकेरादिकवित्वं च विशदीकृतम्।

ततश्च षष्ठसर्गात् सुविस्तरा रामकथा-वाग्धारा प्रवहमाना वर्तते। तासां वर्णनमग्रे "बाल्मीकि-रामायण" विवरणे सन्निविष्टम्।

बालकाण्डात्पूर्वमेवादौ पञ्चस्वध्यायेषु विविधरूपेण बाल्मीकि-रामायण-माहात्म्यं वर्णितम्। तथा च ब्रह्मणा समादिष्टो बाल्मीकिः 'रामकथां' कथितवान्। एतदालोके स्पष्टं ज्ञायते यत् त्रैलोक्यसृष्टि-कर्ता ब्रह्मा स्वयमेव रामकथा-रचना-प्रेरकः। एतेन इत्यपि स्पष्टं प्रतीयते यत् **'वेद' एव रामकथामूलम्**। यतोहि ऋग्वेदे कियन्तो निम्नोद्धृताः मन्त्राः रामकथां रहस्यरूपेण सूचयन्ति।

महर्षि-यास्केन "ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः" इति प्रतिपादितम्। ते च ऋषयः मन्त्ररहस्यमपि जानन्ते। तदनुसारमिमे मन्त्राः रहस्यात्मक-रूपेण सीतारामसकेतं कृतवन्तः। यथा—

(क) कं नश्चित्रमिषण्यसि चिकित्वान् पृथुगमानं वाश्नं वावृधय्यै,
कस्य तस्य दातुः श्रवसोः वज्रं वृत्ततमुरमपिन्वन्।

(ख) सहिद्युता-विद्युतावेति-साम पृथु योनिमसुरत्वामाससाद,
सनीलेभिः प्रहसानो अस्य भ्रातुर्न ऋते सप्त यस्य मायाः।

(ग) स वाजं याताप दुष्पादयन् वर्याता परिषत्सनिष्यत्, अनर्वायिच्छत दुरस्य वेदोऽघ्नन् शिश्नदेवा अभियर्वसाऽभूत् । (ऋग्वेद अष्टकः ८, अध्याय ५, वर्गः १०, सूक्तम्-९९, मन्त्राः-१, २, ३)

अर्थात् विशेषेण वेदार्थं खनति इति विखताब्रह्मा, बभ्रीभिः नु वित्तं-परिवारितम् गृहास्विति-बाल्मीकिवयाः ताभिः बल्मीकगत-मापादितो मुनिः बाल्मीकिः, स एव बभ्र इत्युच्यते ।

ततः स रामः सनीलेभिः स्वरम्यैः समैन्यरावणमायां प्रहसनमानः विफलं चकार । यतो हि ऋते-सत्यस्वरूपे रामे तस्य माया निष्फला । यद्यपि सा माया सप्तऋषीणां भ्रातुः रावणस्यासीत्-किन्तु सा माया तत्र रामेऽसफला । स रामः द्युता = तेजसा विद्युता-विद्युत्समाना-पृथुयोनिं = पृथ्वीपुत्रीं सीतां-साकारं कृत्वा शान्तिपूर्वकं वेति = वनं जगाम नां असुरत्वां रावणः आससाद = हृतः ।

मायारहितो रामः अनर्वा = वाहनरहितः संग्रामे गतः, तथा ऋषिकुलोत्पन्नः रावणः शिश्नदेवा = कामी आसीत्, अतः तस्य संहारं कृत्वा स रामः वर्षसा-ब्रह्मरूपेण अभ्यभूतः = विलीनः । (सायण-भाष्यम्)

उपर्युक्त दिग्दर्शनेन 'ऋग्वेदे' तस्य विश्वविख्यात सायण-भाष्यटीकायां च राम-सीता-स्रोतस्तु 'वेदे' एवेति । निम्नाङ्कित पौराणिक वाक्यैश्च रामः = परब्रह्मस्वरूपः स्वकीयरूपं **चतुर्धा**-"राम-भरत, लक्ष्मण-शत्रुघ्न" रूपे विभज्य मनुष्यरूपेण पितरं दशरथं प्रीणितवान् ।

स्वयं च ब्रह्मा समागत्य बाल्मीकि = मुखेन रामकथां प्रस्तुतवान् । यथाः—

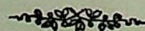
एवं दत्वा वरं देवो देवानां विष्णुरात्मवान्
मनुष्ये चिन्तयामास जन्मभूमिस्थात्मनः ।। १ ।।
ततः पद्मपलाशाक्षः कृत्वात्मानं चतुर्विधम्
पितरं रोचयामास तदा दशरथं नृपम् ।। २ ।।
आजगाम ततो ब्रह्मा लोककर्ता स्वयं प्रभुः
मच्छन्दादेव (वेदादेव) ते ब्रह्मन् प्रवृत्तेयं सरस्वती ।। ३ ।।

फलतः "अजायमानो बहुधा विजायत" इति शुक्लयजुर्वेद मन्त्रेण, "एकोऽहं बहुस्याम" इत्यादि वैदिक-औपनिषदिक-पौराणिक वाक्यैश्च **"रामकथा"-वेदमूलात्मिकेति सिद्धमेव।**

फलतः निम्नोद्धृतेषु चतुर्विंशतिसहस्रात्मकपद्यैरिदं "बाल्मीकि रामायणं"-"चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम्, एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनमिति"-शतकोटि रामायणकथा मूलभूतम्। यत्र भावपक्ष-कलापक्षोभयत्र-अशेषालङ्कार-रीति-गुण-नवरसात्मकाद्भुत-विस्मयविमुग्धकारिभिर्वर्णनैरागाधसागरवद् विभिन्नरत्नादि परिपूरितं चकास्ति।



विषय-सूची

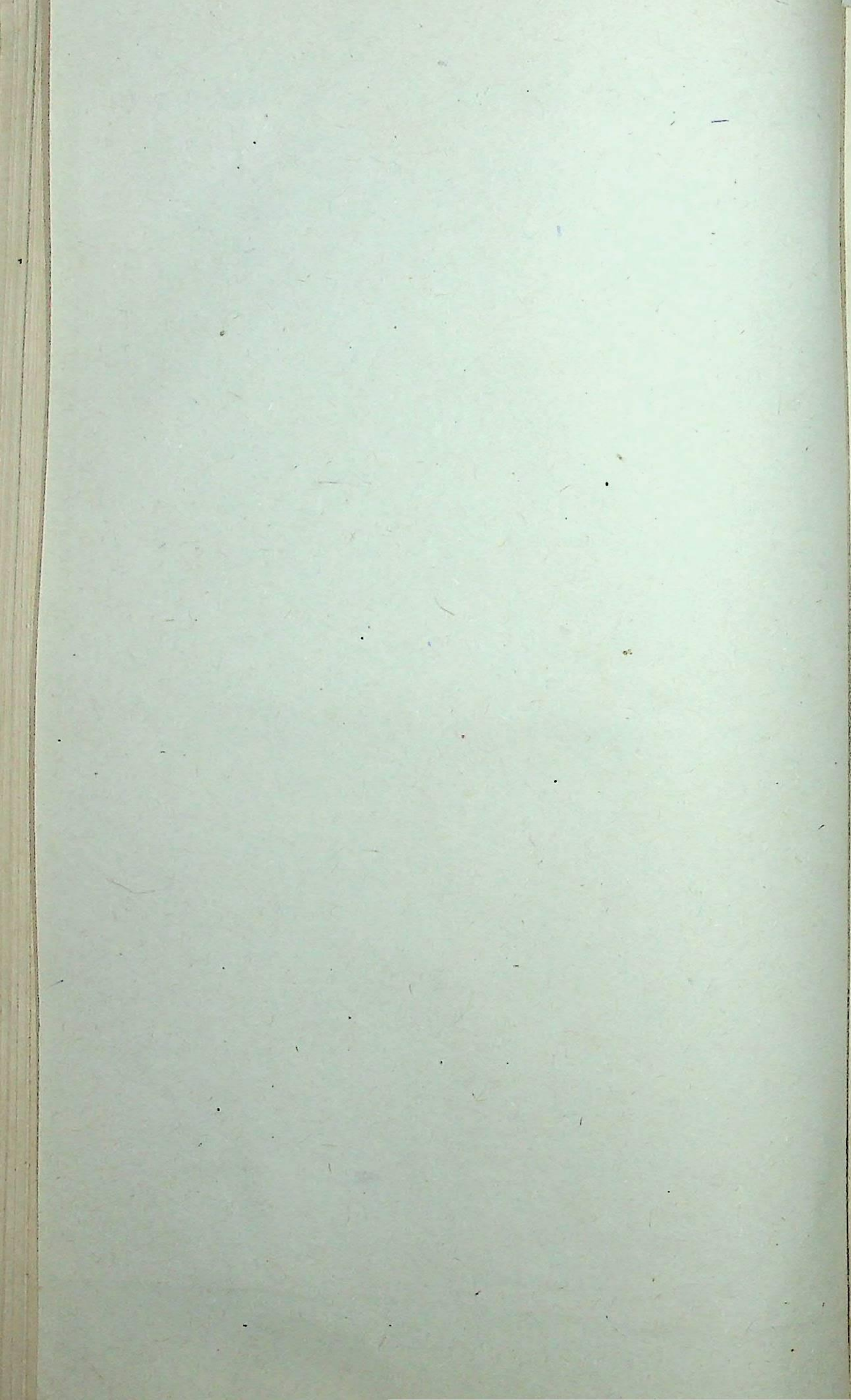




S. S. BRIJBASI & SONS
59, MIRZA STREET BOMBAY-3.

7 **RAM RAJYATILAK**

S. S. BRIJBASI & SONS
32/1, FATEHPURI DELHI-6



॥ ॐ श्रीः ॥

श्रीमद्वाल्मीकिरामायणम्

बालकाण्डम्

आदिकवेर्महर्षेर्वाल्मीकेर्भूमण्डलप्रसिद्धस्य वाल्मीकिरामायणस्य सप्त-काण्डानि सन्ति, तत्र बालकाण्डं नाम प्रथमं काण्डम्। प्रथमकाण्डप्रारम्भात् पूर्वं पञ्चाध्यायेषु 'वाल्मीकिरामायणस्य' महत्वं विद्यते।

तत्र स्कन्दपुराणस्योत्तरखण्डे नारदसनत्कुमारसंवादान्तर्गतं रामायण-माहात्म्यविषयककल्पानुकीर्तनम्, राक्षसोद्धारवर्णनम्, माघमासे चैत्रमासे च रामकथाश्रवणफलं पुनश्च रामायणमाहात्म्यं फलं च विद्यते। अस्यादि-काव्यस्य वैशिष्ट्यं त्रिविधतापनाशनमूलत्वं च सुस्पष्टम्।

ततश्च बालकाण्डे सप्तसप्ततिः (७७) सर्गाः सन्ति। प्रतिसर्गं कथानां पूर्वापरसन्दर्भो विद्यते। सर्गमेकमपि विहाय पूर्णां कथां ज्ञातुं न कोऽपि शक्ष्यति, कथा च विशृङ्खला भविष्यति। फलतो विस्तृतेऽस्मिन् रामायण-सागरेऽनुप्रविश्य रत्नराशिचयनं सुदुष्करमिति जानन्नपि बालसुलभकपितु-ल्योत्कूर्दनमेवात्र मम प्रयासः। तत्र केवलं भक्तिरात्मतुष्टिश्च कारणम्। महाकविकालिदासशब्देन—

तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।

× × ×

मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः[1]॥

इयमपि स्थितिर्नं मयि विद्यते यतो हि महाकविकालिदासवत् न मम पार्श्वे उडुपो विद्यते न चापि सूत्रम्। तथापि स्वान्तःसुखाय रामनामो-च्चारणेन लेखनी जिह्वां भावनां च पवित्रीकर्तुमेव ममायं दुःस्साहसः।

तत्र वाल्मीकिः भगवन्तं तपोनिधिं नारदं पृष्ठवान् यत् अधुना सकल-मानवगुणयुक्तश्चरित्रवान् सत्यवादी धर्मज्ञः जितेन्द्रियः पराक्रमी च को वर्तते ? महत्त्वपूर्णायामस्यां जिज्ञासायां त्रिकालज्ञो नारदोऽब्रवीत्। साम्प्रतं

---

१ र० म० का०–१।२-४।

संसारेऽस्मिन् एक एव महामानवो विद्यते यो हि सर्वगुणसम्पन्नः, सर्वाङ्ग-सुन्दरः, नीतिज्ञः, धर्मप्राणः, सर्वशास्त्रविशारदः, लोकानां मर्यादापालको भगवत्याः सरयूनद्यास्तटेऽयोध्याऽधिपतेः प्रथितयशसः दशरथस्य पुत्रः श्रीरामचन्द्र एव ।

अयं हि रामचन्द्रः पितुराज्ञया निजपत्न्या सीतयाऽनुजेन लक्ष्मणेन च सह चतुर्दशवर्षं यावत् वने निवसन् यथा शतशो राक्षसान निहत्य शरभङ्गादि-मुनीनां दर्शनं चकार, तथैव दण्डकारण्ये शूर्पणखां विरूपां कारयित्वा खरदूषणत्रिशिरसां राक्षसानां नाशं कृत्वाऽसंख्यान् राक्षसांश्च जघान ।

तच्छ्रुत्वा महापराक्रमशाली रावणः स्वर्णमयमायामृगरूपं धारयित्वा रामं वञ्चयामास । रामश्च तं मायारूपिणं स्वर्णमृगमनुधावन् दूरं गतवान् । तत्परोक्षे भिक्षुकब्राह्मणरूपं धृत्वा रावणस्तत्रागत्य सीतां जहार । प्रत्य-र्वतितो रामः सीतामदृष्ट्वा ऋष्यमूकपर्वतवासिना सुग्रीवेण साकं मैत्रीं विधाय बुद्धिमता वरिष्ठेन हनूमता च सह सद्भावस्नेहादिकं कृत्वा सीतां संहरता रावणेन हतस्य शुभचिन्तकस्य जटायु-गृध्रस्य संस्कारादिकं कारयामास । ततश्च शबरी नाम्नीं संन्यासिनीं निकषा गत्वा तां तारयामास ।

तदनन्तरं पम्पासरोवरतटे हनुमता साकं सुग्रीवसाहाय्येन रावणवधार्थं प्रतस्थे रामचन्द्रः । मध्ये च दुर्दमनीयं बालिनं हत्वा तस्य किष्किन्धाराज्यं सुग्रीवाय ददौ । ततश्च महाबलशालिनं हनूमन्तं लङ्कां प्रेषयामास यत्र रावणेन सीतासुरक्षितरूपेण स्थापिता आसीत् ।

हनूमांश्च शतयोजनविस्तृतं समुद्रं गगनमार्गेणैव लङ्घयित्वा लङ्का-मभिययौ । तत्र सीतां दृष्ट्वा सर्वां वार्तां विनिवेद्य लङ्कास्थवाटिकामुन्मूल्य लङ्कापुरीं दग्ध्वा त्वरितमेव परावर्त्य सर्वं सुग्रीवादिसहिताय रामाय विनिवेदयामास ।

रामाश्च तत्सर्वं श्रुत्वा सुग्रीवादिविशालवानरसैन्यसहितः समुद्रोपकण्ठं प्राप्य तं समुद्रं सूर्यकोटिसदृशतेजोयुक्तैर्बाणैः संक्षोभ्य समुद्रे सेतुं निर्माप्य लङ्कां प्राप्तवान् । तत्र लङ्कायां घोरतरे भयानके युद्धे ससैन्यं सपुत्रबान्धवं रावणं जघान ।

सीतायाश्चाग्निपरीक्षणं सर्वेषां पुरतो विधाय विशुद्धां विज्ञाय देवैर्वरं च प्राप्य सुग्रीवादिसकलवानरसैन्यसहितः पुष्पकविमानेन येनैव पथाऽत्रा-

ऽयोध्यातः समागतवानासीत् तेनैव पथाऽयोध्यानगरीं स्वजन्मभूमिं संप्राप्तः। सकलपुरजनसहितं भ्रातरं मातरं चालिङ्ग्याभिवाद्य स्वं राज्यमाप्तवान्।

प्रथमसर्ग एव समस्ता रम्या रामायणी कथाऽत्र प्रथमसर्गेऽतिसंक्षिप्त-रूपेणादिकविना वाल्मीकिना कथिता। अनेन ज्ञायते यत् महर्षिणाऽत्र स्वल्पायासेनापि सर्वकामप्रदायिनीं रामकथां कोऽपि पठितुं श्रोतुं च शक्नो-तीति भावनयैव साररूपेणेदं वर्णनं कृतम्, यत्र च सागरवद् विस्तृत-रामकथावर्णनोद्यतः आदिकविर्वाल्मीकिः।

अथ द्वितीयसर्गादारभ्य रामकथावर्णनमूलमुत्सं स्रोतश्च प्रतिपादितं महर्षिणा। यत्र तमसा नदीतटे क्रौञ्चयुग्ममध्ये व्याधेन चैकस्य वधेन सन्तप्त-हृदयस्य वाल्मीकेर्हृदयात्सहसा समुद्भूतः शोक एव श्लोकत्वेन परिणतः। स एव श्लोकः संस्कृतवाङ्मयस्य विशालागाधकाव्यसागरस्य प्रथमस्तरङ्ग इति काव्यशास्त्रेतिहासकाराः कथयन्ति।

यथा—

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥ २।१५

पादबद्धोऽक्षरसमस्तन्त्रीलय - समन्वितः।
शोकार्तस्य प्रवृत्तो मे श्लोको भवतु नान्यथा॥ २।१७

तमुवाच ततो ब्रह्मा प्रहसन् मुनिपुङ्गवम्।
श्लोक एवास्त्वयं बद्धो नात्र कार्या विचारणा।
मच्छन्दादेव ते ब्रह्मन् प्रवृत्तेयं सरस्वती॥ २।३०,३१

रामस्य चरितं कृत्स्नं कुरु त्वमृषिसत्तम।
धर्मात्मनो भगवतो लोके रामस्य धीमतः॥ २।३२

इत्युक्त्वा भगवान् ब्रह्मा तत्रैवान्तरधीयत।
ततः सशिष्यो भगवान् मुनिर्विस्मयमाययौ॥ २।३८

एभिः श्लोकैः सिद्धं यत् वाल्मीकिना प्रणीतमिदं रामायणं सृष्टिकर्तु-र्ब्रह्मणः समादेशेन तस्य छन्दादेव संकल्पादेव रामचरित्रचित्रणपूर्णां रामकथां वाल्मीकिः सविस्तरं वर्णयामास। तत्र ब्रह्मणो वाक्यं वेदतुल्य-मित्यपि ध्वनितम्।

अनन्तरं योगबलेन साक्षात्कृतकथासमूहो वाल्मीकिः सम्पूर्णे रामायणे समागतकथावस्तूनां भाविन्याः कथायाश्च साकल्येन वर्णनं कृतम्।

यथा—

रामलक्ष्मण सीताभिः राज्ञा दशरथेन च ।
सभार्येण सराष्ट्रेण यत्प्राप्तं तत्र तत्त्वतः ॥

हसितं भाषितं चैव गतिर्यावच्च चेष्टितम् ।
तत्सर्वं धर्मवीर्येण यथावत् सम्प्रपश्यति ॥ ३।३,४

ततः पश्यति धर्मात्मा तद् सर्वं योगमास्थितः ।
पुरा यत्तत्र निर्वृत्तं पाणावामलकं यथा ॥ ३।६

अनागतं च यत् किञ्चित् रामस्य वसुधातले ।
तच्चकारोत्तरे काव्ये वाल्मीकिर्भगवान् ऋषिः ॥ ३।३९

एभिः पद्यैः सर्वथा स्पष्टमत्र यत् समग्रं भूतवर्तमानभाविरामचरित्रं योगबलेन, धर्मवीर्येण, धर्मबलेन च हस्तामलकवत् कृतं भगवता वाल्मीकिना। फलतो वाल्मीकिर्योगबलं धर्मबलं च ब्रह्मणैव संप्राप्य स्वयमपि '**भगवान्**' संजातः ।

ततश्च चतुर्विंशतिसहस्रात्मकश्लोकपरिमितं रामायणकाव्यं निर्माय तत्काव्यं च रामचन्द्रपुत्राभ्यां कुशलवाभ्यां प्रदाय समुपदिश्य च मुनिमण्डलीषु रामकथागानेन तौ कुशलवौ प्रशंसां प्राप्य रामयज्ञेऽयोध्यायां राजसभायां तत्कथाश्रावणेन ऋषिद्वारा रामचन्द्रद्वारा च सम्मानितौ बभूवतुः ।

यथा—

चतुर्विंशत्सहस्राणि श्लोकानामुक्तवानृषिः ।
तथा सर्गशतान् पञ्च षट्काण्डानि तथोत्तरम् ॥ ४।२

इमौ मुनी पार्थिवलक्षणान्वितौ
कुशीलवौ चैव महातपस्विनौ ।
ममापि तद्भूतिकरं प्रचक्षते
महानुभावं चरितं निबोधत ॥ ४।३५

ततस्तुतो रामवचः प्रचोदिता-
वगायतां मार्गविधानसम्पदा ।
स चापि रामः परिषद्गतः शनै-
र्बुभूषयासक्तमना बभूव ॥ ४।३६

अनेन यथाऽस्यादिकाव्यस्यादिमभाग एव सम्पूर्णरामकथाज्ञानं स्यात्, तत्र प्रवृत्तिश्च स्यात्, ततः कथाज्ञानार्थं जिज्ञासाऽपि भवेत्, प्रायोऽयमेवाशयः कवेर्भवितुमर्हति ।

तदनन्तरं सविस्तरकथामारब्धा ऋषिणा, परिणामतो गुह्यतरं रहस्यपूर्णमिदं रामायणमिति पर्यवसितम् ।

ततश्च राज्ञा दशरथेन शासिताऽयोध्यायाः विस्तृतं वर्णनं विद्यते । अत्र गानस्य मार्ग नामकपद्धत्या संस्कृतभाषया गीतमिदं रामायणं कुशलवाभ्याम् । नगरी चेयं सर्वगुणलक्षणसम्पन्ना प्रभायुक्ता, यत्र सुन्दरीणां नाट्यशाला विशालदुर्गप्राचीरा समग्रराष्ट्रकरदातृराज्ञा परिवृता विविधरत्न जटिता सालवृक्षैरुपेता सर्वज्ञैस्त्रिकालज्ञऋषिभिर्व्यापृता व्यराजत ।

यथा—

बधूनाटकसंघैश्च संयुक्तां सर्वतः पुरीम् ।
उद्यानाम्रवणोपेतां महतीं सालमेखलाम् ॥ ५।१२
चित्रामष्टापदाकारां वरनारीगणैर्युताम् ।
सर्वरत्नसमाकीर्णां विमानगृहशोभिताम् ॥ ५।१६

एवं भूताया अयोध्याया नागरिकाणामुत्तमोत्तमा स्थितिरासीत् । सर्वे शास्त्रपद्धत्या स्व स्व कर्मण्यभिरताः यथायोग्यं यज्ञदानाध्ययनाध्यापनतपःकर्मसु लीना अभूवन् । सर्वविधगजवाजियुक्ताश्चासन् । समे नागरिकाः शास्त्रज्ञानविचक्षणाः सत्यवादिनः भगवद्भक्तिपरायणाश्चासन् ।

यथा—

सर्वे नराश्च नार्यश्च धर्मशीलाः सुसंयताः ।
मुदिताः शीलवृत्ताभ्यां महर्षय इवामलाः ॥ ६।९
नास्तिको नानृती वापि न कश्चिदबहुश्रुतः ।
नासूयको न चाशक्तो नाविद्वान् विद्यते क्वचित् ॥ ६।१४
वर्णेष्वाग्र्यचतुर्थेषु देवतातिथिपूजकाः ।
कृतज्ञाश्च वदान्याश्च शूरा विक्रमसंयुताः ॥ ६।१५
तां सत्यनामां दृढतोरणार्गलां
गृहैर्विचित्रैरुपशोभितां शिवाम् ।
पुरीमयोध्यां नृसहस्र - संकुलः
शशास वै शक्रसमो महीपतिः ॥ ६।२८

तदनन्तरं दशरथस्य नीतिज्ञाः मन्त्रिण आसन्। दशरथस्य अष्टौ मन्त्रिण आसन्—धृष्टिः, जयन्तः, विजयः, सुराष्ट्रः, राष्ट्रवर्धनः, अकोपः, धर्मपालः, सुमन्त्रश्च। ऋषिषु श्रेष्ठौ वसिष्ठवामदेवौ ऋत्विजौ आस्ताम्। एतदतिरिक्तं सुयज्ञः, जाबालिः, काश्यपः, गौतमः, मार्कण्डेयः, कत्यायनः, विप्रवरश्च सहायकमन्त्रिण आसन्। एते च मन्त्रणागुप्तरक्षणे दक्षा नीतिशास्त्र-विचक्षणाश्चासन्।

यथा—

मन्त्रसंवरणे शक्ताः शक्ताः सूक्ष्मासु बुद्धिषु।
नीतिशास्त्रविशेषज्ञाः सततं प्रियवादिनः॥ ७।१९

अथ दशरथः पुत्रप्राप्त्यर्थमश्वमेधयज्ञस्य प्रस्तावं कृतवान्, यश्च प्रस्तावो मन्त्रिभिः समर्थितः। राजा च सर्वप्रथमं सुयज्ञम्, वामदेवम्, जाबालिम्, कुलगुरुवसिष्ठं च विधिवत् सम्पूज्य 'पुत्रं विना राज्यसुखेन किम्' इति सकरुणं प्रोवाच। तच्छ्रुत्वा सर्वे महर्षयः ऊचुर्यत् त्वं पुत्रसुखं प्राप्स्यसि। दशरथेन चोक्तं यदस्मिन् यज्ञे यथा कापि त्रुटिर्न भवेत् तथाभवद्भिर्विधेया करुणया। ब्रह्मराक्षसाश्च भ्रमन्ति यज्ञे विघ्नं कर्तुं चोद्यता सर्वत्र।

महर्षेराज्ञया ऋष्यश्रृङ्गमानयनार्थं सुमन्त्रः प्रेषितः, तत्र ऋष्यश्रृङ्ग-स्याङ्गदेशगमनं तत्रत्य रोमपादनाम्नो राज्ञो धर्मोल्लङ्घनम्, तत् शान्त्यर्थं वेदशास्त्रपारङ्गतऋषीणामागमनम्, राज्ञः प्रायश्चित्तवर्णनं च सुविशदं विद्यते। ऋषिभिस्तत्र परामृष्टं यत् वेदवेदाङ्गपारगो यज्ञकर्मनिपुणः ऋष्य-श्रृङ्गः ऋषिरानेतव्यः। तदाज्ञया येनकेनाप्युपायेन ऋष्यश्रृङ्गोऽत्रानीतः। ऋष्यश्रृङ्गागमनानन्तरमेव तत्र सुवृष्टिर्जाता। राजा रोमपादश्च तस्मै ऋष्यश्रृङ्गाय स्वकन्यां शान्तां प्रददौ। एवं रूपेण ऋष्यश्रृङ्गस्तव दशरथस्य जामाता पारम्परिकरूपेण संजातः, यश्च ऋषिः पुत्रेष्टियज्ञं सम्पत्स्यते। सनत्कुमारेण कथितमिदं सर्वं तव निवेदितम्।

यथा—

ऋष्यश्रृङ्गस्तु जामाता पुत्रांस्तव विधास्यति।
सनत्कुमारकथितमेतावद् व्याहृतं मया॥ ९।१९

ततश्च दशरथः केनापि प्रकारेण रोमपादं पुरस्कृत्य तद्राज्यात् सपत्नीकं ऋष्यश्रृङ्गमानेतुं सुमन्त्रं प्रेषितवान्। रोमपादश्च दशरथप्रार्थनां स्वीकृत्य शान्तया सह ऋष्यश्रृङ्गमयोध्यां संप्रेषयामास। तत्रायोध्यायां

पुत्रेष्टियज्ञमसौ ऋषिः सम्पादयिष्यति येन यज्ञेन दशरथस्य चत्वारः पुत्राः पराक्रमिणो विख्याताश्च भवितारः, इत्यपि सनत्कुमारेण ऋषिणा संसूचितम् ।

सपत्नीकः ऋष्यश्रृङ्गोऽयोध्यामागत्य जामातृवत् चिरं सुखेन तस्थौ । दशरथश्च यज्ञव्यवस्थायां संलग्नो बभूव । सर्वान् मन्त्रीनाहूय यज्ञव्यवस्थार्थमावश्यकनिर्देशमादिदेश । महर्षिगणाश्चामन्त्रिताः क्रमशो समागतवन्तः ।

इत्थं हि यज्ञविधौ संलग्नाः सर्वे पार्षदा मन्त्रिणश्च । दशरथश्च कुलगुरुं वसिष्ठं निकषा समागत्य प्रार्थितवान् । वसिष्ठेनामोघ आशीर्वादः प्रदत्तः । तथा यज्ञकर्मनिष्णातान् ऋषि-विप्रान्, शिल्पिकारान्, दैवज्ञान्, नटनर्तकान्, समागतमहर्षिगणांश्च यथायोग्यमावासस्य भोजनादिकस्य च सर्वाः सुव्यस्था भवद्भिर्विधेया । भगवान् वसिष्ठश्च तेषां सुव्यवस्थामवलोक्य सुप्रसन्नो जातः ।

अथ सपत्नीको दशरथः समुपस्थितसकलऋषिसमीपमागत्य सादरं नतशिरसा निवेदितवान् ।

यथा—

तथा वसिष्ठवचनात् ऋष्यश्रृङ्गस्य चोभयोः ।
दिवसे शुभनक्षत्रे निर्यातो जगतीपतिः ॥
यज्ञवाटं गताः सर्वे यथाशास्त्रं यथाविधिः ।
श्रीमांश्च सहपत्नीभि राजा दीक्षामुपाविशत् ॥ १३।३९,४१

एतदनन्तरं यथायोग्यं वैदिकरीत्या मीमांसाशास्त्रानुसारं यज्ञकर्मणः 'प्रवर्ग्य-उपसद' प्रभृतिनामकानामङ्गोपाङ्गानामनुष्ठानं विधिवत् विधाय देवेभ्यो हविष्यान्नं दत्त्वा यथाविधिः सोमलताभ्यश्च सोमरसं निष्पीड्य माध्यन्दिनशाखानुसारं सवनकार्यं प्रारभ्य सुस्पष्टाक्षरोच्चारणैश्च सर्वानाहुतीन् प्रदत्तं महर्षिभिः ।

यथा—

अभिपूज्य तदा हृष्टाः सर्वे चक्रुर्यथाविधिः ।
माध्यन्दिनं च सवनं प्रावर्तत यथाक्रमम् ॥ १४।५
ज्योतिष्टोमायुषी चैवमतिरात्रौ च निर्मितौ ।
अभिजिद्विश्वजिच्चैवमाप्तोर्यामौ महाक्रतुः ॥ १४।४२

एवं मीमांसाशास्त्रानुसारं विभिन्नाः पशवश्च तत्र नियोजिताः। अध्वर्युः राजमहिषी कौशल्याद्वारा अश्वमेधयज्ञस्याश्वं स्पर्शं कारितवान्। अश्वकन्दनामकयज्ञीयफलस्य वपामुद्धृत्य शास्त्रोक्तविधिना पक्वं कृत्वा तस्या वपायाः धूमगन्धमाघ्रातुमादिदेश।

वेदानुसारमश्वमेधयज्ञस्य सवनीय 'अग्निष्टोम-उक्थ-अतिरात्र'—नामक यज्ञकर्माणि संपाद्य यज्ञोत्तरीयाणि 'ज्योतिष्टोम-आयुष्टोम-अतिरात्रद्वय-अभिजित्-विश्वजित्-आप्तायाम्'—नामकानि यज्ञाङ्गकर्माणि च सम्पादितानि अध्वर्युणा।

यथा—

त्र्यहोऽश्वमेधः संख्यातः कल्पसूत्रेण ब्राह्मणैः।
चतुष्टोममहस्तस्य प्रथमं परिकल्पितम्॥
उक्थं द्वितीयं संख्यातमतिरात्रं तथोत्तरम्।
कारितास्तत्र बहवो विहिताः शास्त्रदर्शनात्॥

ज्योतिष्टोमायुषी चैवमतिरात्रौ च निर्मितौ।
अभिजिद्विश्वजिच्चैव माप्तोर्यामौ महाक्रतुः॥ १४। ४०,४२

इत्थं च दशरथः कोटिसुवर्णम्, विविधरत्नानि, सहस्रशो धेनूंश्च यथायोग्यं ऋत्विग्भ्यः सादरं ससम्मानं प्रददौ।

यथा—

गवाशतसहस्राणि दश तेभ्यो ददौ नृपः।
दशकोटिं सुवर्णस्य रजतस्य चतुर्गुणम्॥
ततः प्रसर्पकेभ्यस्तु हिरण्यं सुसमाहितः।
जाम्बूनदं कोटिसंख्यं ब्राह्मणेभ्यो ददौ तदा॥ १४।५०,५३

एवं हि अश्वमेधयज्ञपूर्णानन्तरं महर्षिः ऋष्यशृङ्गो विधिवत् ध्यानं कृत्वा प्रोवाच हे राजन्! पुनरहं पुत्रेष्टिनामकं यज्ञमथर्ववेदमन्त्रैः करिष्यामि।

एनं द्रष्टुं सर्वे देवगणाश्चादृश्यरूपेणाकाशे समवेताः संजाताः। ब्रह्मविष्णु प्रभृतयोऽप्यागताः। तत्र सर्वे मिलित्वा महोपद्रविणो रावणस्य वधार्थं विष्णुं प्रार्थयामासुः। विष्णुश्च वरं दत्तवान् यत् 'अहमेव चतुर्धा रूपं विभज्य दशरथस्य चत्वारः पुत्रा भविष्यामि'। तच्छ्रुत्वा देवाः सानन्दं मुदमापुः।

यथा—

ततः पद्मपलाशाक्षः कृत्वात्मानं चतुर्विधम् ।
पितरं रोचयामास तदा दशरथं नृपम् ।।
ततो देवर्षिगन्धर्वाः सरुद्राः साप्सरोगणाः ।
स्तुतिभिर्दिव्यरूपाभिः तुष्टुवुर्मधुसूदनम् ।। १५।३१,३२

अथ ऋष्यशृङ्गद्वारा सम्पादिते पुत्रेष्टियज्ञे-यज्ञकुण्डतो भगवतः प्राजापत्यस्याविर्भावो जातः, प्राजापत्यश्च सुप्रसन्नः सन् देवनिर्मितं सन्ततिप्रदायकम्—अलौकिकं क्षीरं (पायसं) राज्ञे प्रदाय उक्तवान् क्षीरमिदं स्व भार्यायै ददस्व, अस्मादेव क्षीरात् तासां गर्भात् पुत्रोत्पत्तिर्भविष्यति' ।

दशरथेन तथैव कृतम् । प्रथमं कौशल्यायै तदर्धं क्षीरं प्रदाय, सुमित्रायै यथाभागं दत्वा, कैकेयी-भार्यायै यथाभागं च प्रददौ । पुनश्च शेषभागं सुमित्रायै ददौ । एवं हि सुमित्रायै वारद्वयं क्षीरप्रदानं जातम् । तदलौकिकक्षीरप्रसादात् तिस्रो राज्यो गर्भवत्यो बभूवुः ।

यथा—

इदं तु नृपशार्दूल पायसं देवनिर्मितम् ।
प्रजाकरं गृहाण त्वं धन्यमारोग्यवर्धनम् ।। १६।१९
कौसल्यायै नरपतिः पायसार्धं ददौ तदा ।
अर्धादर्धं ददौ चापि सुमित्रायै नराधिपः ।। १६।२७
कैकेय्यै चावशिष्टार्धं ददौ पुत्रार्थकारणात् ।
प्रददौ चावशिष्टार्धं पायसस्यामृतोपमम् ।।
अनुचिन्त्य सुमित्रायै पुनरेव महामतिः ।
एवं तासां ददौ राजा भार्याणां पायसं पृथक् ।। १६।२८-२९

अनुमीयते ज्ञायते च यदत्रैव द्विवारं सुमित्रायै पायसदानेन पुत्रद्वयं जनयामास सुमित्रा । कौसल्या कैकेयी च क्रमश एकैकमेव पुत्रं प्रासूताम् ।

अथानन्तरं भविष्यद्द्रष्टुर्ब्रह्मणः प्रेरणया विभिन्नवनेषु ऋक्षवानरादीनामुत्पत्तिः संजाता ।

यथा—

पूर्वमेव मया सृष्टो जाम्बवानृक्षपुङ्गवः ।
जृम्भमाणस्य सहसा मम वक्त्रादजायत ।।

ते तथोक्ताः भगवता तत् प्रतिश्रुत्य शासनम् ।
जनयामासुरेवं ते पुत्रान् वानररूपिणः ॥ १७।७-८

सर्वे ऋषिमहर्षयो ऋत्विजो राजानश्च यथा स्थानं परावर्तिताः। शान्तया साकं ऋष्यश्रृङ्गं च दशरथः प्रेषयामास। यतो हि शान्ता दशरथस्य सुहृदो रोमपादस्य कन्या आसीत्। अनेन कारणेनैव शान्ता दशरथपुत्रीरूपेणापि प्रथिता।

काले व्यतीते कौशल्यागर्भात् (चैत्रशुक्लनवम्यां कर्कलग्ने पुनर्वसुनक्षत्रे सूर्यमङ्गलगुरुशुक्रशनिग्रहणामुत्तमस्थानस्थिते सर्वलक्षणयुक्तस्य श्रीरामचन्द्रस्यावतारो जातः। क्षीरस्यार्धांशेन रामचन्द्रः, चतुर्थांशेन कैकेयीतः भरतः, तथा च शेषभागात् सुमित्रातः लक्ष्मणशत्रुघ्नौ संजातौ।

यथा–

ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतूनां षट् समत्ययुः ।
ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ ॥
नक्षत्रे दितिदैवत्ये सोच्चसंस्थेषु पञ्चसु ।
ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सह ॥
प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम् ।
कौसल्याऽजनयद्रामं दिव्यलक्षणसंयुतम् ॥ १८।८ल: १०

ततो जातकानामेकादशदिनपूर्णानन्तरं नामकरणादिकं विधिवत् चक्रे नृपतिः। एवमेकदा दशरथ एतेषां विवाहादिचिन्तामग्न आसीत् तदा सहसा विश्वामित्रः समुपस्थितः। ऋषिणा चोक्तं यद्वने मारीचसुबाहुनामानौ बलवन्तौ यज्ञविघ्नकरौ द्वौ राक्षसौ वर्तेते। तयोर्विनाशार्थं राम एव शक्तोऽस्ति। अतो मया सह रामः प्रेष्यताम्। इदं श्रुत्वा पुत्रवियोगकल्पनयैव मूर्च्छितोऽभून्नृपः। पुनश्च लब्धसंज्ञः विचलितः सन् प्रोवाच।

वृद्धावस्थायां भवतां प्रसादेन पुत्रेष्टियज्ञप्रभावेण च मम पुत्राः संजाताः। रामश्चाधुना षोडशवर्षदेशीयोऽपि न जातः। अत एव सर्वथा बलवती शत्रुनाशकारी ममाक्षौहिणी सेना विद्यते। सा सेना भवतः सेवायां संप्रेषिता भविता। अहमेव सैन्यैः सहितः भवता सह गन्तुं समुद्यतोऽस्मि। सर्वानुपद्रवकारिणो राक्षसान् निहनिष्यामि। इतः पूर्वं तु भवता न सूचिता यदिमौ दानवौ विघ्नोपद्रवकर्तारौ स्तः। इति श्रुत्वा विश्वामित्रेणोक्तं त्वयेदं कार्यं भवितुं नार्हति। राम एव तयोर्विनाशे क्षमः। दशरथः पुनः प्रार्थित-

वान्। तदा सहजकोपः विश्वामित्रोऽवादीत्। भवतु, त्वं सुखेन तिष्ठ, अहं गच्छामि। तदैव कुपिते विश्वामित्रे पृथ्वी कम्पायमाना जाता, देवाश्च भयमापुः।

ततो भगवान् वसिष्ठः सस्नेहं दशरथं प्रबोधितवान् यत् 'महर्षिर्विश्वामित्रस्त्रिकालज्ञः, एतेषां कथने यथार्थता, अनेन साकं रामं प्रेषय, सर्वथा कल्याणं भविता। एवं श्रुत्वा दशरथ आश्वस्तः सन् रामं प्रेषितवान्। लक्ष्मणश्च रामेण सममगमत्।

यथा—

तस्य रोषपरीतस्य विश्वामित्रस्य धीमतः।
चचाल वसुधा कृत्स्ना देवानां च भयं महत्॥ २१।४

एवं वीर्यो महातेजा विश्वामित्रो महायशाः।
न रामगमने राजन् संशयं गन्तुमर्हसि॥ २१।२०

इति मुनिवचनात् प्रसन्नचित्तो रघुवृषभश्च मुमोद पार्थिवाग्र्यः।
गमनमभिरुरोच राघवस्य प्रथितयशाः कुशिकात्मजाय बुद्ध्या॥ २१।२२

विश्वामित्रेण साकं मार्गे गच्छन् रामो महर्षिणा आदिष्टस्तदनुसारं सरय्वा जलेनाचम्य बला—अतिबला नाममन्त्रसमूहं विश्वामित्रद्वारा प्राप्तवान्। एभिर्मन्त्रबलैः श्रमो ज्वारादिरोगाश्च नैव जायन्ते, विकाराश्च न भवन्ति।

यथा—

रामेति मधुरां वाणीं विश्वामित्रोऽभ्यभाषत्।
गृहाण वत्स सलिलं मा भूत् कालस्य पर्ययः॥

मन्त्रग्रामं गृहाण त्वं बलामतिबलां तथा।
न श्रमो न ज्वरो वा ते न रूपस्य विपर्ययः॥ २२।१२,१३

मार्गे प्रथमरात्रौ विश्वामित्रेण साकं सरयू-गङ्गापावनसंगमसमीपे आश्रमे विरराम। प्रातरेव मुनिरवादीत्—

कौसल्या सुप्रजा राम पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते।
उत्तिष्ठ नरशार्दूल कर्तव्यं दैवमाह्निकम्॥ २३।२

रामोऽपि त्वरितमेवोत्थाय स्नानादिकं विधाय देवादिसमर्चां चकार। रामेण जिज्ञासा कृता यत् कस्यायं पावनः आश्रमः? ऋषिणा प्रोक्तम्,

अत्रैव भगवता त्रिनेत्रेण महेश्वरेण कामदेवमनङ्गं चक्रे, ततः प्रभृति सरयू-गङ्गासंगमे पावनोऽयमाश्रमः।

यथा—

तत्र गात्रं हतं तस्य निर्दग्धस्य महात्मनः।
अशरीरः कृतः कामः क्रोधादेवेश्वरेण ह ॥ २३।१४

तस्यायमाश्रमः पुण्यः तस्येमे मुनयः पुरा।
शिष्या धर्मपरा वीर तेषां पापं न विद्यते ॥ २३।१५

इत्थं प्रबोध्य रामाय सर्वाणि दिव्यास्त्रादीनि ददौ महर्षिः।

तदुक्तम्—

परितुष्टोऽस्मि भद्रं ते राजपुत्र महायशः।
प्रीत्या परमया युक्तो ददाम्यस्त्राणि सर्वशः ॥ २७।२

तदाश्रमात् प्रातः प्रस्थाय गोब्राह्मणरक्षार्थं स्त्रीबधे दोषो नास्ति इत्युपदिष्टवान्। तदा रामेण ताटका-सुबाहुप्रभृतिराक्षसाश्च निहताः। एवं च ऋषेर्यज्ञं सुसम्पन्नं कारितवान्।

यथा—

स हत्वा राक्षसान् सर्वान् यज्ञघ्नान् रघुनन्दनः।
ऋषिभिः पूजितस्तत्र यथेन्द्रो विजये पुरा ॥ २६।२४
निहत्य तां यक्षसुतां स रामः प्रशस्यमानः सुरसिद्धसंघैः।
उवास तस्मिन् मुनिना सहैव प्रभातवेलां प्रतिबोध्यमानः ॥
२६।३६

अथ विश्वामित्रो रामलक्ष्मणाभ्यां सहितो मिथिलाधिपस्य जनकस्य धनुर्यज्ञं द्रष्टुं प्रतस्थे। रात्रौ शोणभद्रतटे निवसति स्म। तत्र वार्तालाप-क्रमे कुशनाभस्य कन्यायाः क्षमाशीलताविषये चर्चा जाता। क्षमामहत्त्व-प्रसङ्गे चोक्तं यत्—

क्षमा दानं क्षमा सत्यं क्षमा यज्ञाश्च पुत्रिकाः।
क्षमा यशः क्षमा धर्मः क्षमायां विष्ठितं जगत् ॥ ३३।८१

मिथिलामार्ग एव सगरसन्ततिकथाम्, गङ्गावतरणवृत्तान्तम्, सगरसन्तानोद्धारवर्णनं विश्वामित्रः श्रावितवान्। एतत् क्रम एव समुद्रमन्थनकथाम्, शिवस्य विषपानकथाम्, समुद्रात् उच्चैःश्रवसोऽश्वस्य, अमृतस्य, विविध-रत्नानां प्रादुर्भावकथां च श्रावितवान्।

मध्ये च इन्द्रेण गौतमपत्न्या अहल्यया सह सहवासकथा, गौतमशाप-घटना यथा तत्र रामदर्शनेन शापमुक्तेश्च वरदानाख्यायिका ऋषिणा श्रावितम्। येन रामो विस्मयं प्राप्तवान्।

यथा–

यदा त्वेतत् वनं घोरं रामो दशरथात्मजः।
आगमिष्यति दुर्धर्षस्तदा पूता भविष्यसि॥ ४८।३१

ततो रामः विश्वामित्रेण सह गौतमाश्रमगागत्य अहल्याया उद्धारं कृतवान्। सा च अहल्यातुषारमुक्तचन्द्रप्रभा इव विद्योतिता जाता।

यथा–

ददर्श च महाभागां तपसा द्योतितप्रभाम्।
लोकैरपि समागम्य दुर्निरीक्ष्यं सुरासुरैः॥

स तुषारावृतां साभ्रां पूर्णचन्द्रप्रभामिव।
मध्येऽम्भसो दुराधर्षां दीप्तां सूर्यप्रभामिव॥४९।१३,१५

इति कृत्वा कारयित्वा च ऋषिः रामलक्ष्मणाभ्यां परिवृतः जनकस्य यज्ञशालामुपस्थितः। जनकश्च विश्वामित्रागमनं श्रुत्वा शतानानन्द-ऋषिणा साकं स्वयमागत्य महर्षिजनोचितं सादरं सत्कारं चकार।

जनकस्य जिज्ञासायाः प्रत्युत्तरे विश्वामित्रेण रामलक्ष्मणयोः परिचयः प्रदत्तः। जनकस्तु पदाभ्यामेवागतौ सुकुमारौ वीक्ष्य विस्मयविमुग्धो बभूव। विश्वामित्रेण अहल्योद्धारवर्णनं राक्षादिवधवर्णनं च श्रावितम्।

यथा–

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा जनकस्य महात्मनः।
न्यवेदयदमेयात्मा पुत्रौ दशरथस्य तौ॥

अहल्यादर्शनं चैव गौतमेन समागमम्।
महाधनुषि जिज्ञासां कर्तुमागमनं तथा॥ ५०।२२,२४

तदा गौतमपुत्रः शतानन्दो ऋषिः स्वमातुरुद्धारं ज्ञात्वा रामं प्रत्यनुरागं स्नेहं च प्रदर्शितवान्। स शतानन्दः विश्वामित्रवसिष्ठयोर्मध्ये ब्रह्मर्षिपद-प्राप्तिविवादकथाम्, ब्रह्मतेजोबलवैशिष्ट्यकथाम्, तथा विश्वामित्रस्य ब्रह्मर्षिपदप्राप्तिकथां च जनकाय रामाय च वर्णितवान्।

यथा–

गवां शतसहस्रेण दीयतां शबलां मम ।
रत्नं हि भगवन्नेतद् रत्नहारी च पार्थिवः ॥
नाहं शतसहस्रेण नापि कोटिशतैर्गवां ।
राजन् दास्यामि शबलां राशिभिः रजतस्य वा ॥५३।९,११

घटनेयं वसिष्ठविश्वामित्रयोर्मध्ये वशिष्ठेन कामधेनुप्राप्त्यर्थं विवादे संजाता । वसिष्ठोत्तरेणासन्तुष्टः विश्वामित्रो बलात् तां नन्दिनीं जहार । वसिष्ठश्च कामधेनुप्रसादात् शब्दवायुप्रभृतीन् संसृज्य विश्वामित्रसेनां संहारयामास । प्रोवाच च वशिष्ठो यत् ब्रह्मबलसमीपे क्षात्रबलं सर्वथा तुच्छम् ।

ततः क्रुद्धो विश्वामित्रस्तपस्तप्त्वा शिवेन दिव्यास्त्रं लब्धवान् । पुनः समागते युद्धे ब्रह्मदण्डेन वसिष्ठस्तं पराजितवान् । तदा कठोरतपः कर्तुं विश्वामित्रः पुनर्गतवान् ।

यथा–

क्व च ते क्षत्रियबलं क्व च ब्रह्मबलं महत् ।
पश्य ब्रह्मबलं दिव्यं मम क्षत्रियपांसन ॥
प्राज्वलद् ब्रह्मदण्डश्च वसिष्ठस्य करोद्यतः ।
विधूम इव कालाग्नेर्यमदण्ड इवापरः ॥५६।४,१९

जिता राजर्षिलोकास्ते तपसा कुशिकात्मज ।
अनेन तपसा त्वां हि राजर्षिरिति विद्महे ॥५७।५

एतन्मध्ये महातेजस्वी इक्ष्वाकुवंशी त्रिशङ्कुर्यज्ञसम्पादनार्थं वशिष्ठं निकषा गतवान् । वशिष्ठेनास्वीकृतः तत्पुत्रसमीपं ययौ, तेनापि तिरस्कृतोऽन्यं पौरोहित्याय प्रार्थितवान् । एवं दृष्ट्वा वसिष्ठपुत्रेण शप्तः त्रिशङ्कुश्चाण्डालत्वं प्राप्तः सन् विश्वामित्रशरणं ययौ ।

यथा–

विश्वामित्रस्तु तं दृष्ट्वा राजानं विफलीकृतम् ।
चाण्डालरूपिणं राम मुनिःकारुण्यमागतः ॥
नान्यां गतिं गमिष्यामि नान्यच्छरणमस्ति मे ।
दैवं पुरुषकारेण निवर्तयितुमर्हसि ॥५८।१३,२४

विश्वामित्रस्त्रिशङ्कुमाश्वस्तं कृतवान् । विश्वामित्रस्याज्ञया बहवो ऋषयस्त्रिशङ्कोर्यज्ञसम्पादनार्थमुपस्थिताः । प्रारब्धे यज्ञे विश्वामित्रेणोक्तं 'यथा त्रिशंकुः सशरीरं स्वर्गं गच्छेत् तथा भवद्भिर्विधेयम्' । ऋषिभ्यस्तथैव कृतम् । त्रिशङ्कुश्च सशरीरं स्वर्गं प्रस्थितः ।

यथा–

यथायं स्वशरीरेण देवलोकं गमिष्यति ।
तथा प्रवर्ततां यज्ञो भवद्भिश्च मया सह ॥६०।३

सशरीरं स्वर्गमागच्छन्तं त्रिशङ्कुं दृष्ट्वा स्वर्गाधिपतिरिन्द्रस्तं त्रिशङ्कुं पुनर्भुमौ त्वरितमेव परावर्तितवान् । त्रिशङ्कुं परावर्तितं दृष्ट्वा विश्वामित्रो नूतनस्वर्गसृष्टिनिर्माणं प्रारब्धवान् ।

यथा–

स्वर्गलोकं गतं दृष्ट्वा त्रिशङ्कुं पाकशासनः ।
सह सर्वैः सुरगणैरिदं वचनमब्रवीत् ॥६०।१६
ऋषिमध्ये स तेजस्वी प्रजापतिरिवापरः ।
नक्षत्रदेशमपरमसृजत् क्रोधमूर्च्छितः ॥६०।२१

तत् दृष्ट्वा सर्वे देवाः समागत्य ऊचुः । 'हे महर्षे ! चाण्डालत्वं गतोऽयं त्रिशङ्कुः सशरीरं स्वर्गं गन्तुं न समर्थः, न च तद्योग्यः, किन्तु भगवता भवता कौशिकेन तथा वरः प्रदत्तस्तर्हि त्रिशङ्कुर्भवन्निर्मिते नूतने स्वर्गे देववत् पूज्यः सन् तथैव स्थास्यति वन्दनीयोऽपि भविष्यति इति वरं तस्मै प्रददामो वयम्' । विश्वामित्रेण स्वीकृतोऽयं निर्णयः । स च त्रिशङ्कुरवाक्शिरः अधोमुखोऽतिष्ठत् नूनने स्वर्गे । (तदा प्रभृत्येवेयं दन्तकथा प्रचलिता यदस्य स्थितिस्त्रिशङ्कुवत् विद्यते) ।

यथा–

अवाक् शिरास्त्रिशंकुश्च तिष्ठत्वमरसन्निभः ॥
अनुयास्यन्ति चैतानि ज्योतींषि नृपसत्तम ।
कृतार्थं कीर्तिमन्तं च स्वर्गलोकगतं तथा ॥

विश्वामित्रस्तु धर्मात्मा सर्वदेवैरभिष्टुतः ।
ऋषिमध्ये महातेजा बाढमित्येव देवताः ॥६०।३१;३३

यज्ञार्थमागताश्च ऋषयः स्व स्व स्थानं प्रययुः ।

(एतन्मध्ये पुनर्विश्वामित्रस्योग्रतपो वर्णनं राज्ञाऽम्बरीषेण ऋचीक-माध्यमेन शुनःशेपं यज्ञीयपशुरूपेण समानयनवर्णनम्, विश्वामित्रेण शुनःशेप-रक्षणस्य सफलवर्णनम्, पुनश्च घोरतपस्याया वर्णनम्, मध्ये 'रम्भा' द्वारा तपोभङ्गप्रयासवर्णनम्, रम्भाशापवर्णनम्, विश्वामित्रस्य ब्रह्मर्षिपदप्राप्ति-वर्णनं च बालकाण्डस्य ६१तः ६५ सर्गेषु विस्तृतं वर्णितमस्ति। तत्रापि शुनःशेपकथाप्रसङ्गस्तु हरिश्चन्द्रराजर्षेर्यज्ञपशुरूपे क्रीते शुनःशेपे विश्वामित्र-द्वारा रक्षणस्य प्रसिद्धपौराणिकहरिश्चन्द्रोपाख्यानात् सर्वथा भिन्नो विद्यते। जनकस्य धनुर्यज्ञप्रसङ्गेऽप्रासङ्गिकीकथेयं चिन्त्या इति)।

ततश्च जनको विश्वामित्रस्य रामलक्ष्मणयोश्च यथोचितं सादरं सत्कारं कृत्वा सुरक्षितस्य शिवधनुषः परिचयं महात्म्यं च वर्णितवान्। धनुषः प्रत्यारोपणोपणान्तमेव रामेण सह सीताविवाहः संभव इत्युक्तवान्।

सर्वं ज्ञात्वा हेलया लीलया च रामेण तद्धनुर्भग्नः कृतः। समस्त-देवादिऋषयश्च मुदमापुः। विश्वामित्राज्ञया दशरथं सूचयितुमानेतुं च मन्त्रिणोऽयोध्यां प्रस्थितवन्तः।

जनकस्य सूचनां प्राप्य भगवता वसिष्ठेन मन्त्रिभिर्भरत-शत्रुघ्नाभ्यां च साकं मिथिलां प्रतस्थे। मिथिलामागत्य जनकद्वारा विशिष्टस्वागतं सत्कारं च लेभे। जनकश्च सांकाश्य नगरीतः स्वभ्रातरं कुशध्वज-माहूतवान्। दशरथस्यानुरोधेन वसिष्ठेन सविस्तरं सूर्यवंशपरिचयो दत्तः। जनकेनापि राज्ञो निमेरारभ्य स्वर्यन्तं निजवंशपरिचयः प्रोक्तः।

(अद्यापि मिथिलायां विवाहात्पूर्वं कन्यावरपक्षयोः सविशेषेण परिचयं विना सिद्धान्तपत्रलेखनं च बिना विवाहो न विधीयते। पूर्वोक्तवर्णनेन निश्चीयते यदियं प्रथा रामायणकालादेव समागच्छति)

तदनन्तरं वसिष्ठेनोक्तं यत् भवतां द्वाभ्यां सीतार्उमिलाभ्यां कन्यकाभ्यां श्रीरालक्ष्मणौ श्रेष्ठतमौ विद्येते। ताभ्यमिमे कन्यके प्रदेये। जनकश्च सहर्षं प्रस्तावमिमं स्वीचकार।

अथ विश्वामित्रो जनकस्य भ्रातुः कुशध्वजस्य कन्यकाभ्यां माण्डवा-श्रुतिकीर्तिभ्यां भरतशत्रुघ्नौ समुपयुक्ताविति प्रोक्तवान्। नतशिरसा जन-केनायं सुमधुरप्रस्तावोऽभिनन्दितः।

ततश्च दशरथो वसिष्ठाज्ञया स्वप्रपुत्राणां कल्याणार्थं शास्त्रीयविधिना नान्दीश्राद्धं (आभ्युदयिकश्राद्धं) गोदानादिकं च चकार।

(अद्यापि मिथिलायां नान्दीश्राद्ध—आभ्युदयिकश्राद्धं विना न किमपि शुभकार्यं जायते निरपवादरूपेण)

यथा—

स गत्वा निलयं राजा श्राद्धं कृत्वा विधानतः।
प्रभाते कालमुत्थाय चक्रे गोदानमुत्तमम्॥
गवां शतसहस्रं च ब्राह्मणेभ्यो नराधिपः।
एकैकशो ददौ राजा पुत्रानुद्दिश्य धर्मतः॥७२।२१-२२

अथ च चतुर्णां राम-भरत-लक्ष्मण-शत्रुघ्नानां भ्रातॄणां पाणिग्रहणसंस्कारो विवाहोत्सवश्च पूर्णतो वैदिकपद्धत्या सुसम्पन्नो बभूव। एतत् समये केकय-देशात् भरतस्य मातामहोऽप्युपस्थितो जातः।

विवाहक्रमे जनकेनोक्तम् "हे रामचन्द्र! तव कल्याणं भवतात्। ममेयं परमपवित्रा पुत्री सीता तव सहधर्मिणीरूपेण छायावत् त्वया सह स्थास्यति। कृपया स्वीकरोतु पुण्यवतीं सीताम्"।

तदुक्तं तथा--

अब्रवीज्जनको राजा कौशल्यानन्दवर्धनम्।
इयं सीता मम सुता सहधर्मचरी तव॥
प्रतीच्छ चैनां भद्रं ते पाणिं गृह्णीष्व पाणिना।
पतिव्रता महाभागा छायेवानुगता सदा॥७३।२६-२७

पुनश्च लक्ष्मणं प्रत्युवाच, हेवत्स लक्ष्मण! तव मङ्गलं भूयात्, तुभ्यमिमाम् उर्मिलानाम्नीं कन्यामुपहरामि, कृपया स्वीकरोतु। लक्ष्मणेन नतमस्तकेन उर्मिला स्वीकृता।

तदनन्तरं जनको भरतं प्रति प्रार्थितवान्—वत्स भरत! कृपया ममात्मजानुरूपां भ्रातृजां सर्वगुणोपेतां माण्डवीं स्वीकरोतु। शत्रुघ्नं प्रत्यपि तथैवोक्तवान्—वत्स शत्रुघ्न! श्रुतिकीर्तिमिमां गृह्णातु। उभावपि तथैव श्रद्धया स्वीकृतवन्तौ।

यथा—

चत्वारस्ते चतसृणां वसिष्ठस्य मते स्थिताः।
अग्निं प्रदक्षिणं कृत्वा वेदिं राजानमेव च॥
ऋषींश्चापि महात्मानः सहभार्या रघूद्वहाः।
यथोक्तेन ततश्चक्रुर्विवाहं विधिपूर्वकम्॥७३।३५-३६

एवं इत्थं च विवाहयज्ञः सम्पन्नः ।

एतत्समानान्तरमेव जामदग्न्यः परशुरामः समुपस्थितः । महता क्रोधेन तेनोक्तं 'केन शिवधनुर्भङ्गं कृतम्' । क्रुद्धं मुनिमवलोक्य दशरथस्तं सान्त्वयामास, किन्तु दशरथस्य प्रार्थना न स्वीकृता परशुरामेण । प्रत्युत वैष्णवधनुषः प्रत्यञ्चारोपणार्थं रामचन्द्रमाहूतवान् ।

रामचन्द्रो विहस्य लीलया वैष्णवं धनुरारोप्य परशुरामस्य पुण्यलोकं नाशयामास ।

यथा--

तदेवं वैष्णवं राम पितृपैतामहं महत् ।
क्षत्रधर्मं पुरस्कृत्य गृह्णीष्व धनुरुत्तमम् ॥

योजयस्व धनुःश्रेष्ठे शरं परपुरञ्जयम् ।
यदि शक्तोऽसि काकुत्स्थ द्वन्द्वं दास्यामि ते ततः ॥७५।२७-२८

तथा च

प्रारोप्य स धनुः रामः शरं सज्यं चकार ह ।
जामदग्न्यं ततो रामं रामः क्रुद्धोऽब्रवीदिदम् ॥७६।५

जडीकृते तदा लोके रामे वरधनुर्धरे ।
निर्वीर्यो जामदग्न्योऽसौ रामो राममुदैक्षत ॥७६।११

एवं हि राजा दशरथः पुत्रैः पुत्रवधूभिः परिजनैश्च साकमयोध्यामागतवान् । तत्र च समस्तजानपदाः पौराः परिजनाश्च रामस्यालौकिकगुणैः कार्यकलापैश्च विस्मिताः सन्तः सुसन्तुष्टाः समभूवन् ।

यथा—

पुत्रैरनुगतः श्रीमान् श्रीमद्भिश्च महायशाः ।
प्रविवेश गृहं राजा हिमवत् सदृशं प्रियम् ॥७७।९

एवं दशरथः प्रीतो ब्राह्मणा नैगमास्तथा ।
रामस्य शीलवृत्तेन सर्वे विषयवासिनः ॥७७।२३

॥ इति बालकाण्डसंक्षिप्तविवरणम् ॥

अयोध्याकाण्डम्

अयोध्याकाण्डमेव वाल्मीकिरामायणस्य सर्वस्वं रामायणानाञ्च हृदयमस्तीति मम विचारोऽन्येषां समीक्षकाणामपि मतम्। यतो हि काण्डेऽस्मिन् समग्रसत्यनिष्ठामर्यादाश्रद्धाभक्तीनां समावेशः। सहैव समस्त-समाजवादस्य साम्राज्यवादतिरस्कारस्य च कथाऽभूतपूर्वा श्रेयसी प्रेयसी च विद्योतमाना विद्यते।

महतोऽगाधस्यास्य काण्डस्यातिसंक्षिप्तविवरमत्र प्रस्तूयते यत्र समुद्रा-ल्लघुजलपात्रेण जलनिःसारणमिव ममायं प्रयासः।

सर्वप्रथमं रामस्य सद्गुणकीर्तनं वर्तते। ततश्च दशरथः रामस्य राज्याभिषेकार्थं समग्रपार्षदेन विविधदेशीयनृपैः सह अयोध्यावासिभि-स्तत्रत्य जानपदैः साकं च मन्त्रणां चकार।

यथा---

आत्मनश्च प्रजानां च श्रेयसे च प्रियेण च।
प्राप्तेकाले स धर्मात्मा भक्त्या त्वरितवान् नृपः ॥१।४५
अनुजातोहि मां सर्वैर्गुणैः श्रेष्ठो ममात्मजः।
पुरन्दरसमो वीर्ये रामः परपुरञ्जयः॥
तं चन्द्रमिव पुष्येण युक्तं धर्मभृतां वरम्।
यौवराज्ये नियोक्ताऽस्मि प्रातः पुरुषपुङ्गवम् ॥२।११-१२

अत्रेदं ज्ञेयम्—'रामचन्द्रः सद्यः सनातनविष्णुस्वरूप एवास्ति', यतो हि—

स हि देवैरुदीर्णस्य रावणस्य वधार्थिभिः।
अर्थितो मानुषे लोके जज्ञे विष्णुः सनातनः॥१।७

जानपदाश्च समर्थितवन्तः प्रस्तावम्। एवं हि दशरथो रामस्य राज्या-भिषेकार्थं निश्चयं चकारः।

यथा—

तं देवं देवोपममात्मजं ते सर्वस्य लोकस्य हिते निविष्टम्।
हिताय क्षिप्रमुदारजुष्टं मुदाभिषेक्तुं वरदस्त्वमर्हसि ॥२।५४

ततश्च नृपो गुरुवसिष्ठं महर्षिवामदेवं च रामराज्याभिषेकाय पूर्वं

व्यवस्थां विधातुं प्रार्थितवान्। सेवकेभ्यश्च तयोराज्ञानुसारं सर्वकार्यं करणार्थमादेशं प्रददौ। केवलं शीघ्रतायां जनकः केकयनरेशो भरतशत्रुघ्नौ च न सूचितौ।

यथा—

न तु केकयराजानं जनकं वा नराधिपः।
त्वरया चानयामास पश्चात्तौ श्रोष्यतः प्रियम्॥ १।४८

अत्रेदमेकं रहस्यम्—देवादयः दशरथं मातुलगृहात् भरत-शत्रुघ्नयोरानयनार्थं केकयनरेशं, तथा मिथिलाधिपतिं जनकं च सूचयितुं नादिष्टवन्तः। यतो हि यदि भरतः समागमिष्यति तदा रामवनगमनं न सम्भवम्, ततश्च देवकार्यं कथं स्यात्। उपर्युक्तपद्ये यद्यपि शीघ्रतामेव-कारणमुक्तम् किन्तु, रहस्यमिदमेव। तथा च देवाः सर्वे विचार्य सरस्वतीमेव मन्थराहृदि प्रवेशयामासुस्तत्र मन्थरामुखेन सरस्वती वदति।

दशरथश्च सुमन्त्रद्वारा राममाहूयावश्यकनिर्देशं तस्मै प्रदत्तवान्। रामश्च तमादेशं नतशिरसा आदाय मातुः कौशल्यायाः समीपमगात् लक्ष्मणं च सूचितवान्।

एतन्मध्ये दासी मन्थरा कैकेयीसमीपमागत्य सर्वां सूचनां ददाति। कैकेयी सुप्रसन्ना सती स्वर्णभूषणादिकं मन्थरायै प्रदत्तवती। किन्तु मन्थरा रामराज्याभिषेकः कैकेयीकृतेऽनिष्टकारकः भरतस्य तिरस्कारकारकः इत्यादि रूपेण कुटिलषडयन्त्रेण कोपभवनं प्रेषितवती।

दशरथश्चेदं श्रुत्वा विस्मितः सन् त्वरितमेव कोपभवनमागत्य कैकेयीं प्रतिबोधितवान्, किन्तु कैकेयी हठधर्मितामाश्रित्योक्तवती यत् पुरा देवासुरसङ्ग्रामे मह्यं वरद्वयं प्रदत्तं भवता, तत् वरद्वयमधुना प्रयच्छ, दशरथः प्रसन्नो भूत्वा स्वीकृतवान्।

कैकेयी रामाय चतुर्दशवर्षं यावत् वनवासं भरताय राज्यदानं च ययाचे। एवं श्रुत्वैव दशरथः स्तब्धः विमूढः संजातः। विविधमधुरवचनैः विनयेनानुनयेन कैकेयीं प्रतिबोधयितुं प्रयत्नशीलो राजा विफलो जातः।

दशरथस्तदा सुमन्त्रं मन्त्रिणं संप्रेष्य राममाह्वयत्। पुत्रश्च रामो मार्गेऽयोध्यायां राजपथशोभां पश्यन् पितुः समीपमुपस्थितः। समागत्य च मातरं कैकेयीं पृष्टवान् यत् कथमियं दशाऽवस्था च पितुर्वर्तते? कैकेयी कठोरतापूर्वकं वरदानद्वयस्य विवरणं कथितवती।

श्रुत्वैव रामस्त्वरितमेव सहर्षं वनगमनं स्वीकृत्य मातुः कौशल्याया आज्ञां ग्रहीतुं ययौ। समाचारमिमं ज्ञात्वा कौसल्या-सुमित्रादयस्तत्रोपस्थिताश्च सर्वाः मूर्च्छिताः संजाताः। रामश्च ताः प्रबोधितवत्यः। पुनश्च सर्वाः विलपन्त्यः विक्षिप्ततुल्या बभूवुः।

एतन्मध्य एव लक्ष्मणस्तत्रागत्य कोपेन कम्पायमानो बहुधा निजगाद। रामस्तमपि प्रबोध्य पितुराज्ञापालनमेव सर्वाधिको धर्म इत्युपदिष्टवान्। सहैवाभिषेकसामग्रीं ततोऽपसरणार्थमाज्ञां च ददौ।

यथा—

निगृह्य रोषं शोकं च धैर्यमाश्रित्य केवलम्।
अवमानं निरस्यैनं गृहीत्वा हर्षमुत्तमम्॥
उपक्लृप्तं यदेतन्मेऽभिषेकार्थमुत्तमम्।
सर्वं निवर्तय क्षिप्रं कुरु कार्यं निरव्ययम्॥ २२।३-४
सा च लक्ष्मण सन्तापं कार्षीर्लक्ष्म्या विपर्यये।
राज्यं वा वनवासो वा वनवासो महोदयः॥ २२।२९

एवं रूपेण रामोऽनुपदमेव वनं गन्तुमुद्यतो जातः।

अथ कौसल्या रामवनगमनार्थं मङ्गलकामनापूर्वकं स्वस्तिवाचनं कृतवती। रामस्तां प्रणम्य सीतां निकषा समागतवान्। सीता च तां घटनां श्रुत्वा विचलिता जाता। तां प्रतिबोधयन् रामस्तामयोध्यायामेव स्थातुमुपदिदेश।

यथा—

स्वस्ति साध्याश्च विश्वे च मरुतश्च महर्षिभिः।
स्वस्ति धाता विधाता च स्वस्ति पूषाभवोऽर्यमाः॥ २५।८
तथा हि देव्या च कृतप्रदक्षिणो
निपीड्य मातुश्चरणौ पुनः पुनः।
जगाम सीता निलयं महायशाः
स राघवः प्रज्वलितस्तया श्रिया॥२५।४७

एवं क्रमेण रामोऽविलम्बमेव वनं प्रस्थातुमुद्यतो जातः। सीताऽपि सहैव गन्तुमुद्यता, रामेणाग्रहः स्वीकृतः।

अथ रामचन्द्रः पितुः समीपं गत्वा वनप्रस्थानार्थमाज्ञां ययाच। रामं दृष्ट्वैव दशरथः पुनः पुनर्मूर्च्छामाप। रामेण सान्त्वना प्रदत्ता।

दशरथः सकरुणं विललाप, साहशं कृत्वा सुमन्त्रमाज्ञापितवान् यत् रथद्वारा रामं वनं नय। कौशल्या च सीतायै वस्त्राभूषणादिकं प्रदायोपदेशं ददौ।

ततश्च लक्ष्मणः सीता रामाभ्यां सहितो विचित्रवेदनापूर्णपरिस्थितौ सर्वेभ्यः आशीर्वचनं गृहीत्वा वनं प्रतस्थे। प्रस्थानसमये पुरवासिनं प्रति-निवेदितवान् यत् महाराजस्य भरतस्य च सर्वथा सुरक्षा विधेया, प्रेम-भावश्च रक्षणीयः।

नगरवासिनो वृद्धब्राह्मणाश्च प्रत्यावर्तनार्थं रामं प्रार्थयामासुः। एभिः सहैव रामस्तमसा नदीतटं प्राप्य तत्रैव सर्वैः साकं रात्रिविश्रामं चकार।

रात्रावेव सर्वान् नगरवासिजनान् सुप्तावस्थायामेव रामः ससीतलक्ष्मणो मुख्यमार्गं विहाय शनैः शनैः रथेन ततः प्रतस्थे। प्रात उत्थाय पौरजना राममदृष्ट्वा शोकाकुलाः सन्तः विलापं चक्रुः। रामश्चायोध्यां पश्चिमप्रणामं कृत्वा वनं जगाम। ततश्च शृङ्गवेरपुरं प्राप्य रात्रौ तत्र विश्रामं चकार। तत्र निषादराजेन गुहेन सह साक्षात्कारः परिचयश्च जातः। निषादेन महान् सत्कारः कृतः। सर्वैः परिजनैः सह सेवायां सुरक्षायां च तत्परो जातः।

यथा—

> **गुहमेवं ब्रुवाणं तु राघवः प्रत्युवाच ह।**
> **अर्चिताश्चैव हृष्टाश्च भवता सर्वदा वयम्॥ ५०।४०**
> **गुहोऽपि सह सूतेन सौमित्रिमनुभाषयत्।**
> **अन्वजाग्रत् ततो राममप्रमत्तो धनुर्धरः॥ ५०।५०**

प्रातरुत्थाय रामो नित्यक्रियां विधाय गङ्गापारगमनार्थमुद्यतोऽभूत्। निषादश्च कर्णधारसहितां मनोहरामेकां तरणिमानयनार्थमादिष्टवान्। तस्य सचिवेन तथैव कृतम्, नौका च तत्रोपस्थिता। रामचन्द्रेण च सुमन्त्रः विविधसम्मानपूर्णवचनैः साकेतपुरीं प्रत्यावर्तितः, बहुशः सन्देशाश्च कथिताः।

यथा—

> **ततः स प्राञ्जलिर्भूत्वा गुहो राघवमब्रवीत्।**
> **उपस्थितेयं नौर्देव भूयः किं करवाणि ते॥ ५२।८**
> **चतुर्दशसु वर्षेषु निवृत्तेषु पुनः पुनः।**
> **लक्ष्मणं मां च सीतां च द्रक्ष्यसे शीघ्रमागतान्॥ ५२।२९**

अत्र सुमन्त्रं रामचन्द्रः कारुणिक—व्यावहारिक—सर्वोच्चचारित्रिक-भावनापूर्णसन्देशं मातरं पितरं भ्रातरं पौरजनान् प्रति कथितवान्, सा चोक्तिः सा च भव्यभावना महती स्पृहणीया श्रेयसी प्रेयसी च।

तदनन्तरं नावमारुह्य रामः सीतालक्ष्मणसहितः गङ्गामध्यगतः भगवतीं भागीरथीं प्रार्थयामास यत् चतुर्दशवर्षाणि वने व्यतीत्य परावर्तन-समये भवत्याः पूजनं विधाय ब्राह्मणेभ्यो दीनेभ्यश्च सहस्रगवादिदानं च करिष्ये।

यथा——

चतुर्दश हि वर्षाणि समग्राण्युष्य कानने।
भ्रात्रा सह मया चैव पुनः प्रत्यागमिष्यति॥
ततस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेन पुनरागता।
यक्ष्ये प्रमुदा गङ्गे सर्वकामसमृद्धिनी॥ ५२।८४-८५
गवांशतसहस्रं च वस्त्राण्यन्नं च पेशलम्।
ब्राह्मणेभ्यः प्रदास्यामि तव प्रियचिकीर्षया॥ ५२।८८

ततश्च सायं स्वयमेव कन्दमूलफलादिकं भक्षयित्वा रात्रौ तत्रैव निवासं चकार।

अत्र रामद्वारा प्रेषितसन्देशवाक्यैर्ज्ञायते यत् मातरं, मातृभूमिं, पितरं, प्रजाजनान् प्रति कीदृशी कोमलभावना भगवतो रामचन्द्रस्य। भावनेयं मायामयी।

अथ च रामकेवटवार्ताप्रसङ्गोऽपि नास्मिन् रामायणे वर्तते। आनन्द–अद्भुत–बाल–रामायणमिव नास्य चर्चा। केवलमध्यात्मरामायणे बालकाण्डे अहल्योद्धारानन्तरमेव गङ्गापारगमनसमये राम-केवटसम्वादः पादप्रक्षलनकथा च श्लोकद्वयमात्र एव दृश्यते। प्रायोऽयमेवाधारः तुलसिदासेन रामकेवटसम्वादे विस्ताररितो रामचरितमानसे।

वर्तमान अहल्यास्थानात्—गौतमकुण्डात् कियद्दूरे 'कमला नदी' विद्यते। अतस्तत्र गङ्गानद्याःस्थितेराकलनमपेक्षितं समीक्षकैर्भौगोलिकैश्च।

अनन्तरं तत्र वृक्षतले स्थितो रामो लक्ष्मणं प्रति अयोध्यास्थितिवर्णनं महता कारुणिकरूपेण विषादपूर्णं कृतवान्।

"अत्र ५३ सर्गे षट्संख्याकश्लोकतो षड्विंशति (६–२६) पर्यन्तं यादृशवर्णनं दृश्यते तद्रामस्य मनोदशायाः प्रतिबिम्बम्। अनुमीयते च

यदत्र रामचन्द्रः सामान्यजनोचितभावावेशेन सर्वत्र प्रदर्शितमर्यादां विस्मृत्योपेक्ष्य वा शोकोच्छ्वासं प्रगटितवान्, कोऽपि यदीच्छेत् तर्हि तत्रैवो-पर्युक्तान् श्लोकान् द्रष्टुं शक्नोति।"

अथ रामः सीतालक्ष्मणाभ्यां सहितः पावने प्रयागे गङ्गा-यमुना-सरस्वतीसङ्गमे त्रिवेणीमवतीर्य पारं कृत्वा भरद्वाजऋषेरामश्रमं प्राप्तवान्। तत्र भरद्वाजद्वारा कृतातिथ्यं सादरं सबहुमानं स्वीचकार। भरद्वाजेन शोभने चित्रकूटे निवासार्थं निर्दिष्टः। तत्र विचित्रकूट-चित्रकूटाचलस्य तत्र प्रवहमानाया मन्दाकिन्या वर्णनं च श्रेयप्रेयकरम्। भरद्वाजेन स्वस्तिवाचनपूर्वकं चित्रकूटमार्गश्च दर्शितः। ससीतलक्ष्मणो राम-श्चित्रकूटवनशोभां पश्यन् तत्रागतः। अत्रैव शमीपस्थवाल्मीकेराश्रम-मागत्य तेषां दर्शनं कृत्वा आज्ञामादाय चित्रकूटस्य सुरम्ये प्रान्ते लक्ष्मणद्वारा निर्मितपर्णशालायां सानन्दं निवासं कृतवान्।

यथा—

यावता चित्रकूटस्य नरः शृङ्गाण्यवेक्षते।
कल्याणानि समाधत्ते न पापे कुरुते मनः॥ ५४।३०
स पन्थाः चित्रकूटस्य गतस्य बहुशोभया।
रम्यो मार्दवयुक्तश्च दावैश्चैव विवर्जितः॥ ५५।९
मातङ्गयूथानुसृतं पक्षिसंघानुनादितम्।
चित्रकूटमिमं पश्य प्रवृद्धशिखरं गिरिम्॥ ५६।१०
सुरम्यमासाद्य तु चित्रकूटं
नदीं च तां माल्यवतीं सुतीर्थाम्।
ननन्द हृष्टो मृगपक्षिजुष्टां
जहौ च दुःखं पुरविप्रवासात्॥ ५६।३५

(एकदा पुनराकलयन्तु अयोध्यास्थितिं मनीषिणो भक्तश्रद्धावलश्च।)

सुमन्त्रोऽयोध्यां प्रत्यागत्य श्रीरामचन्द्रसन्देशं पित्रे दशरथाय, मातृभ्यः, पुरवासिभ्यश्च व्याजहार। श्रुत्वा च दशरथो मूर्च्छामवाप। कौसल्यादि-मातरश्चार्तनादं कुर्वन्त्यः करुणासागरं प्रवाहितवत्यः। भावावेशेन कौसल्या राजानमुपालम्भत, पुनस्त्वरितमेव क्षमां ययाचे।

दशरथश्च मुनिना श्रवणकुमारवधघटनां संस्मृत्य तस्य मातापितृभ्यां प्रदत्तशापेन कौसल्यासमीपमर्धरात्रौ दिवंगतः, ततश्च वसिष्ठाज्ञया पञ्चदूता भरतानयनार्थं केकयदेशं प्रस्थिताः। वसिष्ठसन्देशं प्राप्य उभौ भ्रातरौ

भरतशत्रुघ्नौ साकेतं प्रति प्रस्थितौ। अयोध्यां प्रविश्य त्वरितमेव कैकेयिभवनं प्रविष्टो भरतो मात्रापितुः परलोकगमनस्य दुःखदं समाचारं ज्ञात्वा विललाप। रामस्य प्रसङ्गे जिज्ञासायां तेषां वनवासवृत्तान्तं च श्रुतवान्। श्रुत्वैवेदं भरतो महान्तं रोषं कैकेयीं प्रति अभिव्यक्तवान्। तस्यै मात्रे कठोरवचनैर्धिक्कृतं भरतेन।

यथा—

राज्याद् भ्रंशस्व कैकेयि नृशंसे दुष्टचारिणि।
परित्यक्तासि धर्मेण मामृतं रुदती भव॥
किन्नु तेऽदूषयत् रामो राजा वा भृशधार्मिकः।
ययोर्मृत्युर्विवासश्च त्वत्कृते तुल्यमागतौ॥ ७४।२-३

तदा कौसल्यासमीपमागत्य भरतो विविधप्रकारेण विभिन्नवेदनापूर्णवाक्यैश्च कैकेयीं भर्त्सयामास, तस्यै शापं प्रददौ। तत्र कौशल्या स्व शपथं दत्वा भरतं प्रबोधितवती।

यथा—

तदा तं शपथैः कष्टैः शपमानमचेतनम्।
भरतं शोकसन्तप्तं कौशल्या वाक्यमब्रवीत्॥ ७५।६०

तदनन्तरं वसिष्ठाज्ञया भरतो दशरथस्यान्तिमसंस्कारादिकं विधिवत् विधाय श्राद्धे च ब्राह्मणेभ्यो बहुधनानि प्रदत्तवान् मध्ये च क्रुद्धः शत्रुघ्नश्च कुब्जां मन्थरां ताडितवान्, भरतेन निवारितश्च।

अथ श्राद्धोपरान्तं वसिष्ठो भरताय राज्याभिषेकार्थं मन्त्रिणमादिष्टवान्। भरतेन तन्न स्वीकृतम्। रामस्य वनात् प्रत्यावर्तनार्थं सर्वैः परिजनैः गुरुवसिष्ठेन च साकं वनगमनार्थमुद्यतो बभूव।

यथा—

वसिष्ठस्य वचः श्रुत्वा भरतो धरणीं गतः।
प्रेतकृत्यानि सर्वाणि कारयामास धर्मवित्॥
योगक्षेमं तु तेऽव्यग्रं कोऽस्मिन् कल्पयिता पुरे।
त्वयि प्रयाते स्वस्तात रामे च वनमाश्रिते॥ ७६।२-८
भरतस्य वचः श्रुत्वा शत्रुघ्नो लक्ष्मणानुजः।
न्यवर्तत ततो रोषात् तां मुमोच च मूर्च्छिताम्॥ ७८।२४

अभिषेचनिकं चैव सर्वमेतदुपस्कृतम् ।
पुरस्कृत्य गमिष्यामि रामहेतोर्वनं प्रति ॥
तत्रैव तं नरव्याघ्रमभिषिच्य पुरस्कृतम् ।
आनयिष्यामि वै रामं हव्यवाहमिवाध्वरात् ॥ ७९।१०-११

एवं विचार्य भरतः परिजनैः सह वनं प्रस्थाय रात्रौ शृङ्गवेरपुरे स्थितस्तत्र निषादराजः स्वसैन्यान् तटरक्षार्थं सावधानं कृत्वा स्वयं भरतसमीपमाययौ। स्वकीयातिथ्यं स्वीकर्तुं निवेदितवान्। भरतेन स्वीकृतः। एवं च निषादराजेन सह भरतस्य सुविशदो वार्तालापो जातः, भरतश्च शोकमग्नो जातः। निषादेन रामचन्द्रस्यावासादिविषये सूचितः।

यथा—

रामचिन्तामयः शोको भरतस्य महात्मनः ।
उपस्थितोऽनर्हस्य धर्मप्रेक्षस्य तादृशः ॥८५।१६

ततश्च भरतः सपरिजनो भरद्वाजस्याज्ञां प्राप्य चित्रकूटं प्रतस्थे। तत्र-चित्रकूटे रामः सीतां चित्रकूटस्य शोभां दर्शयन् मन्दाकिन्या माहात्म्यं च वर्णयन् आसीत्।

यथा—

पश्येममचलं सीते नानाद्विजगणायुतम् ।
शिखरैः स्वमिवोद्वृद्धैर्धातुमद्भिर्विभूषितम् ॥ ९४।४
विचित्रपुलिनां रम्यां हंससारससेवितां
कुसुमैरुपसम्पन्नां पश्य मन्दाकिनीं नदीम् ॥ ९५।३

अत्र च त्वया सीतया सह निवसतो मम न कस्यापि कापि चिन्ता बाधते।

उपस्पृशं त्रिषवणं मधुमूलफलाशनः ।
नायोध्यायै न राज्याय स्पृहे च त्वया सह ॥ ९५।१७

ततश्च सेनासहितेन भरतस्यागमनेन वन्यजन्तवो यत्र तत्र पलायिताः। पलायितान् तान् दृष्ट्वा रामः पलायनकारणज्ञानार्थं लक्ष्मणमादिदेश। लक्ष्मणश्च ससैन्यं भरतमागच्छन्तं दृष्ट्वा रोषपूर्णमुद्गारं व्यक्तवान्। इति श्रुत्वा मर्यादामूर्तिः रामचन्द्रो लक्ष्मणं शान्तं कुर्वन् प्रोवाच यत् भरतो ममानुजः, किं कृतं तेन येन तवेयं मनोभावना ? तदुक्तम्—

यथा—

लक्ष्मणः—

संप्राप्तोऽयमरिर्वीर भरतो वध्य एव हि।
भरतस्य वधे दोषं नाहं पश्यामि राघवः॥ ९६।२३

अद्यैव चित्रकूटस्य काननं निशितैः शरैः।
छिन्दन् शत्रुशरीराणि करिष्ये शोणितोक्षितम्॥ ९६।२८

रामः—

स्नेहेनाक्रान्तहृदयः शोकेनाकुलितेन्द्रियः।
द्रष्टुमभ्यागतो ह्येष भरतो नान्यथागतः॥ ९७।११

विप्रियं कृतपूर्वं ते भरतेन कदा नु किम्।
ईदृशं वा भयं तेऽद्य भरतं यद् विशङ्कसे॥ ९७।१४

अथ भरतः शत्रुघ्नेन समस्तपरिजनेन सहितः श्रीरामचन्द्रं निकषा समागत्य तत्रत्य पर्णशालामवलोक्य रुदन् विलपन् रामचन्द्रचरणारविन्दे पपात्। रामश्च तमुत्थयालिङ्गनं चक्रे।

रामचन्द्रो वनागमनकारणं पृष्टवान्, भरतेनोक्तं यत् भवन्तः कृपयाऽयोध्यां प्रत्यावर्त्य स्वराज्यं स्वीकुर्वन्तु। रामेण तन्न स्वीकृतम्। तदा भरतमुखेन पितुर्मरणसमाचारं ज्ञात्वा रामो विललाप। सर्वैस्तं प्रबोधयामासुः। ततो रामः पित्रे जलाञ्जलिं दत्वा यथाविहितं पिण्डदानादिकं कृतवान्।

पुनश्च भरतः स्वयं वसिष्ठादिद्वारा च भूयोभूयः प्रत्यावर्तयितुं प्रयासं चकार किन्तु, रामेण न स्वीकृतम्, अपितु भरतमेव सर्वथा प्रबोध्य स्व पादुकां भरताय प्रदाय अयोध्यां परावर्तितवान्।

यथा—

उपविष्टं महाबाहुं ब्रह्माणमिव शाश्वतम्।
स्थण्डिले दर्भसंस्त्रीर्णे सीतया लक्ष्मणेन च॥

तं दृष्ट्वा भरतः श्रीमान् शोकमोहपरिप्लुतः।
अभ्यधावत धर्मात्मा भरतः कैकयीसुतः॥ ९९।२८-२९

रामः—

अयोध्यां गच्छ भरत प्रकृतीरुपरञ्जय ।
शत्रुघ्नसहितो वीर सह सर्वैर्द्विजातिभिः ॥ १०७।१५

भरतः—

इदं राज्यं महाप्राज्ञ स्थापय प्रतिपद्य हि ।
शक्तिमान् स हि काकुत्स्थ लोकस्य परिपालने ॥
एवमुक्त्वा तद् भ्रातुः पादयोर्भरतस्तदा ।
भृशं सम्प्रार्थयामास राघवेऽतिप्रियं वदन् ॥ ११२।१३-१४
अधिरोहार्य पादाभ्यां पादुके हेमभूषिते ।
एते हि सर्वलोकस्य योगक्षेमं विधास्यतः ॥

रामः—

सोऽधिरुह्य नरव्याघ्रः पादुके व्यवमुच्य च ।
प्रायच्छत् सुमहातेजा भरताय महात्मने ॥ ११२।२२

अथ भरतश्चरणपादुकामादाय स्वजनैः सैन्यैश्च साकमयोध्यां प्रस्थितः। अयोध्यामागत्यान्तःपुरदुर्दशां दृष्ट्वाऽतिशोकाकुलो जातः ।

ततश्च भरतो नन्दिग्रामं गत्वा रामचन्द्रस्य चरणपादुकामेव राज्याभिषिक्तं कृत्वा तं प्रतीकं मत्वा दैनन्दिनराज्यशासनं प्रारेभे ।

अत्र चित्रकूटे स्थितो रामः अत्रिमुनेराश्रममागतवान् । अत्रिः स्वागतं विदधे। अनसूया च सीतायै उपदेशं आशीर्वचनं च दत्तवती। एवं च तत्रैवात्रेराश्रमे विश्रामं कृत्वा प्रातः प्रस्थानार्थमाज्ञां नतमस्तकेनादाय प्रतस्थे ।

अस्मिन् चित्रकूटप्रकरणे निषादराजेन संपर्कस्तथा रामभरतमिलनप्रसङ्गस्तु वस्तुतोऽस्य काण्डस्य रामायणस्य च प्राणमयः पावनोऽलौकिको गभीरतमः परिदृश्यः ।

(इति अयोध्याकाण्डसंक्षिप्तविवरम्)

अरण्यकाण्डम्

काण्डेऽस्मिन् चित्रकूटतो रामस्य प्रस्थानवर्णनेन तापसाश्रमप्रवेश-वर्णनेन कथा प्रारब्धा। अत्र विभिन्नराक्षसबधकथा, शूर्पणखानासिका-च्छेदनकथा, रामस्य मायामयस्वर्णमृगानुगमनकथा, सीताहरणकथा, जटायुबधकथा तथा पम्पासरोवरतटाकगमनकथा च सुविशदा विद्यते।

ससीतलक्ष्मणो रामस्तापसानामाश्रमं प्रविवेश। तदानीमेव विराध-राक्षस्याक्रमणं तापसाश्रमे जातः।

विराधेन सह वार्तालापो जातः। युद्धार्थमेव सन्नद्धेन विराधेन साकं भयङ्करयुद्धे लक्ष्मणेन विराधो निहतः।

ततश्च रामः शरभङ्गऋषेराश्रमं प्राप्तवान्। शरभङ्गदर्शनं तत्र देवा-नामागमनं च जातम्। तेभ्यः सम्मानप्राप्त्यनन्तरं शरभङ्गं ससम्मानं स्वर्लोकं प्रेषयामास यदर्थं स प्रतीक्षते स्म।

तस्मादाश्रमात् प्रस्थाय रामो महर्षेः सुतीक्ष्णस्याश्रममागत्य तेन सह वार्तालापं कुर्वन् रात्रौ तत्रैव तस्थौ। प्रातः सुतीक्ष्णाश्रमात् रामः प्रस्थितः। मार्गे वार्तालापक्रमे सीता निवेदतवती यत् 'निरपराधप्राणिनां वधो न विधेयः अहिंसायाः पालनं च विधेयम्'।

रामेणोत्तरितं यत् ऋषीणां रक्षार्थं दुष्टराक्षसबधप्रतिज्ञां पालयिष्या-म्येव। ततश्च रामोऽगस्त्याश्रममागतवान्। मुनिना तेषां सत्कारो विहितः, तस्मै दिव्यास्त्रशस्त्राणि च प्रदत्तानि। ततश्च अगस्त्येन विनिर्दिष्टो रामः पञ्चवटीक्षेत्रं प्रस्थितः।

पञ्चवटीक्षेत्रमासाद्य लक्ष्मणेन पर्णशाला विनिर्मिता। तस्यां ससीत-लक्ष्मणो रामः सानन्दं निवासं चकार।

यथा–

आगताः स्म यथोद्दिष्टं यं देशं मुनिरब्रवीत्।
अयं पञ्चवटीदेशः सौम्य पुष्पितकाननः॥ १५।२
अयं देशः समः श्रीमान् पुष्पितैस्तरुभिर्वृतः।
इहाश्रमपदं रम्यं यथावत् कर्तुमर्हसि॥ १५।१०

इदं पुण्यमिदं रम्यमिदं बहुमृगद्विजम् ।
इह वत्स्यामि सौमित्रे सार्धमेतेन पक्षिणा ॥ १५।१९

एतदनन्तरं खरदूषणनाम्नो राक्षसस्य महती सुन्दरी भगिनी सहसा तत्रोपस्थिता । रामेण सह वार्तालापं विधाय सा विवाहार्थं याचितवती । रामेणोक्तं—'मम विवाहो जातः, इयं हि मम पत्नी सीता । अत्र सर्वगुण-सम्पन्नो ममानुजः स्त्रीरहितो वर्तते, तमेव समीपं गच्छ । यदि स भार्या-मिच्छेत् तर्हि त्वां स्वीकरिष्यति ।

यथा—

अनुजस्त्वेष मे भ्राता शीलवान् प्रियदर्शनः ।
श्रीमानकृतदारश्च लक्ष्मणो नाम वीर्यवान् ॥
अपूर्वीभार्यया चार्थी तरुणः प्रियदर्शनः ।
अनुरूपश्च ते भर्ता रूपस्यायस्य भविष्यति ॥ १८।३-४

अत्र रामेण हास्यं कुर्वताऽपि लक्ष्मणोऽत्र स्त्रीरहितः [अपूर्वीभार्यया] इत्युक्तः, न तु अविवाहित इति तथ्यमेवोक्तम् ।

रामस्योपेक्षामवलोक्य सा शूर्पणखा लक्ष्मणं प्रति ययौ । तेनापि प्रतिषिद्धा सा सीतामुपरि प्रत्याक्रमणं कृतवती । इदमवलोक्य लक्ष्मण-स्तस्या नासिकाकर्णच्छेदनं च चकार ।

यथा—

कथं दासस्य मे दासी भार्या भवितुमिच्छसि ।
सोऽहमार्येण परवान् भ्रात्रा कमलवर्णिनि ॥ १८।९

ततः सा मृगशावाक्षीमलातसदृशेक्षणा ।
अभ्यगच्छत् सुसंक्रुद्धा महोल्का रोहिणीमिव ॥ १८।७

इत्युक्तो लक्ष्मणस्तस्याः क्रुद्धो रामस्य पश्यतः ।
उद्धृत्य खड्गं चिच्छेद कर्णनासे महाबलः ॥ १८।२१

ततः सा चीत्कारं कुर्वन्ती स्व भ्रातरं खरदूषणसमीपं गत्वा भूमौ पपात । शूर्पणखाया दुर्दशां दृष्ट्वा खरेण चतुर्दशराक्षसान् रामसमीपं प्रेषयामास । रामेण ते चतुर्दशराक्षसा निहताः । राक्षसवधं श्रुत्वा सैन्यैः सह खरस्तत्रागतः । रामलक्ष्मणाभ्यां साकं दुष्टः स खरो घोरयुद्धमकरोत् ।

रोमाञ्चकारियुद्धोपरान्तं रामेण सह खरः सेनासहितो निपातितः। अनन्तरं तस्यैव भ्राता त्रिशिरानाम राक्षसः समागतः, सोऽपि रामेण हतः।

अथ शूर्पणखा लङ्कां गत्वा रावणं प्रति सर्वं वृत्तान्तं श्रावितवती। रावणोऽपि परम्परया तस्या भ्रातैवासीत्। शूर्पणखा सर्वगुणसम्पन्नामपूर्वसुन्दरीं सीतां निजपत्नीरूपेण प्राप्नोतु इति रावणं प्रेरितवती।

रावणो मायारूपधारिणं मारीचनामानं राक्षसं सीतापहरणे साहाय्यार्थं कथितवान्। मारीचेन रामगुणोत्कर्षं वर्णयित्वा प्रतिषिद्धो रावणः। अहङ्कारीरावणस्तमुपदेशं सत्यकथनं चोपेक्ष्य मारीचायादेशं ददौ।

मारीचश्च मायामयस्वर्णरूपं धृत्वा रामाश्रमसमीपमाययौ। कपटमृगं तं दृष्ट्वा लक्ष्मणः शङ्कितो जातः। सीता जीवितरूपे मृतरूपे वा तमानयनार्थं रामं साग्रहं प्रेषितवती, रामोऽपि सीतासंरक्षणभारं लक्ष्मणाय प्रदाय स्वयं धनुरादाय स्वर्णमृगमनु ययौ। रामेण स मायारूपधारी मारीचो हतः, मारीचश्च स्वकल्पितदेहं परित्यज्य निज-पूर्वरूपमागत्य रामसदृशस्वरेणैव 'हा सीते! हा लक्ष्मण!' इति शब्दं व्याजहार।

यथा—

स प्राप्तकालमाज्ञाय चकार च ततः स्वनम्।
सदृशं राघवस्येव हा सीते लक्ष्मणेति च॥ ४४।१९

तद्वचनमाकर्ण्य सीता लक्ष्मणं प्रेरितवती। त्वरितमेव गत्वा रामं रक्षस्व। किन्तु लक्ष्मणो न ययौ। ततः सीता कटुदुर्वचनैर्लक्ष्मणमुद्विग्नं कृतवती। लक्ष्मणेन वारम्बारं प्रतिबोधिताऽपि सीता भूरिशः कटुवचांसि व्याहृतवती। विवशो भूत्वा लक्ष्मणस्ततः प्रस्थितः।

यथा—

आर्तस्वरं तु तं भर्तुः विज्ञाय सदृशं वने।
उवाच लक्ष्मणं सीता गच्छ जानीहि राघवम्॥ ४५।१
तमुवाच ततस्तत्र क्षुभिता जनकात्मजा।
सौमित्रे मित्ररूपेण भ्रातुस्त्वमसि शत्रुवत्॥
यस्त्वमस्यामवस्थायां भ्रातरं नाभिपद्यसे।
इच्छसि त्वं विनश्यन्तं रामं लक्ष्मण मत्कृते॥ ४५।५-६
लोभात्तु मत्कृते नूनं नानुगच्छसि राघवम्।
व्यसनं ते प्रियं मन्ये स्नेहो भ्रातरि नास्ति ते॥ ४५।७

स्त्रीत्वात् दुष्टस्वभावेन गुरुवाक्ये व्यवस्थितं ।
गच्छामि यत्र काकुत्स्थः स्वस्ति तेऽस्तु वरानने ।।
रक्षन्तु त्वां विशालाक्षि समग्रा वनदेवताः ।
निमित्तानि हि घोराणि यानि प्रादुर्भवन्ति मे ।
अपि त्वां सह रामेण पश्येयं पुनरागतः ।। ४५।३३-३४

सर्गेऽस्मिन् समग्रे सीता कटु-दुर्वाक्यानि विद्यन्ते। वाल्मीकिनाऽत्र सहजनारीस्वभावचित्रणं कृतम्। नात्र सीता तथादर्शनारीरूपे चित्रिता यादृशी सा आसीत्। यथा च रामेण श्रृङ्गवेरपुरे रात्रौ लक्ष्मणेन सह-वार्तालापक्रमे दशरथं कैकेयीं प्रति भावना उद्भाविता।

प्रसिद्ध **'लक्ष्मणरेखा'** कथाऽस्मिन् आदिकाव्ये न दृश्यते। केवलं 'रक्षन्तु त्वां विशालाक्षि समग्रा वन देवताः' इत्येव कथितं सौमित्रिणा। केवलमानन्दरामायणे सारकाण्डस्य सप्तमसर्गे ९८–९९ श्लोकद्वयद्वारा **'लक्ष्मणरेखायाः'** चर्चा विद्यते। प्रायः गोस्वामिना तुलसिदासेनान्येन भाषा-कविना तत एव 'लक्ष्मणरेखा' कथा समुपस्थापिता।

अथ लक्ष्मणप्रस्थानानन्तरमेव ब्राह्मणवेषधारो रावणः सीतासमीप-मागतवान्। तां दृष्ट्वा च काममोहितः सन् विस्तृतविविधचाटुवचनैः सीतासौन्दर्यवर्णनं चक्रे। सीता च तस्मै आसनं प्रदाय प्रोवाच 'आतिथ्याय सर्वं प्रस्तुतमस्ति'। सीता सविस्तरं स्वकीयपरिचयमपि प्रदत्तवती। रावणेनापि निजपराक्रमवर्णनपूर्वकं परिचयो दत्तस्तथा निजभार्यारूपे आत्मानं [रावणं] स्वीकर्तुं प्रार्थितः।

सीता तद्वचनमाकर्ण्य विक्षुब्धा सती तं रावणं भर्त्सयाञ्चक्रे। स च रावणः स्व विशालभुजाभ्यां सीतां जहार।

यथा–

इयं बृसी ब्राह्मणकाममास्यता-
मिदं च पाद्यं प्रतिगृह्यतामिति ।
इदं च सिद्धं वनजातमुत्तमम्
त्वदर्थमव्यग्रमिहोपभुज्यताम् ।। ४६।३६

इत्युक्त्वा मैथिलीं वाक्यं प्रियार्हं प्रियवादिनीम् ।
अभिगम्य सुदुष्टात्मा राक्षसः काममोहितः ।।
जग्राह रावणः सीतां बुधः खे रोहिणीमिव ।। ४९।१६

अत्रापि नारीसुलभप्रशंसाप्रियासीता रावणाय आसन - पाद्यादिकं प्रायच्छत् । न किमपि सा विचारितवती ।

रावणः सीतामादायाकाशमार्गेण चलितः । सीता तत्राकाशमार्गे हृदयविदारकशब्दैः विललाप । तत्र जटायुं दृष्ट्वा पुनर्विलापं सकरुणं कृतवती । जटायुश्च रावणं सीताहरण दुष्कर्मणो निवृत्त्यर्थं प्रतिबोधितवान् । रावणेन तस्योपेक्षा कृता । ततो रावणजटायुमध्ये आकाश एव घोरतर-युद्धोऽभूत् । रावणेन जटायुर्निहतः । पुनश्च मैथिलीमादाय निर्ययौ ।

यथा–

तस्य व्याचच्छमानस्य रामस्याथ स रावणः ।
पक्षौ पादौ च पार्श्वौ खड्गमुद्धृत्य सोऽच्छिनत् ॥ ६१।४२

सीता आकाशमार्गात् स्वीकीयाभूषणादिकं पृथिव्यां पातयामास, यच्च वानरादि मध्ये पतितम् ।

रावणः सीतामादाय लङ्कामागत्य तामशोकवाटिकायां स्थापयामास । मध्ये ब्रह्मणोऽऽज्ञया इन्द्रो निद्रादेव्या सह मायारूपेण लङ्कामागत्य सर्वान् निद्रामग्नं कारयित्वा सीतयासार्धं वार्तालापं विधाय तस्यै दिव्यक्षीरं ददौ । यस्य क्षीरस्य भक्षणेन चिरकालपर्यन्तं बुभुक्षा-पिपासा च नैव भविता । [कथेयमस्यकाण्डस्य प्रक्षिप्तसर्गे विद्यते]

अत्रारण्ये लक्ष्मणेन सह रामः स्वमाश्रमागत्य सीतामदृष्ट्वा व्याकुलः सन् व्यथितोऽभूत् । तथा च विलपन् रामचन्द्रः सीतान्वेषणाय सलक्ष्मणः प्रस्थितः । मार्गे च रामस्य करुणविलापो हृदयद्रवकार्थभवत् ।

यथा–

इति विलपति राघवेऽति दीने ।
वनमुपगम्य तया विना सुकेश्या ॥
भयविकलमुखस्तु लक्ष्मणोऽपि ।
व्यथितमनाः भृशमातुरो बभूव । ६२।२०

सर्वं तु दुःखं मम लक्ष्मणेदं शान्तं शरीरे वनमेत्य क्लेशं ।
सीता वियोगात् पुनरप्युदीर्णं काष्ठभरिवाग्निः सहसोपदीप्तः ॥ ६३।६

इत्थं विलपन्तमग्रजं लक्ष्मणः सान्त्वयामास । सीतान्वेषणक्रमे मार्गे मृतप्रायो जटायुर्मिलितः । जटायुर्गृध्रमालिङ्ग्य तेन सीताहरणसमाचारं

सविस्तारं ज्ञातवान् । ततश्च जटायोरन्तिमः श्वासो निर्गतः, रामणे तस्य दाहादिकं तर्पणादिकं च कृतम् ।

यथा—

एवमुक्त्वा चितां दीप्तामारोप्य पन्नगेश्वरं ।
ददाह रामो धर्मात्मा स्वबन्धुमिव दुःखित. ॥ ६८।३१
कृतोदकौ तावपि पक्षि सत्तमे-
स्थिरां च बुद्धि प्रणिधाय जग्मतुः ।
प्रवेश्य सीताधिगमे ततो मनो-
वनं सुरेन्द्राविव विष्णुवासवौ ॥ ६८।३८

अत्र रामविलापस्तु सामान्यमानवरूपेण यथा वर्णितोमर्हर्षिणाऽति विस्तृतरूपेण । यत्र लक्ष्मणमादिष्टवान् । रामोऽयोध्याप्रत्यागनार्थं तथा स्व सन्देशं च सर्वान् श्रावयितुं च । ये च सन्देशाः कारुणिकास्तथा कठोर-वचनपूर्णाश्च ।

तदनन्तरं मार्गे कबन्धराक्षसं युद्धे निपातितः । कबन्धोऽपि चितायां प्रविशन्नेव दिव्यरूपधारी संजातः । सुग्रीवेण सह मित्रतायै निवेद्य ऋष्यमूक-पर्वतमार्गं, मातङ्गऋषेराश्रमं, पम्पासरोवरपन्थानं च निर्दिष्टवान् ।

यथा–

गच्छ शीघ्रमितो वीर सुग्रीवं तं महाबलम् ।
वयस्यं तं कुरु क्षिप्रमितो गत्वाऽद्य राघव ॥ ७२।१७

लक्ष्मणो रामचन्द्र पम्पासरस्तटमार्गाय शबर्या आश्रमं प्राप्तः । तत्रैव उभौ स्थितौ ।

कृत्वा तु शैल पृष्ठे तु तौ वासं रघुनन्दनौ ।
पम्पायाः पश्चिमं तीरं राघवावुपतस्थतुः ॥ ७४।३

॥ इति अरण्यकाण्डं सम्पूर्णम् ॥



किष्किन्धा काण्डम्

अस्मिन् काण्डे रामलक्ष्मणयोः पम्पासरोवरतो ऋष्यमूकपर्वतं प्रति प्रस्थान वर्णनम्, एतयोरागमनमवलोक्य सुग्रीवादिवानरामुद्विग्नता वर्णनं, राम सुग्रीवयोर्मैत्री वर्णनं, बालिसुग्रीवविरोधवर्णनं, वालिपराक्रमवर्णनं, रामज्ञया सुग्रीवस्य बालिना सह युद्धवर्णनं, रामेण सप्ततालभञ्जनवर्णनं, रामेण बालिवधवर्णनं, राम-बालिसम्वादवर्णनं, रामद्वारा बालिपत्नी-तारा, पुत्राङ्गदादि सानवनावर्णनं, सुग्रीवं प्रति रामस्य कृतज्ञतावर्णनं, सुग्रीवसेनायाश्चतुर्दिक्षु प्रस्थानवर्णनं, सम्पातेः प्रीतिवर्धनवर्णनं, जाम्ववता हनुमतः उत्पत्ति पराक्रमकथावर्णनं तथा हनूमतः वेगेन समुद्रलंङ्घनार्थं महेन्द्र पर्वतारोहणवर्णनं च विराजन्ते।

अथ पम्पासरोवर शोभां पश्यन् रामस्य मनोव्यथामनुभूय लक्ष्मणः पुनः रामं सान्त्वयामास। ततश्च ऋष्यमूकपर्वतं प्रति उभौ भ्रातरौ प्रस्थितौ। एतयोरागमनमवलोक्य सुग्रीवादयो भयाक्रान्ताः जाताः। तत्र हनूमता तेषां शङ्का निवारिता। हनूमाँश्च रामसमीपमागतवान्। समागते हनुमति लक्ष्मणः सीताहरणवृतान्तं वनगमनकथां च प्रतिपाद्य सुग्रीवस्य साहाय्यार्थमिच्छां प्रगटितवान्। हनूमांश्च रामलक्ष्मणावादाय सुग्रीवं-निकषा प्रतस्थे।

तत्र हनूमता राम सुग्रीवयोर्मैत्री सम्पादिता। सुग्रीवेण च गगनमार्गात् सीतया प्रक्षिप्तमाभूषणादिकं प्रदर्शितम्। तमवलोक्य रामः शोके निमग्नो जातः।

सुग्रीवश्च रामं विविध मनोहरवचनैः सुदृढ़ वाक्यैश्च प्रतिबोधितवान्। कार्यसिद्धेश्चाश्वासनं रामाय प्रददौ।

अनन्तरं सुग्रीवोऽपि निजव्यथाकथां श्रावितवान्। रामेण उभयोर्मध्ये वैरभावकारणं पृष्टं सुग्रीवेण च सर्वं विनिवेदितम्। सुग्रीवेण बालिनः महत्पराक्रमोऽपि वर्णितः। एतत् सन्दर्भे बालिनादुन्दुभिनामकदैत्यसंहार-वर्णनं तस्य शवं मतङ्गवने प्रक्षेपणं मतङ्गमुनेः शापप्रदानं च ज्ञापितं सुग्रीवेण।

वृत्तान्तमिमं श्रुत्वा दुन्दुभेरस्थि समूहः रामेण प्रक्षिप्तः। सुग्रीवस्य प्रार्थनया लीलयैव सप्तताल भेदनं कृतं राघवेण। रामाज्ञया च बालिना सह युद्धार्थं सुग्रीवः गतवान् तत्र बालिना आहतः सन् मतङ्गवनमागतः। पुनश्च रामः उभयोः भ्रात्रोर्मध्ये समानरुपतया भेदज्ञानार्थमेकां गजपुष्पी-लतां सुग्रीवग्रीवायां प्रदाय पुनर्युद्धार्थं प्रेषितवान्।

यथा—

गजपुष्पीमिमां फुल्लामुत्पाट्य शुभलक्षणाम्।
कुरुलक्ष्मण कण्ठेऽस्य सुग्रीवस्य महात्मनः ॥१२।३९

पुनः सुग्रीवो युद्धाय प्रतस्थे। बालिसुग्रीवयोर्मध्ये घोरतरो युद्धः समभूत्। तस्मिन्नेव काले रामवाणेन बाली भूमौ पपात। ततो वाली रामचन्द्राय उपालम्भं प्रददन् पृष्टवान् यत् 'कथमहं निरपराधस्त्वया निपातितः।'

रामचन्द्रः तस्यापराधान् विविच्य अनुजपत्नीहरणजन्यं महान्तं पापं दोषं च कथितवान्। बाली तमपराधं पापं च स्वीकृत्य क्षमायाचनापूर्वकं पुत्रस्य अङ्गदस्य रक्षार्थं निवेदितवान्। रामेणाश्वासितम्। अन्ते च महाबली बाली सुग्रीवाय-अङ्गदाय च गम्भीरमन्तिममुपदेशं प्रदाय प्राणान् तत्याज। बालिपत्नी तारा सकरुणं विलपन्ती उक्तवती।

यथा—

अस्थाने बालिनं हत्वा युध्यमानं परेण च,
न संतप्यसि काकुत्स्थ कृत्वा कर्म सुगर्हितम्
वैधव्यं शोक संतापं कृपणाकृपणा सती,
अदुःखोपचितापूर्वं वर्तयिष्याम्यनाथवत् ॥२०।१५।१६

प्रतिपद्यत्वमद्यैव राज्यमेषां वनौकसाम्,
मामप्यद्यैव गच्छन्तं विद्धि वैवस्वनं क्षयम्।
ममप्राणैः प्रियतरं पुत्रमिवौरसम्,
मयाहीनमहीनार्थं सर्वतः परिपालय ॥२२।५।९

ततो रामचन्द्रस्याज्ञया अङ्गदः स्वपितुर्दाह संस्कारादिकंविधाय जलाञ्जलिर्दत्तवान् अथ रामः सुग्रीवस्याभिषेक करणाय हनुमते अनुमतिं ददौ। तदनुसारं सुग्रीवस्यराज्याभिषेकम् अङ्गदस्य च यौवराज्याभिषेकं कारितवान् हनूमान्। सुग्रीवश्च राज्यशासने निमग्नोऽभत्।

यथा—

संस्कृत्य बालिनं तं नु विधिवत् प्लवगर्षभाः ।
आजग्मुरुदकं कर्तुं नदीं शुभजलां शिवाम् ॥२५।५१

वृत्तो वृत्तसम्पन्नमुदारबलविक्रमम्,
इममप्यङ्गदं वीरं यौवराज्येऽभिषेचय ।
सुसमृद्धां गुह्यां दिव्यां सुग्रीवो वानरर्षभः
प्रवृष्टो विधिवद् वीरः क्षिप्रंराज्येऽभिषिच्यताम् ॥२६।१०,१२

ततः पावसः समागतः। रामेण सविशेषं पावसऋतुवर्णनं सीता वियोगवर्णनं वर्णितम्। अथ समुपस्थितायां शरदृऋतौ रामः सुग्रीवसमीपं लक्ष्मणं प्रेषयामास। सलक्ष्मणः सुग्रीवः रामसन्निधावाजगाम स्व सैन्य-संयोजना विषये सूचितवान्। रामेण कृतज्ञमाज्ञापिता।

रामचन्द्राज्ञया चतुर्दिक्षु सीतान्वेषणाय वानरसैन्यान् प्रेषयामास। रामेण स्वकीयाङ्गुलीपकं परिचयार्थं प्रदाय समुद्रलङ्घनाय पराक्रमी हनूमान् समादिष्टः।

अत्र सुग्रीवो भूमण्डल भ्रमणवृत्तान्तं रामाय निवेदितवान्। पूर्वोत्तर-पश्चिमदिशाभ्यः निराशा वानरसेना प्रतिनिवृत्ता। किन्तुमध्ये गन्धमादनस्योत्साहप्रदानेन दक्षिणस्यां दिशिगता वानरसेना सोत्साहं पुनः सीतान्वेषणे संलग्नाः बभूवुः।

हनूमता चैकस्यां गुफायां स्थितां तापसीं स्वपरिचयः कथितः। सा च सर्वेभ्यो वानरेभ्यः फलमूलादिकं भोजनार्थं प्रायच्छत्। स्वयंप्रभानाम्नी सा तापसी हनूमन्तं समुद्रतटाय प्रस्थानार्थमादिष्टवती।

ततोऽङ्गदसहिता वानरसेना सागरतटं प्रतस्थे। मार्गे जटायुभ्रात्रा सम्पातिना साक्षात्कारो जातः। अङ्गदमुखात् जटायुबधंज्ञात्वा सम्पातिः शोकाभिभूतो जातः। ततश्च तेनैव बालिवधसमाचारेण सुग्रीवेण सह राम-मैत्री समाचारेण चावगतः सम्पातिः।

सम्पातिना स्वपुत्र सुपार्श्वमुखेन रावणेनापहृतसीतायाः साक्षात्कार-घटना च श्राविता। इत्थं च समग्रवानराः हनुमत्सहिताः समुद्रतटं प्राप्त-वन्तः। तत्र वृद्धेन ज्ञानिना जाम्ववता हनूमान् स्वोत्पत्तिकथां स्वकीय विशालबलकथां च श्रुतवान्।

तेनोत्साहितो हनूमान् समुद्रलङ्घनार्थं वेगेन महेन्द्र नामकं पर्वत मारूढः।

इत्थं हि सीतान्वेषणार्थं हनुमतः समुद्रलङ्घनार्थं प्रस्थानकथा प्रपूर्णा।

यथा—

"महासत्वो महातेजाः महाबलपराक्रमः।
लङ्घने प्लवने चैव भविष्यति मया समः॥
स त्वं केसरिणः पुत्रः क्षेत्रजो भीमविक्रमः,
मारुतस्यौरसः पुत्रः तेजसा चापितत्समः॥
उत्तिष्ठ हरिशार्दूल लङ्घयस्व महापर्णवं।
पराहि सर्वभूतानां हनूमन् या गतिस्तव॥
ततः कपीनामृषभेण चोदितः,
प्रतीतवेगः पवनात्मजः कपिः।
प्रहर्षयंस्तान् हरि वीरवाहिनीं,
चकार रूपं महदात्मनस्तदा॥

६६।१९,२९,३६,३८,

समाप्तमिदं किष्किन्धा काण्डम्

सुन्दरकाण्डम्

सारांशः--

अस्मिन् बाल्मीकिरामायणे सुन्दरकाण्डमिदं मणिमालायां सुमेरूवद्वर्तते। काण्डेस्मिन् हनूमतः समुद्रलङ्घन वर्णमं, समुद्रलङ्घनक्रमे मैनाक पर्वत मिलनवर्णनं, सुरसाबध वर्णनं, लङ्कापुरी शोभा वर्णनं, रावणान्तःपुर वर्णनं, तत्र नारीणां शोभा वर्णनं, अशोकवाटिकायां सीतादर्शन वार्तालाप वर्णनं, तत्राशोकवाटिका विध्वंसवर्णनं, रावणपुत्राक्षयकुमार बधवर्णनं, मेघनाद द्वारा ब्रह्मास्त्रेण हनूमतो बन्धनवर्णनं, रावणराजसभायां हनूमतः सम्वाद वर्णनं, हनूमतो लाङ्गूलेऽग्निदाह वर्णनं, लङ्कापुरी दहन वर्णनं, पुनः सीतया सह वार्तालाप वर्णनं, लङ्कातो हनूमतः परावर्तन वर्णनं, जाम्ववानङ्गदप्रभृतिभिः सह तत्रत्य वार्तालापवर्णनं, मधुवने मधुभक्षण वर्णनं, सुग्रीव सहित राम समीपमागमन वर्णनं, सीता-सन्देश कथन-वर्णनादिसुन्दरतमकथायुक्तमिदं काण्डं यथार्थतोऽन्वर्थ संज्ञात्मकं **'सुन्दर काण्डम्।'**

माहात्म्यम्—

श्रूयतो परम्परातो दृढधारणात्मकोऽयं विश्वासः यदस्य सुन्दरकाण्डस्य पाठेन सर्वार्थसिद्धिर्जायते। तस्य प्रतिदिनं विधिवत् सम्पूर्ण काण्डस्यैकाह पाठेन, सप्ताहपाठेन, नवाहपाठेन, त्रिसप्ताहपाठेन, एकाध्याय-पाठेन च विविध-सिद्धयो जायन्ते नात्र कश्चन सन्देहलवः। (**एतस्याः पंक्तेर्लेखकस्यापि नियमित सुन्दरकाण्ड पाठानुभवेनाप्येषोऽनुभूतोऽनुभवः।**)

कथामालाः—

प्रारम्भे एव हनूमता समुद्रलङ्घनं प्रारब्धम्। तत्र हनूमान् स्वकीय विशालरूपं क्रमशः प्रदर्श्य महद्गर्जनं चकार। मार्गे समुद्रस्थित स्वपितुर्मित्रेण मैनाकपर्वतेन सह वार्तालापं कृत्वा तेन प्रदत्त-सत्कारमादायाग्रे प्रचलितवान्।

ततश्चैका समुद्रमध्ये स्थिता सुरसा नाम्नी राक्षसी मिलिता, या च स्वमुखं व्यादाय हनूमन्तमुदरस्थं कर्त्तुं समुद्यता। तत्र यथा यथा सुरसा

मुखं व्यादितवती तथा तथा एव हनूमांश्च स्वशरीरं संवर्धयन् विशालःसञ्जातः। सहसा स्वशरीरं संक्षिप्य तस्याः मुखं प्रविश्य तां नमस्कृत्य सुरसाज्ञामादायाग्रे गन्तुमुद्यतो जातः। (सु० का० १।१'९-१७१)

तत्र लङ्का समीपमागत्य तत्र कथं प्रवेशो विधेय इति मनसि विचार्यातिलघुरूपं विधाय (विडाली रूपं धृत्वा) लङ्कां सायंकाले प्रविवेश। तत्र चन्द्रोदय शोभावर्णनमतीव मनोहरम्।

लङ्कां प्रविश्य तत्रत्य विस्मय विमुग्धकारिणीं शोभाँ दर्शं दर्शं हनूमांश्चकितो जातः। तेनैवरूपेण हनुमानन्तःपुरं प्रविश्य तस्याद्भुतां शोभां, तत्रायं नारीणां कामकेलि क्रीडायुतं दृश्यं च दृष्ट्वा सीतान्वेषणे संलग्नो जातः।

तत्र सीतामदृष्ट्वा हतोत्साहो हनूमांश्चिन्तयामास, यत् सीतामदृष्ट्वैव मम परावर्तनं स्यात् तर्हि रामस्य का स्थितिर्भवितेति कल्पनातीता।[1]

गत्वा तु यदि काकुत्स्थं वक्ष्यामि परुषं वचः।
न दृष्टेति मया सीता ततस्त्यक्ष्यति जीवितम्॥
परुषं दारुणं तीक्ष्णं क्रूरमिन्द्रियतापनम्।
सीतानिमित्तं दुर्वाक्यं श्रुत्वा स न भविष्यति॥ १३।२३-२४

इति विचिन्तयन् हनूमान् अशोक वाटिकां प्रविवेश। तत्रत्य शोभां पश्यन् कस्मिंश्चिद्वृक्षे स्थितः सन् सीतानुसन्धाने दत्तचित्तः कस्मिंश्चित् चैत्यप्रासाद (मन्दिर) मारूह्य दयनीय दशायुक्तां सीतां ददर्श। तथा विधां सीतां च दृष्ट्वा शोकमग्नश्च जातः।

तदनन्तरं रावणः स्त्रीभिः परिवृतः सन् तत्रोपस्थितः। रावणस्तत्र सीतायै विविध प्रलोभनं दत्वा रामस्य नगण्यतां प्रतिपादितवान्। इत्थं ब्रुवन् रावणः सीतायै विचारार्थं मासद्वयस्य समयं प्रदाय प्रस्थितवान् कथितवांश्च यत् मासद्वयानन्तरमहं त्वां हनिष्यामि।[2]

कामये त्वां विशालाक्षि बहु मन्यस्व मां प्रिये।
सर्वाङ्गगुणसम्पन्ने सर्वलोकमनोहरे॥ २०।३
स्वधर्मो रक्षसां भीरू सर्वदैव न संशयः।
गमनं वा परस्त्रीणां हरणं सम्प्रमथ्य वा॥ २०।५

---

१. विशेष द्रष्टव्य सु० का० १३।३-६९

२. विशेष द्रष्टव्य—सु० का० २०।२,३६; एवं २२।२-६, ८-९, ३१

एवं चैवमकामां त्वां न च स्प्रक्ष्यामि मैथिलि ।
कामं कामः शरीरे मे यथाकामं प्रवर्तताम् ॥ २०।६

अन्तःपुरनिवासिन्यः स्त्रियः सर्वगुणान्विताः ।
यावत्यो मम सर्वासामैश्वर्यं कुरु जानकि ॥ २०।३१

न रामस्तपसा देवि न बलेन च विक्रमैः ।
न धनेन मया तुल्यस्तेजसा यशसापि वा ॥ २०।३४

कुसुमिततरुजालसंततानि भ्रमरयुतानि समुद्रतीरजानि ।
कनकविमलहारभूषिताङ्गी विहर मया सह भीरु काननानि ॥
२०।२६

द्वौ मासौ रक्षितव्यौ मे योऽवधिस्ते मया कृतः ।
ततः शयनमारोह मम त्वं वरवर्णिनि ॥ २२।८

द्वाभ्यामूर्ध्वं तु मासाभ्यां भर्तारं मामनिच्छतीम् ।
मम त्वां प्रातराशार्थे सूदाश्छेत्स्यन्ति खण्डशः ॥ २२।९

सीता च तत्र करुणं विलपन्ती आसीत् । ततश्च त्रिजटा नाम्नी एका राक्षसी स्वप्ने राक्षसविनाश राघवेन्द्र विजयं च दृष्टवती । सीताऽपि शुभ शकुनं ददर्श । त्रिजटा च तां शुभसूचनां सूचितवती ।[1]

ततश्च हनूमान् सीतां रामकथां श्रावितवान् ।[2] सीता तर्क-वितर्कं कृतवती ।[3] हनूमांश्च रामचन्द्रस्याङ्गप्रत्यङ्ग वर्णनेन सह गुणसमूहानां वर्णनं कृतवान् ।[4]

इत्थं वर्णयन् मारुतिः सीतायै रामनामाङ्कितं रामस्याङ्गुलीयकं प्रददौ ! तथा च विश्वासार्थं सीताऽपि चित्रकूट पर्वते काकस्य दुर्व्यवहार वर्णनं[5] श्रावितवती परिचयार्थं स्वकीय चूडामणिं च ददौ ।[6]

तदनन्तरं हनुमान् अशोकवाटिकां विध्वंसितवान् तच्छ्रुत्वा रावणं किङ्करादि राक्षसान् प्रेषितवान् हनूमता ते निहताः । प्रहस्त पुत्रं जम्बुमालिनं मन्त्रिणः सप्तपुत्रान्, रावणस्यपञ्च सेनापतीन् पुत्रमक्षय कुमारं च हनूमान् यमलोकातिथिं कारितवान् ।

---

१. द्रष्टव्य—सु० का० २७:६, ९-४०

२. सु० का० ३१।।२-१६ ३. सु० का० ३२।४-१४

४. सु० का० ३५।८-२१ ५. सु० का० ३८।१२-३६ ६. ३८।६६

एतच्छ्रुत्वा रावणश्चिन्तितः क्रुद्धः सन् स्व ज्येष्ठ पुत्रमिन्द्रजितं (मेघनादं) सर्वं द्रष्टुं प्रेषितवान्। तत्र मेघनादेन सह लोमहर्षको युद्धः सञ्जातः। उभयोर्युद्धं दृष्ट्वा सर्वै देवाः किन्नरादयश्च चकिताः। अन्ते च मेघनादस्य ब्रह्मास्त्रप्रहारेण हनूमानाबद्धो जातः। यतो हि हनूमान् ब्रह्मास्त्रस्यावहेलनायामुद्यतो नाभूत्, सत्यपि तत्करणे क्षमत्वे।

हनूमन्तमाबद्धं कृत्वा मेघनादेन रावण सभायामानीतो हनूमान्। रावणस्य प्रभावशालिनं रूपं दृष्ट्वा हनूमांश्चिन्तितोऽभूत्। रावण पार्षदेन पृष्टो हनूमान् लङ्कागमन कारणं राम दूतत्वेन स्वकीयः परिचयश्च प्रदत्तः।

तत्रैव रावण सभायां राम प्रभाव वर्णनमपि कृतमञ्जनीपुत्रेण। ततश्च रावणः हनूमतो बधार्थमादेशं दत्तवान्। तच्छ्रुत्वा विभीषणोऽवादीत् यत् दूतबधो निषिद्धः शास्त्रेण। अतएव वैरूप्यादिकं कमप्यन्य-दण्डः देयः।

क्षमस्व रोषं त्यज राक्षसेन्द्र प्रसीद मे वाक्यमिदं शृणुष्व।
वधं न कुर्वन्ति परावरज्ञा दूतस्य सन्तो वसुधाधिपेन्द्राः ॥५२।५

गृह्यन्ते यदि रोषेण त्वादृशोऽपि विचक्षणाः।
ततः शास्त्रविपश्चित्वं श्रमएव हि केवलम् ॥ ५२।८

तस्मात् प्रसीद शत्रुघ्न राक्षसेन्द्र दुरासद।
युक्तायुक्तं विनिश्चित्य दूतदण्डोविधीयताम् ॥ ५२।९

वैरूप्यमङ्गेषु कशाभिघातो मौण्ड्यं तथा लक्षणसंनिपातः।
एतान् हि दूते प्रवदन्ति दण्डान् वधस्तु दूतस्य न नः श्रुतोऽस्ति[1] ॥५२।१५

नीतिवचनमिदं श्रुत्वा हनूमतो लाङ्गूलेऽग्निदाहो विधेयोऽनेनाङ्गभङ्गः सन्, दूतोऽयं रामसमीपं गच्छतु। एवमेव कृतं सर्वैः राक्षसैर्मिलित्वा। तथा च हनूमन्तं लङ्कानगरे भ्रामयामासुश्चते।

आज्ञापयद् राक्षसेन्द्रः पुरं सर्वं सचत्वरम्।
लाङ्गूलेन प्रदीप्तेन रक्षोभिः परिणीयताम् ॥ ५३।५

सहसैव हनूमान् पर्वताकारः सञ्जातः तस्य लङ्गूलं च वर्द्धितम्। ततश्च स प्रासादात् प्रासादमुत्प्लुत्य महतीं स्वर्णमयीं लङ्कां भस्मतात् कृतवान्।

---

१. विशेष द्रष्टव्य—५२।५-९, एवं १३-२७।

ततश्च सीतार्थं हनुमांश्चिन्तयामास। त्वरितमेव चिन्तानिवारिता जाता यत् यस्याः सीतायाः पातिव्रत्यप्रभावेण, रामप्रभावेण च समस्ता लङ्का प्रदग्धा नाहमल्पीयानपि दग्धः सीता कथं दग्धा भवितुमर्हति।

विनष्टा जानकी व्यक्तं न ह्यदग्धः प्रदृश्यते।
लङ्कायाः कश्चिदुद्देशः सर्वा भस्मीकृता पुरी॥ ५५।११

यद् वा दहनकर्मायं सर्वत्र प्रभुरव्ययः।
न मे दहति लाङ्गूलं कथमार्यां प्रधक्ष्यति॥ ५५।२७

तपसा सत्यवाक्येन अनन्यत्वाच्च भर्तरि।
असौ विनिर्दहेदग्निं न तामग्निः प्रधक्ष्यति॥ ५५।२८

एवं हि पुनः हनूमान् अशोक वाटिकामागत्य सीता दर्शनं कृत्वा समुद्रमुल्लङ्घ्य पारे समुद्रं जाम्बवानङ्गदादिसमीपमुपस्थाय सर्वैर्मिलितवान्।

ततो जाम्ववता पृष्टो हनूमान् सविस्तरं समुद्रलङ्घन वर्णनं लङ्का प्रवेशतो लङ्का दहन वृत्तान्तं वर्णितवान्। एतत्क्रमे महापराक्रमी वायुपुत्रोऽब्रवीत्—

सा प्रकृत्यैव तन्वङ्गी तद्वियोगाच्च कर्शिता।
प्रतिपत्पाठशीलस्य विद्येव तनुतां गता॥ ५९।३१

एवमास्ते महाभागा सीता शोकपरायणा।
यदत्र प्रतिकर्तव्यं तत् सर्वमुपकल्प्यताम्॥ ५९।३२

तदनन्तरं हनूमान् लङ्का विजयार्थमुत्साहितवान्। तत्राङ्गदेनोक्त यदहमेक एव लङ्का विनाशे रावणवधे सीता समानयने च पर्याप्तोऽस्मि। नान्येषां किमपि प्रयोजनम्।

अहमेकोऽपि पर्याप्तः सराक्षसगणां पुरीम्॥ ६०।५
तां लङ्कां तरसा हन्तुं रावणं च महाबलम्।...॥ ६०।६

तत्र जाम्बवता प्रतिषिद्धास्ते वीर वानराः निश्चिताः यत् राम सुग्रीव समीप गमनमेव वरम्।

अथ च सर्वेऽङ्गदप्रभृतयो मधुवनं प्रविश्य यथेच्छं मधूनि भुक्तवन्तः। मधुवन रक्षकेन दधिमुखेन निवारितास्ते तत्रत्य रक्षकान् ताडयामासुः। दधिमुखस्तदा सुग्रीवसमीपमागत्य सर्वं निवेदितवान्। सुग्रीवः प्रसन्नता–

पूर्णानां तेषामाचरणं विज्ञाय दधिमुखायादेशं ददौ यत् त्वरितमेव तत्र परावर्त्य तान् सस्नेहं सादरं चात्र प्रेषय।

इत्याज्ञामादाय त्वरितमेव दधिमुखो मधुवनमागत्य स्वेच्छानुसारं मधु भक्षणार्थं विनिवेद्य सुग्रीव समीपं शीघ्र गमनार्थं निवेदितवान्। ततश्चाङ्गद प्रमुखाः सर्वे वानरादयः सुग्रीवादि सहितं रामं निकषा समाजग्मुः। तान् दृष्टवा रामः सुप्रसन्नो भूत्वा सीता वृत्तान्तं पृष्टवान्।

हनूमांश्च सर्वप्रथमं सीता प्रदत्त चूडामणिं रामस्य करकमले समर्प्य सीतावृत्तान्तं चित्रकूटे काक-जयन्त कथामपि कथितवान्।

सर्वं श्रुत्वा ज्ञात्वा च रामः शोक सागरेः निमग्नो जातः। कियत्कालान्तरं स्थिरचित्तः सन् लङ्का विजय यात्रार्थं ससैन्यं सुग्रीवमादिष्टवान्।

इत्थमतिसंक्षिप्त रूपेण सुन्दरकाण्ड कथासारांशो मङ्गलाय भूयात्।



युद्धकाण्डम्

सारांशः—

अस्मिन् बाल्मीकि रामायणे सप्तसु काण्डेषु युद्धकाण्डमेवदीर्घतरं विद्यते। काण्डेऽस्मिन् रामरावणयोर्भयङ्कर युद्ध वर्णन क्रमे उभय पक्षे युद्ध-व्यवस्था वर्णनेन रणनीति, सेनापति-नियुक्ति प्रभृति विस्तृत वर्णनेन च परिपूरितमिदं काण्डम्। उभय पक्षस्य पराक्रम वर्णनेन सह शतशः प्रमुख राक्षस सैन्यानां नामानि तेषां पराजय बध कथादयो वर्तन्ते। फलतः प्रमुख घटना वर्णनं सुस्पष्ट रीत्या संक्षिप्त विवरणमत्रोल्लिखितम्।

कथामाला:

सर्वप्रथमं श्रीरामचन्द्रः हनूमतो गुणवर्णनं विधाय पारे समुद्रं गन्तुं चिन्तितो जातः। सुग्रीवेण समुत्साहितम्। हनूमता च तत्रत्य दुर्ग, अर्गला, विशाल कपाट महत्सैन्य समूहादिकस्य परिचयः प्रदत्तस्तथा च सेनया सह शीघ्र प्रस्थानस्य प्रार्थना च कृता।

ततो रामचन्द्रः वानर सैन्यैः सह समुद्र तटमाययौ तत्र सैन्य शिविरं च स्थापितवान्। तत्र लङ्कायां रावणोऽपि स्वमन्त्रिभिः पार्षदैश्च साकं कर्तव्य निर्धारण विषये परिचर्चां विमर्शं च कृतवान्। सभायां सर्वे राक्षस-सेना-पतयः रावणस्य मेघनादस्य च पराक्रमं वर्णयन्तः राम विजयस्य विश्वासं प्रकटितवन्तः।

तस्यां परिषदि रावणानुजो धर्म-नीति शास्त्रवेत्ता विभीषणः रामस्या-पराजेयतां प्रदर्श्य सीता प्रत्यावनार्थं प्रार्थितवान्। विभीषणो रावणस्यान्तः पुरमपि प्रविश्य-भावि दुर्घटनायाः शङ्कामाशङ्कितवान्।

तत्रेन्द्रजिता मेघनादेन विभीषणस्योपहासः कृतः। रावणेन विभीषणः तिरस्कृतश्च।

ततश्च विभीषणः रामस्य शरणमागतवान्। रामश्च स्वस्य शरणागत रक्षाव्रतमाभाष्य विभीषणाय शरणं ददौ। विभीषणश्च राम चरणस्य शपथमादाय रावणविनाशाय स्वकीय सेवा प्रदानस्य प्रतिज्ञां कृतवान्। रामोऽपि तत्रैव विभीषणस्य लङ्काधिपति रूपे राज्याभिषेकं कृतवान्। तस्य परामर्शेन च समुद्र तटे उपविवेश।

तत्र लङ्कायामपि शुकनामनं राक्षसं गुप्त दूतरूपेण सुग्रीव समीपं प्रेषयामास। सुग्रीवेण रावणप्रस्तावः तिरस्कृतः।

अत्र समुद्र तटे कुशासनमुपविश्य दिनत्रय पर्यन्तं निराहारो रामः समुद्र प्रार्थनां कृतवान्, किन्तु समुद्रोनागतः। ततः कुपितो रामः समुद्र शोषणार्थमाज्ञां प्रदत्तवान्। स्वयमपि धनुर्बाणं गृहीतवान्।

भयभीतश्च समुद्रस्तत्रोपस्थितोऽभूत्।
न दर्शयति साम्ना मे सागरो रूपमात्मनः॥ २१।२१
चापमानय सौमित्रे शरांश्चाशीविषोपमान्।
समद्रं शोषयिष्यामि पद्भ्यांयान्तुप्लवंगमाः॥ २१।२२
ब्राह्मेणास्त्रेण संयोज्य ब्रह्मदण्डनिभं शरम्।
संयोज्य धनुषि श्रेष्ठे विचकर्ष महाबलः॥ २२।५
ततो मध्यात् समुद्रस्य सागरः स्वयमुत्थितः।
उदयाद्रिमहाशैलान्मेरोरिव दिवाकरः॥ २२।१७

समुद्रोक्त रीत्या वानर-सैन्य मध्ये स्थितनलनील द्वारा शतयोजन विस्तीर्णे सागरे सेतु निर्माणं सुसम्पन्नम्। तेन पथा सर्वे वानरसेनादयः सेनापत्यादयश्च लङ्का समीपमाजग्मुस्तत्र शिविरं च विनिर्मितवन्तः।

तत्र रावणोऽपि गुप्तचर द्वारा वानर सैन्य बलानां प्रमुख वीर वानराणां च परिचयं प्राप्तवान्। एवं रूपेणोभय पक्षे भीषण युद्धस्य पूर्वव्यवस्थाः संजाताः। मध्ये च छल छद्मोपायश्च विहिताः।

तत्र लङ्कायां मायावी रावणः मायारूपिणः रामस्य छिन्न शिरसं सीता समीपं सम्प्रेष्य सीतामुद्वेजितवान्। सीता च सकरूणं विललाप। रावणोऽपि युद्धयोजनायां संलग्नोऽभूत्।

एतन्मध्ये 'सरमा' नाम्नी राक्षसी सीता समीपमशोकवाटिकामागत्य रावणस्य मायामय रामशिरः प्रसङ्गे सर्वं श्रावितवती तथा च लङ्का समीपं बानरसैन्यैः सह रामस्यागमन समाचारं युद्धे तस्य भावि विजयस्य च कथां कथितवती।

रावणसभायां माल्यवान् रामेण साकं सन्धि प्रस्तावार्थं रावणमुपदिदेश। रावणः तं तिरश्चकार।

अत्र रामशिविरे विभीषणेन रावणस्य दुर्गं रक्षोपायाः वर्णिताः। रामश्च सैन्य बलैः सह सुबेल पर्वतमारूह्य लङ्कापुर्याः निरीक्षणं चकार।

मध्ये च सहसा सुग्रीवः सुबेल पर्वतादेवोत्प्लुत्य लङ्कामाययौ। तत्रागत्य रावणेन सह मल्लयुद्धं चकार। अन्ते च मायावेगेन वानरसेना मध्ये पुनरागतवान्।

तदनन्तरं वानर सैन्य समूहाः लङ्कायाः चतुर्दुर्गेषु समागत्य तानभेद्य दुर्गान् परिवेष्टितवन्तः। तत्र लङ्कापुरोमाक्रम्य राक्षसैः सह महान् युद्धः प्रारब्धः सैन्येन। एतस्मिन् द्वन्द्व युद्धे वानरः सैन्यैर्बहवो राक्षसाः निहताः।

मध्य रात्रौ भयङ्करः युद्धेऽङ्गदेन मेघनादः पराजितः। स चेन्द्रजिन्मेघनादः माययाऽदृश्यो भूत्वा नागपाशैः रामं लक्ष्मणं ववन्ध। तस्य बाणैः रामलक्ष्मणौ मूर्च्छितो जातौ। वानरमध्ये शोको व्याप्तः। सर्वे वानर सैन्याः राम लक्ष्मण रक्षायां निमग्नाः।

अत्र लङ्कायां प्रसन्नताधारा प्रवाहिता। रावणाज्ञया राक्षस्यः पुष्पक विमानेन सीतां रणभूमिमानीय मूर्च्छितं रामलक्ष्मणं दर्शितवत्यः। सीता शोक सागरे निमग्ना बभूव।

भर्तारमनवद्याङ्गी लक्ष्मणं चासितेक्षणा।
प्रेक्ष्य पांसुषु चेष्टन्तौ रूरोद जनकात्मजा॥४७।२३

तत्र त्रिजटा सीतां प्रबोध्य राम लक्ष्मणयोः पुनः मूर्च्छा मुक्तेराश्वासनं प्रदाय च सीतया सह लङ्कामाजगाम।

अत्र च राम मूर्च्छा मुक्तः सचेतो जातः। लक्ष्मणं मृतप्रायं दृष्ट्वा विललाप। तत्र सहसा गरूडः समागत्य नागपाशान् विभेदितवान्। रामलक्ष्मणौ नागपाशान्मुक्तौ बभूवतुः।

रामस्य वन्धनमुक्तेः समाचारं प्राप्य रावणः बलशालिनं धूम्राक्षं युद्धे प्रेषितवान् हनूमता धूम्राक्षो हतः। ततो वज्रदंष्ट्रा प्रभृतयो राक्षस सैनिकाः समागत्य घोर युद्धं चक्रुः। सर्वे ते अङ्गदेन वानर सैन्येन च निहताः।

ततश्च प्रहस्तादयश्च विशाल सैन्य बलैर्युक्त समुपस्थिता। ते च क्रमशः हनुमताः नीलेन वानर सैन्यैन च पराजिताः यमपुरीं गताश्च। स्वसैन्य पराजयेन व्यथितो रावणः सुप्तं कुम्भकर्णं जागरितवान्। कुम्भकर्णश्च रावण भवनं प्रविश्य कुकृत्याय रावण भर्त्सयामास। किन्तु युद्धाय कृत निश्चययश्चोत्साहमपि तस्मै प्रदत्तवान्। ततश्च राम कुम्भकर्णयोर्मध्ये लोमहर्षको युद्धो जातः। तत्र श्रीरामचन्द्रेण स महावलशाली कुम्भकर्णः निहतः। एतत् समाचारमवगत्य रावणश्चिरं विललाप।

ततश्चेन्द्रजिन्मेघनादेन सह घोरतर युद्धो बभूव। इन्द्रजितो ब्रह्मास्त्र प्रयोगेण लक्ष्मणो मूर्च्छितो बभूव। ततश्च जाम्ववता समादिष्टो हनूमान् हिमालयात् सञ्जीवन औषधीनानीतवान्। तेनौषधिघ्राणेन लक्ष्मणो मूर्च्छा-रहितो जातः।

अतः पुनः वानर सैन्येन सह युद्धे शोणिताक्ष, यूपाक्ष, मकराक्ष प्रभृति राक्षसाः यमलोकं गताः।

मध्ये चेन्द्रजित् मायामयीं सीतां हत्वा तां प्रदर्शितवान्। सीतां-मृतां ज्ञात्वा रामः पुनः विललाप। तदा विभीषणेन तस्य मायारहस्यमुद्घाटित-वान्। ततो रामः स्थिरोजातः। ततश्चेन्द्रजित् निकुम्भिला-कालिका मन्दिरमुपस्थाय विजयार्थं हवनं चकार। विभीषणानुरोधेन ससैन्यो लक्ष्मणः लङ्का नगरी समीपस्थ निकुम्भिला–कालिका मन्दिर समीपमागत्य इन्द्र-जितं युद्धायाहूतवान्। विभीषणेन्द्रजिन्मध्ये, लक्ष्मणेन्द्रजिन्मध्ये च परस्परं रोषपूर्णो वार्तालापो जातः। ततश्च लोमहर्षको युद्धः प्रारब्धः। लक्ष्मणेन तस्य सारथिः हनूमता च तस्याश्वो निहतः। इन्द्रजिता च लक्ष्मणः आहतः। आहतो लक्ष्मणः सुषेण वैद्य द्वारा चिकित्सया संज्ञा प्राप्ता। लक्ष्मण प्रहारेणेन्द्रजिन्मेधनादो रणभूमौ पपात मृतश्च।

तदा रावणः इन्द्रजित् पराजयमरणवार्तां विज्ञाय शोक सागरे निमग्नो जातः। सहसोत्थाय सीता बधार्थमुद्यतः सुपार्श्वेन पार्षदेन निषिद्धः प्रतिनिवृत्तः।

तदनन्तरं युद्धस्यान्तिम चरणे रामचन्द्र द्वारा रावण सैन्य बधोऽङ्गद द्वारा महापार्श्वस्य संहारः संजातः।

तदा राम रावणयोर्महान् संहारकारी युद्धः प्रारभत। रावण शक्ति प्रहारेण लक्ष्मणः पुनर्मूच्छितो जातः। हनूमतानीतेनौषधिना सुषेण चिकित्सया लक्ष्मणः पुनश्चेतनां प्राप्तवान्।

मध्ये चागस्त्य ऋषिरागत्य रावण विजयार्थमादित्यहृदयस्तोत्रस्य पाठार्थमादिदेश।

राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम्।
येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसे ॥१०५।३

(सम्पूर्णादित्य हृदय स्तोत्रमस्मिन् १०५ सर्गेऽस्ति।)

आदित्य हृदय स्तोत्रम्

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वसत्रुविनाशनम् ।
जयावहं जपं नित्यमक्षयं परमं शिवम् ॥

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।
चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ॥

रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम् ।
पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ॥

सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः ।
एष देवासुरगणाँल्लोकान् पाति गभस्तिभिः ॥

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः ।
महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपां पतिः ॥

पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरूतो मनुः ।
वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः ॥

आदित्य सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान् ।
सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः ॥

हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिमरीचिमान् ।
तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोऽशुमान् ॥

हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः ।
अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः ॥

व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुःसामपारगः ।
घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवंगमः ॥

आतपी मण्डली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः ।
कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः ॥

नक्षत्रग्रहतारणामधिपो विश्वभावनः ।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तुते ॥

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः ।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः ॥

जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः ।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः ॥

नमः उग्राय वीराय सारङ्गाय नमो नमः ।
नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ॥

ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे ।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥

तमोघ्नाय हिमाघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने ।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥

तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे ।
नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रूचये लोकसाक्षिणे ॥

नाशयत्येष वै भूतं तमेव सृजति प्रभुः ।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः ॥

एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः ।
एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ॥

देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च ।
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ॥

एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च ।
कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव ॥

पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम् ।
एतत् त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यति ॥

अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि ।
एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥

(यु. का. १०५।४-२७)

अनन्तरं राम रावणयोर्विनाशकारिणि महद्युद्धे रामेण रावणः हतः । सम्पूर्ण लङ्कायां शोक सागरोद्वेलियः । इत्थं हि युद्धस्यास्य पटाक्षेपो जातः ।

रावण बधं ज्ञात्वा विभीषणः, मन्दोदरी तथाऽन्याः रावणस्त्रियश्च विललेपुः । रामचन्द्रेण विभीषणं प्रतिबोध्य रावणस्यान्तिम स ंस्काराया-देशोदत्तः ।

तदनन्तरं विभीषणस्य राज्यभिषेकं कृत्वा हनूमन्तं सीता समीपं प्रेषितवान्। विभीषणश्च अशोक वाटिका स्थितां सीतामानयनार्थं ययौ। सीता तत्रागत्य रामचन्द्र मुखं दृष्ट्वा नितरांप्रसन्नतां ययौ।

तदा श्रीरामः सीता ग्रहणार्थं तत्परो न जातः, तथा च सीतामन्यत्र गमनार्थमुवाच। तदासीताऽब्रवीत्, रावण शरीरे स्पर्शे तु मम विवशता आसीत्, किन्तु मम मनः आत्मा च सदा तव समीपमेवासीत् अस्ति च। ततश्च सीता सर्वेषां सन्निधौ प्रज्वलिताग्नौ स्वपातिव्रत्य परीक्षार्थं प्रविवेश।[1]

यथा मे हृदयं नित्यं नापसर्पति राघवात्।
तथा लोकस्य साक्षी मां सर्वतः पातु पावकः॥ ११६।२५
एवमुक्त्वा तु वैदेही परिक्रम्य हुताशनम्।
विवेश ज्वलनं दीप्तं निःशङ्केनान्तरात्मना॥ ११६।२९

अथ सर्वे देवगणाः राम समीपमुपस्थिता जाताः। स्वयमग्निदेवः सर्वाङ्ग सुन्दरी सीतां स्वाङ्के नीत्वा समुपस्थितस्तथा निर्दुष्टां पतिव्रतां सीतां रामाय समर्पितवान्।

अङ्केनादाय वैदेहीमुत्पपात विभावसुः॥ १२८।१
विधूयाथ चितां तां तु वैदेहीं हव्यवाहनः
उत्तस्थौ मूर्तिमानाशु गृहीत्वा जनकात्मजाम्॥ १२८।२
ददौ रामाय वैदेहीमङ्के कृत्वा विभावसुः॥ १२८।४

ततो महादेवस्याज्ञया विमान द्वारा स्वर्गात् समागतं दशरथं रामलक्ष्मणौ नेमतुः। समुपस्थिताः सर्वे प्रणामं चक्रुः। दशरथश्च सीतारामक्ष्मणेभ्यो यथायोग्यं सन्देशं प्रदाय पुनरिन्द्रलोकं प्रत्यायौ।

(इयं कथाऽत्र सविशेषमाकर्षणं करोति)

श्री रामस्यानुरोधेन इन्द्रः मृतवानरान् पुनरुज्जीवितवान्।

ततो विभीषणाज्ञया पुष्पक विमानमागतम्। तेन विभीषण सुग्रीवादि सहितः सीतालक्ष्मणयुतो रामचन्द्रोऽयोध्यां प्रस्थितवान्। सर्व सैन्याश्चाकाश मार्गेण परावर्तितवन्तः।

मार्गे रामचन्द्रः सीतां तत्तत् स्थानं दर्शयन् पुष्पकविमानादवतीर्य

---

१. विशेष द्रष्टव्य—यु. का. ११६।२४-२९

भरद्वजाश्रममागत्य वरं संप्राप्य हनूमांश्च निषादराजं गुहं सूचितवान्। हनूमांश्चाकाश मार्गेण नन्दिग्राममागत्य रामांगमन सूचनां भरताय ददौ, सर्वे आनन्दाब्धौ निमग्नाः। रामागमन समाचारं श्रुत्वा सर्वा मातरः 'पौरवासिनश्च नन्दिग्राममागत्य सुस्वागतं चक्रुः।

सर्वें पुनरयोध्यामागतवन्तस्तथा भरतः रामराज्यं प्रत्यर्पितवान्। रामश्च नगरभ्रमणं कृत्वा वानरांन् प्रत्यावर्तितवान्। केवलं हनूमत् प्रभृतयऽ केचन एवायोध्यायां स्थिताः।

एवं क्रमेण युद्धकाण्डस्य विशाला विस्तृता च कथाऽतिसंक्षिप्तं नैवात्रोल्लिखिता। एतेनानाति विस्तृत वर्णनेन **गद्यमयी रामकथा सर्वेषां-मङ्गलाय भवतात्।**



उत्तरकाण्डम्

सारांशः—

अन्तिमेऽस्मिन् काण्डे राम सभायां ऋषिगणानामागमनं तैः साकं राज्ञो रामचन्द्रस्य वार्तालाप वर्णनं विद्यते । तदनन्तरं मध्येऽगस्त्येन पुलस्त्यस्य तपो वर्णन पुलस्त्य पुत्र वैश्रवसो जन्मकथा वर्णन, तस्य लङ्का निवास वर्णनं, समग्र राक्षस रावण वंशोत्पत्ति वर्णन, रावण द्वाराऽत्याचार वर्णनं, देवैः सह तस्य युद्ध वर्णनं, देवानां विष्णु सहायाय्यार्थ प्रार्थना वर्णनं, हनूमतो जन्मकथा वर्णनादिकं च विद्यन्ते । इमाः कथाः उत्तर काण्डस्य द्वितीय सर्गतः षट्त्रिशत् संर्ग पर्यन्तं सविस्तरं सन्ति ।

अस्याः कथायाः सारांशः विस्तार भयेन नात्रोद्धृताः यतोहि पूर्वस्यां कथःयामेव यथा कथाञ्चिदेतेषां वर्णनं समाविष्टमेव । फलतः सप्तत्रिशत् सर्गतोऽन्तिम सर्ग पर्यन्तं सभायां विविध जनानां ऋषीणां गमनागमन वर्णनमारभ्य रामस्य महायात्रा वर्णन पर्यन्तं संक्षिप्त रूपेण कथा सारांशोऽत्र विनिवेशितः ।

कथामालाः—

अथ राम सभायां ऋषीणामागमनं तैः साकं वार्तालापः राम द्वारा विभिन्न जिज्ञासायाः समाधानं वर्तते । तन्मध्ये समासदैः पार्षदैश्च सह राज्य शासन प्रसंगे रामचन्द्रः परामर्श कृतवान् ।

ततश्च राज्याभिषेकसमये समागतानां राजाजनक प्रभृतीनां नरेशानां ससम्मानं प्रस्थानं जातम् । तैः भूपतिभिः प्रदत्तोपहारादिकं वानर सैन्येभ्यो रामेण वितरितम् ।

सीता च गर्भिणी जाता तया सहोपवने रामस्य विहार काले सीता च तपोवन दर्शनार्थमिच्छा प्रकटितवती । रामेणाज्ञा प्रदत्ता ।

मध्येचैकेन भद्रनाम्नो गुप्तचरेण सीता प्रसंगे पुरवासिनामालोचना सूचिता । रामश्च सर्वान् भ्रातृंनाहूय तैः सह विमर्शं चकार । तथा च लक्ष्मणमादिष्टवान् यत् 'सीतां तत्र तपोवने निःक्षिप्यागच्छ" । लक्ष्मणश्च

राजाज्ञया सीतामादाय रथमुपविश्य नौकया गङ्गापारं गत्वा तपोवने सीतां त्यजन् व्यथितो भूत्वा रामस्याज्ञां श्रावितवान्।

मर्माहतता सीता रूदती रामाय सन्देशं प्रेषितवती। स सन्देशः हृदय द्रावकः नीतिपूर्णश्च।

श्वश्रूणामविशेषेण प्राञ्जलिप्रग्रहेण च ।
शिरसा वन्द्य चरणौ कुशलं ब्रूहि पार्थिवम् ॥ ४८।१०

जानासि च यथा शुद्धा सीता तत्त्वेन राघव ।
भक्त्या च परया युक्ता हिता च तव नित्यशः ॥ ४८।१२

यथापवादं पौराणां तथैव रघुनन्दन ।
पतिर्हि देवता नार्याः पतिर्बन्धुः पतिर्गुरूः ॥ ४८।१७

प्राणैरपि प्रियं तस्माद् भर्तुः कार्यं विशेषतः ।
इति मद्वचनाद् रामो वक्तव्यो मम संग्रह ॥ ४८।१८

मार्गे लक्ष्मणः सुमन्त्रेण सह वार्तालाप क्रमे भृगु ऋषेः शाप-वर्णनं ज्ञात्वा शान्तो बभूव। अयोध्यामागत्य रामाय सन्देशं निवेदितवान्।

ततश्च ऋषिणा लवणासुरस्योपद्रवं ज्ञात्वा तद्वधार्य शत्रुघ्नमादिदेश। शत्रुघ्नश्च लवणासुरं जघान। मध्ये चैकेन ब्राह्मणेन राम सभायां मृतपुत्रः समानीतः। तत्र कस्यचिदेकस्य शूद्रस्याधर्माचरण कारणेन ब्राह्मण पुत्रो मृतः इति महर्षिणा नारदेनोक्तम्।

रामश्च तत्रागत्य शम्बूक नामानं शूद्रतपस्विनं जघान। ते देवाः ऋषयश्च सन्तुष्टाः जाताः।

तत्र तपोवने शिष्येण सीता वनवास समाचारं श्रुत्वा महर्षि बाल्मीकिः समागत्य सीतां स्वाश्रमं नीतवान्। तत्रैव सीता सुतद्वयं प्रसूतवती। महर्षिणा तयोर्लालन पालनादिकं कृत्वा शास्त्रीय विधिना नामकरण मुण्डनादि संस्कारं च विधाय रामकथामुपदिदेश। कुश लव नामानौ तौ बालकौ महान्तौ प्रतिभाशालिनौ जातौ।

अत्रायोध्यायां रामचन्द्राज्ञयाऽश्वमेधयज्ञ समायोजनं जातम्। तस्मिन्नेव यज्ञ स्थले महर्षि बाल्मीकिः ताभ्यां कुशलवाभ्यां साकमुपस्थितः। कुश-लवद्वारा रामकथागानं जातम्, रामेण तच्छ्रुतम्। महर्षिणा सीता

शुद्धता प्रमाणिता ।[1] तथा च सीता तत्रागत्य शपथं कृत्वा[2] सर्वेषां समक्षमेव पृथिव्यां प्रविष्टा ।[3] रामश्च शोक सागरे निमग्नः ।

ज्ञाननिष्ठाः कर्मनिष्ठा योगनिष्ठास्तथापरे ।
सीताशपथवीक्षार्थं सर्वं एव समागताः ॥१६।९.

यथाहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये ।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ॥१७।१२

तथा शपन्त्यां वैदेह्यां प्रादुरासीत् तदाद्भुतम् ।
भूतलादुत्थितं दिव्यं सिंहासनमनुत्तमम् ॥१७।१७

तस्मिंस्तु धरणी देवी बाहुभ्यां गृह्य मैथिलीम् ।
स्वागतेनाभिनन्द्यैनामासने चोपवेशयत् ॥१७।१९

तामासनगतां दृष्ट्वा प्रविशन्तीं रसातलम् ।
पुष्पवृष्टिरविच्छिन्ना दिव्या सीतामवाकिरत् ॥१७।२०

तदनन्तरं रामाज्ञया भरतपुत्राय, लक्ष्मण-पुत्राय, शत्रुघ्नपुत्राय च विभिन्न नगर शासनं समर्पितं मन्त्रिभिः ।

एतन्मध्ये रामसमीपं तपस्वि वेषधारी स्वयंकालः समुपस्थितवान् । कालेन ब्रह्मणः सन्देशं श्रावितम् । रामेण तत् स्वीकृतम् । एतन्मध्ये एव महातपस्वी दुर्वासा तत्रोपस्थितः । महाकाल रामयोर्वार्तालापसमये दुर्वाससः क्रोध शाप भयात् लक्ष्मणः रामं निकषा गत्वा महर्षेरागमन समाचारं निवेदितवान् । रामाज्ञया स ऋषिस्तत्र प्रेषितः । रामचन्द्रश्च दुर्वासा ऋषिं भोजनं करितवान् । ते सर्वे ततो निवर्तिताः । किन्तु लक्ष्मण राजाज्ञामुपेक्ष्य वार्तालाप काले राम समीपं गतवान् । अनेनापराधेन लक्ष्मणं परित्यक्तवान् रामः । लक्ष्मणश्च त्यागानन्तरं सशरीरं स्वर्गं ययौ ।

इत्थं च विभीषण अत्र हनुमान् जाम्बवान् मैन्दद्विविदादयः भूतले एव तिष्ठन्तु इत्यादिशत् । ततौ वसिष्ठाज्ञया लवकुशं राज्ये संस्थाप्य सर्वैःवानर

---

१. विशेष द्रष्टव्य—उ० का० १६।१६-२४

२. विशेष द्रष्टव्य—उ० का० १७।१४-१६

३. विशेष द्रष्टव्य—उ० का १७।१७-२६

सैन्यैः समस्तैः पुरबासिना भरत-शत्रुघ्नाभ्यां च साकं **रामः विष्णुरूपे प्रवेशं कृतवान्**।[1] **सर्वेपुरवासिनश्च ब्रह्मलोक-समीपं सन्तानक लोकं प्राप्तवन्तः।**

इत्थं हि सर्वैः सह रामस्य सशरीरं स्वर्गारोहण कथादिभिः परिपूर्णमिदं महासमुद्रवत् बाल्मीकिरामायणं परिपूर्णतां प्राप्तम्।

●

---

१. पितामहवचः श्रुत्वा विनिश्चित्य महा[illegible]ः।
विवेश वैष्णवं तेजः सशरीरः सहानुजः॥
उ० का० ११०।१२

संस्कृत गद्यमयी रम्या रामायणी कथा सर्वेभ्योऽभ्युदयाय भूयात्।

●

भारतीय वाङ्मयेषु रामकथा वर्णनम्

प्रथमं खण्डम्

(२)

आनन्दरामायणम्

पुरोवाक

आनन्दरामायणम्

संस्कृत वाङ्मये शतशः रामकथामयमहाकाव्य-काव्य-नाटकादीनि राजन्ते। तेषु 'बाल्मीकिरामायणमेव" मुख्यम् मूलमुत्सं चेति भारतीयाः बैदेशिका चिन्तकाः गवेषकाश्च मन्यते। नात्र कश्चन मतभेदः। बाल्मीकि-रामायणमाधारीकृत्यैव सर्वेषु भारतीय वाङ्मयेषु रामकथार्चचिताऽ-र्चचिता च।

समुपलब्धेषु रामायणेषु बाल्मीकि-रामायणातिरिक्तम् आनन्द, अद्भुत्, अध्यात्म, बाल रामायणं च मुख्यम्। तेषु आनन्दाद्भुत-रामायणद्वयं बाल्मीकिप्रणीतमेवेति निश्चितं तावत्पर्यन्तं यावदनयोः निर्मातृविषये नान्यत्-प्रमाणमुपलभ्यते। तन्न सम्भवम्। यतो हि उभयोः रामायणयोः प्रतिस-र्गान्तमुल्लिखितमस्ति "इति—शतकोटि **रामायणान्तर्गते बाल्मीकीये-आनन्द रामायणे। अद्भुत रामायणे**" सारकाण्डे प्रथमः सर्गः"—एवं क्रमेणैवाग्रेऽपि।

फलतः बाल्मीकि प्रणीतमेवेदं रामायणद्वयमिति निष्कर्षः। किन्तु रामायणद्वयेऽस्मिन् मूलरामकथां विहाय सर्वं वर्णनं वृत्तान्तं कायु नामादिकं च सर्वथा महद्भिन्नम्।

तत्र निम्नाङ्कितं किञ्चित् दिग्दर्शनमत्र क्रियते। यथासम्भवमस्मिन् रामायण विवरणे स्पष्टं भेदप्रतिपादनमस्ति।

प्रथममेव मङ्गलाचरणे-"वामे भूमिसुता पुरस्तु हनुमान् पृष्ठे सुमित्रा-सुतः, शत्रुघ्नोभरतश्च पार्श्वदलयोर्वाय्वादिकोणेषु च। सुग्रीवश्च विभीष-णश्च युवराट् तारासुतो जाम्बवान्, मध्ये नीलसरोज कोमलं रूचि रामं भजे श्यामलम्॥"

पद्येऽस्मिन् यादृशध्यानस्य वर्णनं विद्यते **समस्त रामभक्त-सेवकानामेक-त्रैव समावेशो** न तथाऽन्यत्र कुत्रापि दृश्यते। अनुमीयते यदानन्दरामायण-कारेण **सर्वात्मनः सर्वप्रियस्य रामस्य ध्यानं कृतम्।**

रामायणमिदमपि शिव-पार्वती सम्बादरूप कथा पूर्णम्।

रामायणमिदं नवरस वर्णन परिपूर्णमभिनव कथायुक्तं सीता-संयोगात्मकं विविधकाव्य-कला शैली मिश्रितमानन्द सन्दोहदायकम् ।

अस्मिन् रामायणे नवकाण्डानि सन्ति । तत्र १०९ सर्गाः, १२३५२ (द्विपञ्चाशदुत्तरं द्वादश सहस्रं त्रिशतं) श्लोकाः विद्यन्ते ।

रामायणान्तर्गतं महत्त्वपूर्णं कियत् स्तोत्रादिकंपरिशिष्टे सन्निविष्टमस्ति । येन भक्त साधकानां पाठकानां च सौविध्यं स्यात् ।

"आनन्द रामायणम्"

समोक्षा

संस्कृत वाङ्मये शतशः रामकथामय-महाकाव्य काव्यनाटकानि समुपलभ्यते। तेषु श्रीमद्वाल्मीकिरामायणं सर्वतोमुख्यम्। भारतीया वैदेशिकाश्च सर्वे चिन्तकाः मनीषिणः वाल्मीकि रामायण— कथामाधारीकृत्यैव विभिन्न रीत्या विभिन्न दृष्टिकोणेन विविध शैल्यां च रामकथां वर्न्तिवन्तः।

सर्वे विपश्चिदपश्चिमाः जानन्त्येव स्वीकुर्वन्ति च यत् वाल्मीकि-रामायणमेव रामकथायाः मूलं स्रोतः। समुपलब्धेषु रामायणेषु वाल्मीकि—रामायणादतिरिक्तम्–आनन्दरामायणम्–अद्भुत्रामायणमाध्यात्मरामायणं-बालरामायणं च मुख्यतमं स्थानं भजन्ते। तम चाध्यात्मरामायणं महर्षि-व्यास प्रणीतं, बालरामायणं च महाकवि राजशेखर प्रणीतमिति सुस्पष्टम्।

आनन्दरामायणम्—अद्भुत्रामायणं च केन निर्मितमित्यस्य सुस्पष्ट प्रमाणाभावेऽपि आनन्दरामायणस्य प्रत्येक काण्डस्य—प्रतिसर्गान्ते **इति श्रीवाल्मीकीये आनन्दरामायणे'** तथा **'इति श्रीवाल्मीकीये अद्भुत रामायणे'** इति समुल्लिखितं दृश्यते। एतेन प्रामाणेन यावत्पर्यन्तं प्रमाणान्तरैः केनाप्यन्येननिर्मितमिदं रामाणद्वयंमिति न सिद्धयति तावत्पर्यन्त मिदं रामायणद्वयं—वाल्मीकि-निर्मितमेव नात्र काचित् विचिकित्सा, नान्यः पन्थाः च।

यद्यपि आनन्दरामायणान्तर्गतं सर्वं कथानकं वाल्मीकीयं रामायणतो भिन्नं वर्तते। केवलं रामकथान्तर्गत सर्वाणि वस्तुजातानि वाल्मीकीय-रामायणवदेव॥

बाल्मीकीयरामायणे सप्त काण्डानि सन्ति तत्रानन्दरामायणे नव-काण्डानि सन्ति। कथावर्णनप्रकरणंतु सर्वथा भिन्नम्। वाल्मीकि रामायणे रामः एको राजकुमारः पुरुषोत्तश्च। तुलसीदासस्य रामचरित-मानसे सकल व्रह्माण्डस्य चराचर जीवस्य अधीश्वरः साक्षात्परव्रह्मस्वरूपः मर्यादापुरुषोत्तमः। किन्तु आनन्दरामायणस्य रामः मर्यादापुरुषोत्तमः—

परमात्मा चेत्युभयरूपे वर्णितः। आनन्द रामायणकारः महताचातुयेण तथा वर्णनं कृतं येन न कुत्रापि **अत्युक्तिमयीवार्ता** न च **शिरोवेदनाकारि किमपि वर्णनम् ।**

अस्मिन् रामायणे "सारकाण्डं यात्राकाण्ड-यागकाण्डविलासकाण्ड—जन्मकाण्ड—विवाहकाण्ड—पूर्वार्ध राज्यकाण्ड—उत्तरार्धराज्यकाण्ड—मनोहरकाण्ड—पूर्णकाण्ढात्मकाति। नवकाण्डानि सन्ति। तेषु तेषु काण्डेषु सर्वत्र कथा शैली भिन्ना विद्यते या च वस्तुतः चमत्कारात्मिका सती चरमानन्दायिका ब्रह्मास्वाद-सहोदरा।

अन्य रामायणेभ्यः भिन्नरूपेण कथावस्तूनां वर्णनमस्य रामायणस्य महती विशेषता चमत्कारिता च विद्यते। यत्रान्यरामायणेषु भगवतो रामचन्द्रस्य जन्म कालादारभ्य कथाभारभते तत्रास्मिन् रामायणे सार-काण्ड नामके एकस्मिन् काण्डे एव सम्पूर्ण रामायणस्य कथा संवर्णिता वर्तते। तदनन्तरं सर्वाणि कथावस्तु जातानि सर्वथा नूतनानि सन्ति। यत्र केषामपि संस्कृत कवीनां केषामप्यन्य-भारतीय वाङ्मय कवीनां च दृष्टिः कल्पना च नैवगता। यद्यपि बाल्मीकि रामायणेऽपि बालकाण्डस्य प्रथप-पञ्चसर्गेष्वेव समग्ररामकथाऽति संक्षिप्तरूपेण विद्यते ततश्च क्रमशः कथाऽतिविस्तृता किन्तुअत्रैकस्मिन्नेव काण्डे समग्ररामायणी रामकथा समाविष्टा।

आनन्दरामायणकारः रामचन्द्रेण भारतीयसर्वेषां तीर्थानां यात्रां कारितवान्। अनेकानेकाश्वमेध यज्ञांश्चसम्पादयितवान्। रामलक्ष्मणभरत-शत्रुघ्नानां सर्वेषां भ्रातॄणामनेक सन्तति जन्मकथास्तथा तेषां विभिन्न-स्वयंवरेषु विवाहादिवरवर्णनं कृतवानयमानन्दरामायणकारः।

विलासकाण्डे—सीता-रामयोः विविध विलासलीलायाः तथा मधुरं मनोग्राहि वर्णनं विवृतमनेन सरस कविना, यस्य कल्पनामपि नान्येरामकथाकर्तारः कृतवन्तः।

वर्णनमिदमवलोक्य समीक्षकैः गवेषकैरनुभूयते यत् **प्रकृतिपुरुषयोर-लौकिकलीलायां यथा एतस्याः सृष्टेः विस्तारस्य रहस्यं वर्तते तथैव सीता-रामयोरलौकिकविलासेऽलौकिकलीला सन्निहिता यस्याः रहस्यज्ञानं द्वापरान्ते षोडशकलावतारस्य श्रीकृष्णस्य 'महारास' वर्णनं विद्यते।** आनन्द रामायणकारः प्रायः त्रेतायामेव भाविनोद्वापरयुगस्य दृश्यं ज्ञान-चक्षुषावलोकयति किम् ?

तदनन्तरं रामचन्द्रस्य दिग्विजय गाथा तत्र भौगोलिक वर्णनमेवस्य महाग्रंथस्यामूल्यनिधिस्तु वर्तते एव किन्तु आधुनिक भौगोलिकानां सर्वेक्षणमपि चमत्कारोति। अनन्तरं च रामार्चाविधानं **रामसहस्रनामस्त्रोत्रं विभिन्न स्तोत्रं** च दृष्ट्वा स्पष्टतोऽनुभूतये यदयं ग्रन्थः **श्रृङ्गारश्रद्धाभक्तीनां त्रिवेणी संगम** एव वर्तते।

पूर्वमेव प्रतिपादितं मया यदयं ग्रन्थः महर्षेः वाल्मीकेरेव, यतोहि वाल्मीकिना वाल्मीय रामायणेनिगदितं यत् शतकोटि रामायणं वर्तते। अतएवेदं निश्चितं यदयं ग्रन्थः शतकोटि रामायणान्तर्गत एव।

मङ्गलाचरणे एव आनन्द रामायणकारः नवकाण्डस्य नवकथानकस्य च सङ्केतं दत्तवान्।

यथा—

"आदौ रावणमर्दनं द्विजगिरातीर्थाटनं सीतया, साकेते दशवाजिमेधकरणं पत्न्या विलासाटनम्। स्त्रीपुत्रग्रहणंस्नुषार्थमटनं पृथिव्याश्च संरक्षणं, रामार्चादिनिरूपणं दयितयास्वीयं स्थलारोहणम्"।

प्रथम मङ्गलाचरणे 'वामे भूमिसुता पुरस्तु हनुमान् पृष्ठे सुमित्रासुतः; शत्रुघ्नोभरतश्च पार्श्वदलयोर्वाय्वादिकोणेषुच। सुग्रीवश्च विभीषणश्च युवराट् तारासुतो जाम्बवान्; मध्ये नीलसरोजकोमलरुचिं रामंभजे श्यामलम्।'[1] अस्मिन् पद्ये यादृश ध्यानस्य वर्णनं विद्यते, यथा च समग्र रामभक्त सेवकानामेकत्रैव समावेशो न तथाऽन्यत्र कुत्रापि काव्ये कस्मिन्नपि रामायणे दृश्यते। फलतः आनन्दरामायणकारेण **सर्वात्मनः सर्वप्रियस्य रामस्य ध्यानमत्र लिखितम्।**

अस्मिन् रामायणेऽपि अध्यात्मरामायणवत् **शिव-पार्वती सम्बादरूपातिनका कथैव वर्णित।—**

यथा—

प्रथमप ादेव लिखितं यत्

एकदा पार्वतीदेवीशंकरं प्राह हर्षिता।
कैलासवासिनं नत्वा रामभक्त्यैक तत्परा॥

---

१. आ० रा० १।१।१

शंभो त्वया पुराणानि कथितानि ममांतिके।
रघुनाथस्य चरितं जन्म कर्म समन्वितम्॥
कथयस्वाधुना देव मम प्रीति विवर्धनम्।
आनन्ददायकं कर्म रघुवीरेण यत्कृतम्॥''[1]

एवं क्रमेण पार्वत्या पृष्टः शिवः सूर्यवंशावलीं वर्णयित्वा कथामुदीरितवान्। यत्रास्मिन्नानन्ददायके आनन्दरामायणे नवकाण्डानि सन्ति तत्र नवोत्तरशतं (१ ९) सर्गाः विद्यन्ते तेषु द्वादशसहस्र द्विपञ्चाशदुत्तरं त्रिशतं (१२३५२) श्लोकाः सुविन्यस्ताः सन्ति।

यद्यपि प्रत्येक-काण्डस्य सारांश वर्णनेन तत्काण्डस्यातिविशिष्ट नव्यभव्य वर्णन समावेशो वर्तते एव, किन्तु जन्मकाण्डस्य पञ्चम सर्गे यत् **'रामरक्षास्तोत्र''** विद्यते तदतिमहत्त्वपूर्ण यस्य समग्रोद्धरणं परिशिष्टे प्रदत्तम्।

तथैव यात्राकाण्डस्म तृतीय सर्गे रामदासविष्णुदास नाम्नोर्द्वयोः रामभक्तयोरुत्पत्तिवर्णनं कार्यं बर्णनं च विद्यते। **उभावपि रामभक्तौ समस्तेऽस्मिन् रामायणे प्रश्नोत्तर कर्त्तारौस्तः इत्यपि नूतनम्।**

यथाः—

पार्वत्युवाच

को रामदासः कुत्रस्थो विष्णुदासश्च कः स्मृतः।
कथं वदिष्यति गुरूस्तन्मां कथय विस्तरात्॥

श्रीशिवउवाच

भारते दण्डकारण्ये गोदानाभौ विराजिते।
क्षेत्रेऽब्जके नृसिंहाख्यो मुनिरग्रे भविष्यति॥
रामनामा तु तत्पुत्रस्तच्छिष्यो विष्णुरित्यपि।
गुरुशिष्यौरामसेवासक्तौनित्यं भविष्यतः॥
दास्यत्वाज्जानकीजानेस्ताबुभौ भूसुरोत्तमौ।
रामदासविष्णुदासविति लोके परां प्रथाम्॥

आ० रा० २।३।१-४,

१. आ० रा० १।१।३-५

सारकाण्ड सारांशः

भूमिकायां यथा प्रतिपादितं तदनुरूपैव सारकाण्डस्य कथा विद्यते। सारकाण्डस्य कथायां प्रायोशीति प्रतिशतं (८०%) कथाः वाल्मीकिरामायणतो भिन्नाः कुतूहलपूर्णाश्च। अत्र सम्पूर्ण सारकाण्डस्य मुख्याः कथाः संक्षिप्तरूपेण प्रदीयन्ते यत्र-तत्र चावश्यकतानुसारं श्लोकानाँ समुद्धरणं च सन्निविष्टं वर्तते।

सर्वप्रथमं प्रथम सर्गे रघुवंशे पूर्वराज्ञां नामानि सन्ति येषु नामसु **रामचन्द्रः एकषष्ठितमः (६१ वाँ)** एवंरूपेण **प्रायः एव कुत्रापि क्रमानुसारं रामवंशानुवर्णनं दृश्यते।**

तदनन्तरमेतस्मिन्नेवाध्याये रावणः ब्रह्माणं निकटंगत्वा स्वमरणस्य कारणं पृच्छति। ब्रह्मा कथयति यत् "कौशल्यागर्भाद्रुत्पन्नो रामः तत्र बधं करिष्यति"। इदं श्रुत्वा रावणः कौशल्यामेकमस्यां मञ्जूषायां धृत्वा सन्निधाय समुद्रवासिनेतिमिंगिलनामक जन्तवे समर्पितवान्। ततश्च तां मञ्जूषां केनापि प्रकारेण दशरथः प्राप्तवान्। ततश्च कौशल्यां निःसार्य तथा सह विवाहं चकार। तदनन्तरं दशरथस्य सुमित्राकैकेयीभ्यां सह विवाह कथा विद्यते। **"अत्र कौसल्याप्राप्तिकथा नूतना मनोहारिणी"**

अथ कदाचिद्देवदानवयोर्युद्धः सञ्जातः। तस्मिन् युद्धे दशरथस्य रथः भग्नः। भग्नस्थाने कैकेयी स्वहस्तं दत्त्वा दशरथस्यप्राणान् रक्षितवती। तेन संतुष्टः दशरथः तस्यै वरदानंद्वयं ददौ। ततश्चायोध्यामागतवान्।

संयोगात् राज्ञा दशरथेन श्रवणकुमारस्य वधः सञ्जातः तथा श्रवणस्यान्धपित्रा दशरथः शापितः। अनन्तरं च महर्षि ऋष्यशृङ्गःद्वारा दशरथस्य पुत्रेष्टियज्ञः सम्पादितः। तत्र च साक्षादग्निदेवः प्रकटितोभूत्वा राज्ञेहविः ददौ। एवं रूपेण प्रथम सर्गस्य कथा समाप्ता।

इमां कथामाकल्येदं निश्चियते यत् प्रचलित-समकथातो-भिन्नेयं घटना प्रणाली। या च चमत्कारपूर्णानन्ददायिका च।

टिप्पण्यां प्रथमसर्गस्य निम्नाङ्किताः श्लोकाः सन्ति—१, २, ७-३०, ३७, ४०, ४३, ४६-५०, ८४, ८५।

सारकाण्डस्य द्वितीयसर्गे राक्षसोपद्रवेण दुःखिता पृथ्वी देवानां समीपं गतवती। पृथिव्याः सह सर्वे देवाः मिलित्वा क्षीरसागरं गत्वा विष्णोस्तुतिं चक्रुः। विष्णुः प्रोवाच यत् गच्छन्तु भवन्तः। अहमयोध्यायां जन्मग्रहीष्यामि, भवन्तश्च कपयो भूत्वा पृथिव्यां गच्छन्तु। ततश्च रामलक्ष्मण-भरतशत्रुघ्नानां जन्मकथाः बाललीलाश्च। वर्तन्ते। गुरूवशिष्ठद्वारा तेभ्यो शास्त्रीयशिक्षा प्रदान कथा च विद्यते (तत्र श्लोकाः १-३, २६-२७, ३०)।

एतस्मिन्नंतरे भूमिर्दशास्यादिप्रपीडिता।
ब्रह्मणा प्रार्थयामास विष्णुं सोऽपि तदाऽब्रवीत्॥
भूम्यामवतरिष्यामि भवन्तु कपयः सुराः।
गन्धर्वीदुन्दुभीनाम्नी भूम्याः कार्यार्थसिद्धये॥
मन्थराऽग्रेभवत्वद्धा राज्यविघ्नार्थ सिद्धये।
पश्चात्युद्धापरान्ते कुब्जात्वं कंसमन्दिरे॥ १।२।१-३०
विद्वद्भिश्चोपनयनमेवं शास्त्रेषु निर्णयः।
गुरोरास्यात्सुमुहूर्ते वेदान् साङ्गांश्चतुर्विधान्॥ १।२।२८.

तृतीयसर्गे च विश्वामित्रस्य दशरथ समायामागमनं यज्ञरक्षार्थं राम-लक्ष्मणयोर्याचना कथा च समुल्लसिता। रामलक्ष्मणाभ्यां सह गच्छन् विश्वामित्रः ताभ्यां बालकाभ्यां शस्त्रास्त्र शिक्षा प्रदानम्, श्रीरामद्वारा तारका वधः, रामलक्ष्मणाभ्यां सह विश्वामित्रस्य जनकपुरप्रस्थानं; मार्गे अहल्योद्धारश्च, राजाजनकेन सीता स्वयंवरस्य प्रतिज्ञाघोषणा, रावणद्वारा धनोरूत्थापनस्य प्रयासे विफलता, रामद्वारा शिवधनोर्भङ्गश्चेति—कथाः विराजन्तो। रामेण सह सीतायाः विवाहः राजा दशरथस्य जनकपुरागमनं तत्रान्येषां त्रयाणां भ्रातॄणामपि क्रमशः उर्मिला माण्डवी श्रुतिकीर्त्तिभिः सह विवाहः, एक मासानन्तरं राजादशरथस्यायोध्या-प्रस्थानम्, मार्गे राम परशुरामयोः साक्षात्कारः, रामद्वारा परशुरामस्य गर्वभञ्जनम् अयोध्यामागत्य दशरथस्य विवाहोत्सवादिकथाभिः समुल्लसितोऽयं सर्गः। **श्लोका संख्या** १-२, १०, १६, २०, ७३, ७४, ३७२-७७)

एवंरूपेण **प्रचलित रामकथाभ्यः भिन्न शैल्यांभिन्न क्रमेण चानन्दरामायणस्य कथा सर्वदानन्ददायिनी।**

एवं रूपेण सर्वैः पुत्रैः पुत्रबधूभिश्च सह महाराजः दशरथः अयोध्यामागतवान्। तत्र च महान् उत्सवः समबभूत्।

तदनन्तरं **चतुर्थसर्गे** दीपावली शुभावसरे राज्ञो जनकस्य दशरथं प्रति निमन्त्रण प्रेषणं दशरथस्य च पुत्रः जनकपुर गमनम्, तत्र च दशरथस्य महान् सत्कारः सञ्जातः।

जनकपुरतः पुनः प्रत्यावर्तन समये मार्गे राजा दशरथस्य प्रतिपक्षिभ्यः नृपेभ्यः साकं युद्धः संजातः।

रामः तैः शत्रुभिः सह युद्धम् चकार। तस्मिन् युद्धे भरतः सहसा मूर्च्छितो जातः। त्वरितमेव रामस्याज्ञया लक्ष्मण मृद्गल मुनेः आश्रमं सञ्जीवनी नाम्नीम् औषधिं आनयनार्थं गतवान्। तत्र सञ्जीवनीं प्राप्य तामानीय भरतां पुनरुज्जीवितवान्। "**इयमपि घटना मूलकथातोऽभिनवाः।**

दशरथः मुनेः मुद्गलस्य आश्रमं गत्वा रामस्य भविष्य सम्बन्धे विविध प्रश्नान् कृतवान्। उत्तरं च संतोषजनकं श्रुत्वा प्रसन्नो जातः।

तत्रैव वृन्दायाः उपाख्यानम् श्रुतवान् यथा बृन्दा भगवन्तम् विष्णुं शशाप। तथा च सौराष्ट्र नगरे भिक्षु नासकस्य ब्राह्मणस्य कलहा नामवत्या सह कलहोपाख्यानम् च श्रुतवन्तः।

तदनन्तरं धर्मदत्तनामकः ब्राह्मणः तुलसीदल सहितं जलं प्रक्षिप्य "**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**" इति मन्त्रमुच्चार्य ताम् बृन्दाम् कलहां च पापात् उद्धृतवान्।

अनन्तरम् अयोध्यां परावर्तितस्य रामस्य दिनचर्या विषये महत्त्वपूर्णं वर्णनं विद्यते। यत् कथं रामचन्द्रः ब्राह्म मुहूर्ते उत्थाय रात्रौ शयनपर्यन्तं कालं विभज्य सर्वाणि कार्याणि कुर्वन् आसीत्। रामस्य दिनचर्यां दृष्ट्वा साश्चर्यः **दशरथः रामात् ज्ञानोपदेशम् श्रुतवान्**। आश्चर्यजनकोऽयं विषयः। अतएव मनुस्मृतौ कथितं यत्—

न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः।
योवैयुवाप्यधीयानः तम् देवाः स्थविरं विदुः॥ इति।

एवंप्रकारेण **आनन्दरामायणस्य कथा वस्तुतः आनन्ददायिनी विद्यते।**

ततश्चषष्ठसर्गे नारदस्य समागमनं सर्वेषां देवानां सम्वाद कथनम्। रामसीतायाः परस्पर दण्डकारण्य गमनस्य विचार-विमर्शः विद्यते।

तत्रैव महाराज दशरथ द्वारा रामराज्याभिषेकस्य आयोजनं प्रारब्धम्। अन्तःपुरे च मन्थरा द्वारा कैकेयीमुत्तेजनकरणं सुरक्षित-वरद्वय—याचनार्थं प्रेरितवती। विवशोभूत्वा राजा दशरथः वरद्वयस्य कार्यान्वयनार्थं घोषणां

कृतवान् तथा दशरथः महान् व्याकुलः सञ्जातः। रामः तस्मै विशेषरूपेण धैर्यं प्रदत्तवान्।

अयोध्यानगरवासिनः रामस्य वनगमनं श्रुत्वा विद्रोहं कृतवन्तः। ततः महर्षिः वामदेवः समागतवान्, तथा नगरवासिनं प्रति कथितवान् यत् सर्वेषां देवानां सम्वादं गृहीत्वा महर्षि नारदः समागतवान्। तथा—रामं वनगमनार्थं निवेदितवान्। तदनुसारमेव इयं घटना सञ्जाता। **नात्र दशरथस्य मन्थराया वा कस्यापि दोषः।** एवंरूपेण महत्यां कारुणिक दशायां रामः सीतालक्ष्मणाभ्यां सह वनं प्रतस्थे।

अष्टादश वर्ष देशीयः रामः माघशुक्ल पञ्चम्यां तिथौ अयोध्यातः वनं प्रतस्थे (सारकाण्ड षष्ठसर्गं श्लोक ७२)

माघमासे सितेपक्षे पञ्चम्यां परमेऽहनि,
प्राप्तेह्यष्टादशे वर्षे राघवाय महात्मने
आसीद्वनप्रयाणं हि स्वपुर्यास्तमसातटम्।

सारकाण्डम्–६ सर्गः श्लोकाः १७२-१७३

तथा तमसानदी तटमागतवान्। तत्र रात्रौ विश्रम्य श्रृङ्गवेरपुरम् जगाम। ततएव सारथिं सुमन्त्रं परावर्तितवान्। श्रृङ्गवेरपुरे निषादराज-द्वारा समादृतः रामः नौका द्वारा गङ्गानदीं तीर्त्वा पारं गतवान्। तस्मात् स्थानात् निषाद राजं परावर्तितवान्। सीता तत्र गङ्गां प्रार्थितवतीं।

पुनः प्रातः रामचन्द्रः प्रयागे त्रिवेणीं तीर्त्वा बाल्मीकेराश्रमं प्राप्तवान्। तत्र स्वागत सत्कारं गृहीत्वा चित्रकूटेमनोहरां पर्णकुटीं निरमायि लक्ष्मणेन। तत्राश्रमे निवसन् राघवः कन्दमूल फलादिभिः मृग मांसैश्च बलिं दत्वा सुखेन शान्त्या च निवासं चकार। (**सारकाण्ड षष्ठसर्गः ८२—८३ श्लोकौ**)

वाल्मीकेराश्रमं गत्वा तस्थौ तेनातिपूजितः।
चित्रकूटे लक्ष्मणेन पर्णशालां मनोरमाम्॥
कृत्वा मांसैर्मृगोद्भवैर्बलिं दत्त्वा रघूत्तमः।
तस्थौ तस्यां सुखं भ्रात्रा सीतया स्वगृहं यथा॥

(आ. रा. १।६।८२-८३)

तत्रैवैकस्मिन् दिने इन्द्रपुत्रो जयन्तः रामाङ्के सुखसुप्तां सीतां दृष्ट्वा तस्याः अङ्गुष्ठं विददार। अङ्गुष्ठाद्रक्तश्रावं वीक्ष्य रामः इषिकं (सीक) शरं

मुमोच। तेन भीतः जयन्तः समस्ते ब्रह्माण्डे पलायन् क्रमे भ्रमणं चकार, न कुत्रापि शरणं प्राप्तवान्। पुनस्तत्रैव रामचन्द्रशरणमागत्य क्षमायाचनां कृतवान्। रामोऽपि तत्र नारद वाक्येन केवलं नयनमेकमेव नष्टं कृत्वा क्षमांदानं ददौ। "**तदा प्रभृति काकानामेकमेवाक्षि विधीयते**। (सारकाण्ड षष्ठसर्गः श्लोकाः ८८-९०)

सीतांगुष्ठं तु काकेन भिन्नं दृष्ट्वा रघूत्तमः।
अभिद्रवंतं रक्तस्यमीषिकास्त्रं मुमोच सः॥
केनाप्यरक्षितस्यास्त्रभयाद्ब्रह्माण्डगोलके।
स्वशरणमागतस्यास्य पुनर्नारदवाक्यतः॥
इतिकास्त्रेण काकस्य विभेद नयनं क्षणात्।
एवं नानाकौतुकानि कुर्वंस्तस्थौ सुखं प्रभुः॥

(आ० रा० १।६।८८-९०)

(**अत्र वाल्मीकिरामायणतः कथाभेदः, वाल्मीकि रामायणे स्तन विदारणस्य चर्चाऽत्र पादाङ्गुष्ठेः**) प्रायः तुलसीदासेनेदमेवानुकृतम् "सीता चरण चोंच हति भागा" इत्यादिभिः।

तदनन्तरमयोध्यायां दशरथः स्वर्गंगतः। भरतश्च मातुलगृहादागत्य श्राद्धादिकं कृत्वा मातृभिः पुरवासिभिः सह रामं प्रत्यावर्तयितुं चित्रकूट-माजगाम।

रामचन्द्रश्च पितुर्मरण वार्तां श्रुत्वा सशोकं गङ्गा नदीं गत्वा मृतं पित्रे तिलाञ्जलि ददौ।[1]

मातृभिः पुरजनैश्च साकं भरतः रामं पुनरयोध्यां गन्तुं प्रार्थयामास किन्तु रामेण न सा प्रार्थना स्वीकृता।

भरतोऽपि प्रतिज्ञां चकार यत् चतुर्दश वर्ष पर्यन्तं जटावल्कलधारी भूत्वा नगरात् वहिः तपः कुर्वन् परावर्तनस्य प्रतीक्षां करिष्यामि। सहैव निवेदनं कृतवान् यत् स्वकीय पादुकां कृपया ददातु **या पादुका प्रतीकरूपेण राज्य सञ्चालनं करिष्यति**। अहं च तस्याः पादुकायाः सेवां कुर्वन् समयं यापयिष्यामि।

---

१. रामः श्रुत्वा मृतं तातं गत्वा मन्दाकिनीं नदीम्। स्नात्वा तिलाञ्जलि दत्वा ययौ शालां निजांगिरौ॥ आ० रा० १।६।१०१

यदि भवान् चतुर्दशवर्ष समाप्ति दिनेऽयोध्यां नागमिष्यति तर्हि तद्दिने एव सूर्यास्त समयेऽग्नौ प्रविश्य शरीरान्तं करिष्यामि। (नवीनेयं कथा)।[1]

रामोऽपि 'तथास्तु'' इत्युक्त्वा पादुकां भरताय ददौ। भरतश्च सर्वैः सहायोध्यां प्रतस्थे।

किमद्दिन पर्यन्तं चित्रकूटे निवसन् रामः पुनः दण्डकारण्ये अत्रिमुनेराश्रममाजगाम। तत्राश्रमे भगवान् अत्रिमुनिः यथोचितं स्वागतं व्याजहार। अत्रिमुनि पत्नी अनसूया सीतायै नानाविध दिव्य कुण्डल वस्त्रादिकं दत्त्वा तां पुत्रीवत् स्नेहं कृतवती आशीर्वादांश्च ददौ।

सारकाण्डस्य सप्तमसर्गे विराध राक्षस बधकथा, खर-दूषणस्य च मरण कथा मनोहारिणी विद्यते। ततः सुतीक्ष्णस्याश्रमगमनं ततश्च अगस्त्यमुनेराश्रम मार्गेण **पञ्चवटी-समागमनं** तत्र च जटायु मिलन सम्वादः सुमनोहरः।

तत्रैव लक्ष्मण द्वारा **शूर्पनखायाः पुत्रस्य साम्बस्य लक्ष्मण द्वारा बध कथा, शूर्पनखायाश्च कर्ण नासिका कर्तन कथा** चाति दिव्या विद्यते।

तथा च खरदूषणस्य त्रिशिरसश्च तेषां चतुर्दशसहस्र सेनायाश्च बधनाश वर्णनं राजते। शूर्पनखा च तस्यां विरूपावस्थायां लङ्कां ययौ। तत्र गत्वा रावणं कथयामास यत् त्वं धिक्कारयोग्योऽसि, यतस्त्वयि सत्यपि ममेयं—दुर्दशा जाता। क्रुद्धो रावणः स्वकीयमातुलं मारीचं निकषा गत्वा सर्वं कथितवान्।

मारीचेन प्रथमं रामेण सहविरोधस्य विरोधः कृतः। पश्चाद्रावणस्याग्रहेण मायामृगरूपं धृत्वा सीताहरणार्थंप्रस्तुतो जातः। यतोहि मारीचेन चिन्तितं **यद्रावणहस्तेन मरणाद्रामहस्तैरेव मरणं श्रेयः।**

स्वर्ण मृग रूप धारिणा मारीचेन स्वमायां प्रदर्श्य लक्ष्मणमाकृष्टं मध्ये च भिक्षुक ब्राह्मण रूपधारी रावणः सीतां जहार। सीतां हरता रावणेन सह मार्गे जटायुनामा गृध्रराजः प्रतिरोधं कृतवान्। रावणः जटायुं स्वपाद प्रहारेण जर्जरं कृतवान्। सीतां च नीत्वा लङ्कां ययौ।

तदनन्तरं सीतामन्वेषयन् रामचन्द्रः जटायुना सर्वं समाचारं ज्ञात्वा महान् शोकाकुलो जातः। तथा च तत्रैव रामसमीपे एव जटायुः प्राणान्

---

१. ....। प्रतीक्षां तव राजेन्द्र वर्षाणि च चतुर्दश॥ कृत्वा चतुर्दशे वर्षे पूर्णे गुप्ते रवौ त्वहम्। प्रवेक्ष्याम्यनलं राम सत्यमेतद्वचोमम॥ आ० रा० १।६।१०७-८

तत्याज । रामश्च तस्यान्तिमसंस्कारादिकं **वन्य पशु मांसादिना श्राद्धं च चक्रे । (इयमत्र नवीना कथा) ।**

सीता मार्गणे व्यग्रो रामः मार्गेऽनेकान् राक्षसान् जघान । ततश्च रामः शबरी-समीपं ययौ । सा च यथायोग्यं तयोः रामलक्षाणयोः स्वागतादिकं कृत्वा रामदर्शनेनैवाग्नौ प्रविश्य मुक्तिं प्राप्तवती । रामश्च ततः पम्पा सरोवरं गत्वा स्नानादिकं विधाय ऋष्यमूक पर्वतं प्रतिप्रस्थितः । तत्र गत्वा सुग्रीवेण साकं मैत्रीं चकार सर्वांस्थितिं च कथितवान् ।

ततश्च बालि सुग्रीवयोर्युद्धे राम द्वारा बाली निहतः । मरणकाले बालिने वरदानं च ददौ । सुग्रीवश्च सीतान्वेषणार्थं बानरान् विभिन्न दिशायां प्रेषयामास । हनुमताऽङ्गदेन च सह सम्पातेः वार्तालापः । सम्पातिः रावणद्वारा सीताया लङ्का गमनादिकं वृत्तान्तं कथितवान्, निर्देशितवांश्च यत् लङ्कां गत्वा सीतान्वेषणे संलग्नाः भवेयुः ।

एतदनन्तरं सर्वं वृतान्तं विज्ञाय वृद्धो जाम्बवान् हनूमन्तं लङ्का गमनार्थं प्रेरितवान् । हनूमतश्च विशाल बल-बुद्धेः स्मरणं कारयामास ।

तदनन्तरं हनूमतः समुद्रलङ्घन मार्गे सुरसा नाम राक्षस्या सह साक्षात्कारो वार्तालापश्च जातः । मार्गे सिंहिकायाः बधः अपरम्पार पारावार मुल्लङ्घ्य रात्रौ लङ्का प्रवेशस्तत्र लङ्किनी राक्षसीभिः सह तर्कवितर्कः ।

सा कथितवती यत् त्वं स्वेच्छया लङ्कां गच्छ, अशोक वाटिकायां सीता वर्तते, तां पश्य । निश्चितमेव रामो रावणस्य बधं करिष्यति—इति ब्रह्मवाक्यम् ।

हनूमांश्च लङ्कां प्रविश्य तस्याः विचित्र शोभामैश्वर्यं च ददर्श । रात्रौ राजभवने रावणं दृष्ट्वा हनूमान् तत्र दीपं निर्वापयामास । तत्र **स्थितानां राक्षासानां मुखान् उल्काद्वारा भस्मसादकरोत् । "इयमपि कथा नूतना' ।**

तदनन्तरं सः रावण गृहं (राजभवनं) प्रविवेश । तत्र मन्दोदरीं दृष्ट्वा सा सीतेति शङ्कितवान् । किन्तु लक्ष्मणोक्तानि चिह्नानि तद्दृष्टवान् तेन निश्चितं यदियं न सीता ।

तदनन्तरं भ्रमन् हनूमान् सीतां ददर्श, तत्कालमेव रावणः सोता समीपमागत्य तां विविध प्रलोभेन प्रतारयामास । सीता च रावणं तिरश्चकार । ततश्च रावणः क्रुद्धो भूत्वा सीतां हन्तुमुद्यतः, त्वरितमेव तत्र मन्दोदरी तं निवारयामास । राक्षसीभिश्च रावणाज्ञया सीतां भर्त्सयामासुः । तत्रैव त्रिजटा नामैका राक्षसी सीतायै सान्त्वनां ददौ ।

एतस्मिन् क्षणे एव हनूमान् तत्र प्रकटितवान् सीतायै राममुद्रिकां च प्रदत्तवान्। ततश्च अशोक वाटिकां विध्वंसितवान्, सहस्रशः राक्षसान् जघान। अनन्तरं मेघनादेन प्रक्षिप्त ब्रह्मास्त्रेण हनुमान् रावण समीप-मागतः।

रावण समीपमागत्य बहून्युपदेशपूर्ण-वाक्यानि कथयामास। किन्तु सदुपदेशमवमान्य मारुतिं तिरश्चकार। तिरस्कृतो हनूमान् लङ्कां दग्ध्वा भस्मसात् चकार। आकाशवाणी द्वारा सीतायाः सुरक्षित-कथां श्रुत्वा प्रसन्नतां ययौ।

मध्ये च गजग्राह कथा विद्यते। सीतायाः सन्देशं नीत्वा हनुमान् ततः प्रतस्थे, मार्गे मधुवने मधूनि भक्षितवान्। ततश्च सुग्रीवादि सहितं रामं निकषा समागत्य समग्र घटनाचक्रं वर्णितवान् रामाय चूड़ामणिं च प्रददौ।

ततश्च लङ्कायाः वाह्याभ्यन्तर-स्वरूपस्य सविस्तरं परिचयं श्रुत्वा रामः त्वरितमेव सुग्रीवादि सहितैः—समस्त वानर सैन्यैः सह लङ्कां प्रतस्थे।

लङ्कायां च हनूमतः पराक्रमं दृष्ट्वा रावणः स्वकीय राज्य सभायां पार्षदैः सह परामर्शं कृतवान्। विभीषणश्च रावणाय नीतिवाक्यानि कथितवान्। रावणः तं तिरस्कृतवान्। तिरस्कृतो विभीषणः राम शरणं ययौ। रामश्च विभीषणाय शरणं दत्त्वा तेन सह मैत्रीं चकार।

तदनन्तरं रामः समुद्रतटे लङ्का गमनस्य मन्त्रणां कृत्वा समुद्रमाहूत-वान्। नागते समुद्रे कुपितो रामः समुद्रोपरि आग्नेयास्त्र प्रक्षेपायोद्यतः। तन्मध्ये एव समुद्रः शरणमागतवान् समुद्रे सेतु बन्धस्योपायं च कथितवान्।

रामः समुद्रतटे शिवलिङ्गस्य स्थापनार्थमेकं शिवलिङ्गमानेतुं हनूमन्तं काशीं प्रेषयामास। आकाश मार्गेण स काशीमागत्य रामकार्यार्थं शिवं प्रार्थितवान्। प्रसन्नौ भूत्वा शिवः द्वै—शिवलिङ्गे ददौ। अगस्त्य विन्ध्या-चलयोः कथां च कथितवान्। (**अत्रापि नूतनाघटना**)।

कथामेतां श्रुत्वा मारुतिराकाश मार्गेण पुनः शीघ्रं राम समीपं चलितः। एतावतिस्वल्पकाले शिवलिङ्ग द्वय प्राप्त्यर्थं हनूमतो मनसि किञ्चिदभिमानं जातम्। रामश्च तज्ज्ञात्वा उवाच, हे सुगीव, स्थापना मूहूर्त समाप्त-प्रायम्। तेनाहं बालुकायाः लिङ्गं निर्माय स्थापनां करोमि। इत्युक्त्वा तथैव कृतवान्। तस्मिन् बालुका निर्मित लिङ्गे कौस्तुभमणेः प्रभा प्रदत्ता रामेण।

हनूमांश्चागत्य क्षुब्धःसन् पृष्टवान्, यत् भगवन् ! केनेदं लिङ्गं स्थापितम् । रामेणोक्त मयास्थापितम् । ततश्च मनसि कुपितो हनूमान् प्रोवाच, यद्येवमेवासीत् तर्हि व्यर्थमेव भवद्भि रहं प्रेषितः । अधुना मया आनीतस्य शिवलिङ्गस्य कागतिर्भविता ? रामेणोक्तं—यदि बालुका निर्मित—शिवलिंग स्वपुच्छेन त्वमुत्पाटयिष्यसि तर्हि तवानीत लिंगमहम् स्थापयिष्यामि ।

अहङ्कार युक्तो हनूमान् रामस्य लीलां विस्मृत्य स्वपुच्छेन लिङ्गमुत्पाटयितुं प्रयतितवान् किन्तु तस्मिन्नायासे तस्य पुच्छमेव त्रुटितम् । इदं दृष्ट्वा सर्वे वानराः हसिताः । तदनन्तरं मारुतिः स्वस्थो भूत्वा गर्वं विहाय रामस्य शरणं गत्वा प्रार्थयामास । रामेणोक्त यन्ममस्थापित—लिङ्गस्योत्तर भागे स्वानीतं लिङ्गं विश्वनाथ नाम्ना स्थापय । रामो वरदानं च ददौ यदेतल्लिङ्ग पूजां विना मत्स्थापित—रामेश्वरलिङ्ग-पूजनं व्यर्थं स्यात् । हनूमतः पुच्छं च पूर्वतोऽप्यधिक सुन्दरं चकार ।

(इयं कथा च सर्वथाऽत्र नवीना याऽन्यस्मिन् रामायणे नास्ति)

अत्रैव शिवेन प्रोक्ता, द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग कथापि विद्यते ।

यथाः—

ऊंकारः सोमनाथश्च त्र्यम्बको मल्लिकार्जुनः ।
नागेशो वैद्यनाथश्च काशीविश्वेश्वरस्तथा ॥
केदारेशो महाकालो भीमेशोधूसृणेश्वरः ।
एवमेकादशज्ञेयाः ज्योतिर्लिङ्गमयाः शुभाः ॥

(आ०रा०१।१०।६८-७१)

"ज्योतिर्लिङ्गः द्वादशं तव रामेश्वरामिधं तवैव लिङ्गे तत्सर्वमस्तु रामेश्वरे सदा ।" (आ०रा०१।१०।७८-७९)

(इयमपि चर्चा नान्यत्र दृश्यते)

ततश्च रामाज्ञयाऽङ्गदस्य रावण समीपगमनं शान्तिसन्देश—कथनं लङ्कायाः सौधमेकमानयनादिकं च सुमधुरं वर्णितम् ।

सुग्रीवश्चाङ्गदमुखेन रावण गर्वोक्तिं श्रुत्वा रावणेन सह मल्लयुद्धं चक्रे । तत्र माल्यवान् रावणायोपदेशं ददौ ।

अनन्तर राम रावणयो युद्धारम्भः । मेघनादस्य शक्ति प्रयोगेण लक्ष्मण सहिता सकल वानर सेना संमूर्च्छिता । ततश्च रामाज्ञया हनूमान् द्रोणाचलमानीय तत्रस्थितौषधिना सर्वेषां मूर्च्छा भग्ना मार्गे हनूमद्द्वारा कालनेमि राक्षस्य वधः । हनूमान् कामाख्या देव्याः दर्शनं कृतवान् ।

ततश्च भीषण युद्धे लक्ष्मणेन मेघनादः हतः। तस्य पत्नी सुलोचना सती सञ्जाता। रावणेन रामस्य कृत्रिम-छिन्न मस्तक प्रदर्शनेन सीता शोक-विह्वला जाता मन्दोदरी तत्रागत्य तां प्रबोधितवती।

पुनश्च रावणः सीताया कृत्रिम छिन्नशिरः दर्शयामास। रामेण भेदोऽयं पूर्वमेव ज्ञातः।

ततश्च राम रावणयोर्भयानकः युद्धः समभूत, रावणश्च तत्र हतः। सर्वत्र हाहाकारो जातः। देवाश्च मुदमापुः। एवं रूपेण रामरावणयोः युद्ध-कथाऽत्र समाप्ता।

ततश्च तत्रैव सीतारामयोः पुनर्मिलनं जातम्। अयोध्या—प्रत्यागम-नस्यायोजनं जातम्। त्रिजटायै वरदान प्रदानम्। अयोध्यां प्रत्यागच्छता रामेण मार्गे सीतां विविध दृश्य दर्शनं कारितम्।

इतश्च नन्दिग्रामे राम-प्रत्यावर्तनावधिव्यतीतेऽहनि भरतः चिता-प्रवेशार्थमुद्यतो जातस्तदैव हनुमतस्तत्र प्रवेशः।

राम भरतयोर्मिलनं रामराज्याभिषेकं वशिष्ठस्य रामं प्रत्युपदेशः। सर्व-मेतदद्भुतम्। **तस्मिन्नेव काले स्वर्गात् दशरथस्यागमन कथा तु सर्वत्राऽत्र नूतनाऽद्भुता च।** एतस्मिन्नन्तरे तत्र राजादशरथो महान् दृष्ट्वा रामं ससीतं च विमानस्थोऽर्कसंनिभः। १२।१३५

हनूमते विविध वरदानं सुग्रीव विभीषणादि सहित पुष्पक विमानस्य परावर्तनादेशस्तत्रत्य कारुणिक दृश्यं च चमत्कार पूर्णम्।

एवं रामजन्मतो रावणबध पर्यन्तं पुनरयोध्या—गमनमभिषेकादि वर्ण-नेन परिपूरितेयं कथाऽत्र समाप्ता।

सारकाण्डस्यान्तिमे त्रयोदश सर्गे रावण कुम्भकर्ण जन्मवृत्तान्तं मातु-राज्ञया रावणस्य शिवलिङ्गानयनार्थं कैलाशगमनं तत्र शिवं प्रपद्य वरदान प्राप्ति कथा रावण बालि युद्ध कथा तत्र रावण पराजय कथा विद्यते।

हनूमतो जन्मवर्णनं बालि सुग्रीवयोर्जन्म कथा, हनुमता सूर्यस्य निग-लन विवरणं राम राज्यस्य सुख शान्तिवर्णनं च सविस्तरं राजते।

नेयं कथाऽन्यस्मिन् रामायणे कुत्रापि दृश्यते। फलतः बाल्मीकि-रामायण मूलकथातो भिन्ना आनन्दायिनी कथा वर्तते।

एवं क्रमेण एकस्मिन्नेव सारकाण्डे सकलामुख्य कथा समाविष्टाऽस्ति। तदनन्तरं यात्रा काण्डतः पूर्णकाण्ड पर्यन्तं रामकाव्यस्य—सर्वथा नूतना विद्या विद्योतते यासां संक्षिप्त विवरणमग्रे प्रदीयते।

यात्राकाण्डम्

शिवपार्वती सम्वादात्मकेऽस्मिन् काण्डे रामायणोत्पत्ति वृत्तान्तादारभ्य रामस्य तीर्थयात्रा पर्यंतं चमत्कारपूर्णं वर्णनं विद्यते। (सर्ग १ श्लोक १-२, ५-९, १७, २३-२५, ३१-३२)

एतेषु पद्येषु वाल्मीकेः रामायण निर्माण कथा—प्रारब्धा। तां श्रवणार्थं देवगणाः समाजग्मुः। रामकथां श्रुत्वा रामायण प्राप्त्यर्थं तेषु परस्परं विवादो जातः। तत्र स्वयं भगवान् विष्णुरागत्य विभाजनं चकार। (२।१-६,१२-१६)

तत्र चतुरः श्लोकान् व्यासाय ददौ (ते च २।५९-६२)। ये च श्लोकाः महत्त्वपूर्णारहस्यात्मकाः।[1]

तदनन्तरं सीता गङ्गा तटं चलितुं प्रार्थितवती। गङ्गातट-यात्रार्थं रामः लक्ष्मणमाज्ञापयामास। अत्र यात्रोल्लास-वर्णनं मनोहारि। सीताद्वारा ब्राह्मणैः सह गङ्गा-पूजन—वर्णनं सविस्तरमस्ति। रामदर्शनार्थमत्र च्यवन-मुनिरागतवान्। तेन मुनिना कष्टस्य वृत्तान्तं कथितम्। तत् श्रुत्वा तन्नि-वारणार्थमाश्वासनं दत्तवान् रामः।

ततो रामः तीर्थयात्रार्थं प्रस्थितवान्। तीर्थयात्रा क्रमे प्रयागमागतः। तत्र स्नानं दानादिकं च विधीय—प्रयागात् काशीं प्रतस्थे। तत्र चैकवर्षं यावत् तस्थौ। एतन्मध्येऽनेक तीर्थानामत्र स्थापना कृता रामेण।

काशीतो रामः गया—क्षेत्रमागत्य फल्गु नद्यां सीताद्वारा बालुका निर्मित—पिण्डं ददौ यच्च दशरथः साक्षादुपस्थाय पिण्डं गृहीतवान्।

---

१. अहमेवासमेवाग्रे नान्यद्यत्सदसत्परम।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवविष्येत सोऽस्म्यहम्॥
ऋतेऽर्थं यत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि।
तद्विद्यात्मनो मायां यथाऽऽभासो यथा तमः॥
यथामहान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम्॥
एतावदेव जिज्ञास्यं तत्वजिज्ञासुनाऽऽत्मनः।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत्स्यासर्वत्र सर्वदा॥—आ०रा० २।२।५९-६२.

पितुर्दर्शनार्थं व्याकुलं रामं दृष्टवा भगवान् सूर्यस्तत्रागत्य दशरथं प्रत्यक्षं कारितवान्। पितुर्दर्शनेन रामः कृतार्थो विह्वलश्च सञ्जातः।

गयातो रामः दक्षिण भारतस्य तीर्थयात्रायां प्रस्थितस्तत्र मार्गे कन्या-कुमारी मिलिता। यस्यै वरदानं प्रदत्तवान्। ततो रामः पश्चिमदिशास्थ-तीर्थयात्रां विधायोत्तरदिशास्थित विविध तीर्थान्—दर्शं दर्शं भगवतो बदरीनारयणस्य दर्शनं चकार।

ततश्च मानसरोवरं दृष्टुं कैलाशं जगाम। तत्र सीता कामधेनुं गां प्राप्तवती। एवं रूपेण भारतस्य चतुर्दिक्षु स्थितेषु तीर्थेषु दर्शनादिकं विधाय सीतालक्ष्मण सहितो रामः अयोध्यां प्रत्याययौ। तत्र साकेते एतेषां भव्य स्वागतं जातम्।

इयमेव संक्षिप्त कथा यात्राकाण्डे विद्यते या च वाल्मीकि रामायणस्य मूल कथातरे भिन्ना नवीना च।

अतएवोक्तं बाल्मीकिनैव "चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम्।"

यागकाण्डम्

अस्मिन् काण्डे अश्वमेध यज्ञ करणार्थं रामः गुरू वसिष्ठेन सह मन्त्रणां कृतवान् । वसिष्ठः यज्ञं कर्तुमादेशं लक्ष्मणं दत्वा च यज्ञव्यवस्थायै निर्दिष्टवान् । यज्ञ सामग्री संगृहीता । अति विशालं यज्ञोपकरणं दृष्ट्वा सर्वे चकिताः ।

सीता-रामौ यज्ञवेद्यामुपविश्य विधिवत् पूजनं कृतवन्तौ यत् वसिष्ठेन कारितम् । ततश्च महर्षिः वसिष्ठः सीतारामाभ्यां यज्ञस्य दीक्षां प्रददौ (३ । २ । १३)

यज्ञानुष्ठानार्थं स्वयं वसिष्ठः अध्वर्युः सञ्जातः, स्वयं ब्रह्मा यज्ञ-ब्रह्माऽभूत्, विश्वामित्रो होता तथा शतानन्दः उद्गाता बभूव । कश्यपाद्याः ऋषयः ऋत्विजः सञ्जाताः ।

एवं सञ्जाते श्यामकर्णमश्वं विधिवत् प्रपूज्य तमश्वं भूतल भ्रमणार्थं मुमोच । तस्याश्वस्य रक्षाणार्थं सुमन्त्रादि सैन्य सहितं शत्रुघ्नं नियोजयामास (३ । २ । १५-२०) ।

ततश्च रामः सीतया सह विभिन्न कथां श्रृण्वन् तत्रोपविष्ट आसीत् । तत्र सहस्त्रशो ऋषयः यज्ञ समाचारं ज्ञात्वा तत्रोपस्थिताः सञ्जाताः । यज्ञस्यास्य शोभाऽवर्णनीयाऽतुलनीया चासीत् ।

श्याम कर्णाश्वेन सह शत्रुघ्नः ब्रह्मावर्तं मगधादि-विविधदेशं भ्रमन् सकुशलं विजयं प्राप्य यज्ञभूमिमागतवान् । सर्वे ऋषयः प्रजाश्च सुप्रसन्नाः बभूवुः ।

एतस्मिन् यज्ञ समये पार्वत्या सह साक्षात् **भगवान् शिवः समुपस्थितः। शिवेन सह रामस्य मनोरञ्जको वार्तालापः संबभूव** । (३।४।३-४)

तत्र ऋषिणा विष्णुदासेन रामाष्टोत्तर शतनाम श्रावितानि । एवं रूपेण नानाविधि विधानैरश्वमेध यज्ञः सुसम्पन्नः । एतस्य विस्तृत वर्णनं पठन श्रावणाभ्यां सर्वार्थं सिद्धिः संभाविता ।

अश्वमेध यज्ञ समापयनन्तरं रामेण सरयूनद्याम् **'अवभृथ स्थानं'** कृतं यत् स्नानं यज्ञान्ते एतन्नामक स्नानाभिषेकेण जायते ।

तदनन्तरं रामः कामधेनुं गां दक्षिणायां दन्तुमुद्यतोऽभूत् । किन्तु वसिष्ठेन गोः स्थाने सालङ्कारां सीतामेव ययाच । (३।८।६०-६९)

यदि दास्यसि देया मे सीताऽलंकारमण्डिता ।
तया तृप्तिभवेन्मेऽद्य नान्यैर्नारीशतैरपि ।।

(आ० रा० ३।८।६२.)

ततो वसिष्ठः सीतामष्टवारं सुवर्णेन तोलयित्वा तत्सर्वं सुवर्णं मह्यं प्रदाय सीतां पुनर्मद्वचसा ग्रहाण ।* रामेण तथैव कृतम् । ततो वसिष्ठः पुनः रामायोपदेशं ददौ (३।८।७५-८०) ।**(कथेयमद्भुताश्रुतपूर्वाच)**

अश्वमेध यज्ञान्ते शिवः रामेण वरं याचितवान् । रामश्च तस्मै वर-दानं ददौ । पार्वती च सीतया वरं ययाचे, सीताऽपि तस्यै वरदानं ददौ ।

यज्ञे समागता ऋषयो महर्षयो देवगणाश्च सम्मानिताः सुसन्तुष्टाः प्रस्थितवन्तः ।

रामश्चायोध्या—राजसिंहासनमुपविश्य राज्य कार्यं प्रारंभे ।

(एवं रूपेणात्रत्याः यज्ञ कथाः सर्वथा नूतना मनोहारिणी चमत्कारिणी वाल्मीकि रामायण मूलकथातः सर्वथा विलक्षणा विद्यते । अनुमीयते यदस्मिन् आनन्दरामायणे जनानन्दार्थं सर्वं वर्णनं तथैव विद्यते ।

---

* तदगुरोर्वचनं श्रुत्वा तथेत्युक्त्वा रघूत्तमः । सीतां तुलायामारोप्य सुवर्णेनाष्ट संख्यया ।।३।८।८१.

'विलास-काण्डम्'

काण्डेऽस्मिन् मुख्यरूपेण सीतारामयोः विलास वर्णनं राजते। एवं प्रकारेण प्रायः कस्मिन्नपि रामायणे वर्णनं नैव दृश्यते। सहैवात्र शिवकृत-रामस्तोत्रं तथा लोपामुद्रया सह शास्त्र चर्चायां सीता विजय-कथा चमत्कारिणी विद्यते :

सर्वप्रथमं शिवकृत रामस्तुतिर्विशदेन वर्णिता। तस्य स्तोत्रस्य द्वित्रिमन्त्रि पद्यानि-निम्नोद्धृतानि सन्ति।

विज्ञानहेतुं विमलायताक्षं प्रज्ञानसद्दिव्यसुखैकरूपम्।
श्रीरामचन्द्रं हरिमादिदेवं विश्वेश्वरं राममहं भजामि॥
कविं पुराणं पुरुषं परेशं सनातनं योगिनमीशितारम्।
अणोरणीयांसमनन्तवीर्यं प्राणेश्वरं राममहं भजामि॥
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं ज्योतिर्मयं राममहं भजामि।
अशेषसंसारविकारहीनमानन्दसम्पूर्णसुखाभिरामम् ॥
नारायणं विष्णुमहं भजामि समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात्।
मुनीन्द्र गुह्यं परिपूर्णमेकं कलानिधिं कल्मषनाशहेतुम्।
परात्परं यत्परमं पवित्रं नमामि रामं महतो महान्तम्॥

(आ० रा० ४।१। २६-२७, ६१-६२)

तदनन्तरं रामः सीतायाः अलौकिक सौन्दर्यस्य सविस्तरं वर्णनं कृतवान् (४ । २ । ३९-७२)

तदनन्तरं सीतया पृष्टो रामः आत्मतत्व ज्ञानाय देह रामायणस्य (स्वब्रह्मणः स्वरूपस्य) गुह्य रहस्यात्मकं वर्णनं कृयवान्।

तथा सीतायाः अलङ्कार वर्णनं सुविशदं कृतवान्।

तदनन्तरं सीतारामयोर्जल विहारवर्णनं तु
श्रृंगाररसाभिव्यक्तेः सूक्ष्मतमं विशद वर्णनं दृष्ट्वा पठित्वा च प्रकृति पुरूषयोर्मधुर भावात्मक रस वर्णनं विद्यते। नान्यस्मिन् कस्मिन्नपि रामायणे एवंरूपेण वर्णनं दृश्यते।

अनुमीयते यदत्रानन्द रामकथाकारः भाविनो द्वापरयुगस्य राधाकृष्ण-योर्महारास वर्णनस्य पूर्व पीठिका रूपे त्रेतायामेव तथा वर्णनद्वारा, रूप-

गोस्वामिनः "उज्जवल-नीलमणि" नामके रस सिद्धान्त प्रतिपादक-ग्रन्थ-वदत्र मधुराख्य भक्ति-रसस्य" सिद्धान्तमेव प्रतिपादितवान् ।

अत्र प्रकृति पुरूषात्मकयोः सीतारामयोः कौतुक वर्णनं, सीता द्वारा एकस्यै दरिद्र ब्राह्मण्यै लक्षस्वर्ण मुद्रादानं, लक्ष्मण द्वारा सर्वेभ्यो दीनेभ्यो वस्त्राभूषण दान घोषणा विधानादिकं सर्वमद्भुतं मनोहारि चमत्कारकारि विद्यते ।

(४ । ५ । ४५-४६, ५३, ५६, एवम् ४ । ६ । २६-२७)

ततो व्यासः राम समीपमागत्य रामस्यैक पत्नीव्रतस्य प्रशंसां चकार। तत्रैवानेक नारीभ्यः रामस्य वरदान वर्णनादिकं महत्त्वपूर्णं विद्यते ।

अन्त्येच रामस्य कुरूक्षेत्र यात्रा वर्णनेऽगस्त्याश्रमे लोपामुद्रया साकं सीतायाः शास्त्र चर्चा सर्वथा विलक्षणा । यत्र सीताया एव विजयो जातः ।

(४।९।९-१३, २१-२७)

एवंरूपेण विलासकाण्ड श्रवण फलमपि वर्तते । अस्य काण्डस्य वर्णनेनापि "**आनन्द रामायण"मिति नाम सार्थकं प्रतीयते ।**

"जन्मकाण्डम्"

एतस्मिन् काण्डे सर्वप्रथमं धात्रीमुखात् सीतायाः गर्भावस्था प्राप्ति—सूचनां प्राप्य रामोमुदमाप। सीता वन विहारार्थं गन्तुकामा बभूव। तदर्थं रामचन्द्रः लक्ष्मणमाज्ञां प्रेषितवान्। लक्ष्मणः सर्वां पूर्वव्यवस्थां कृतवान्।

रामः सकल परिवारसदस्यैः सीतया च सह शिविकामारूह्य वनं प्रतस्थे। तत्र वनस्य सुरम्य—शोभां दर्शं दर्शमानन्दं लेभिरे। अस्मिन् समये समाचारमिमं श्रुत्वा जनकोऽपि मिथिलातः समाययौ।

गर्भस्य षष्ठे मासि तत्रैव सीतायाः सीमन्तोन्नयन संस्कारः शास्त्रीय विधिना सुसम्पन्नः।

एकस्मिन् दिने रामो जनकेन सह एकान्ते गम्भीर वार्तालाप क्रमेऽवोचत्। यत् प्रसूति-पर्यन्तं ततश्च पञ्च-मासपर्यन्तं सीतां वाल्मीकेराश्रमे स्थापयिष्यामि। तत्र सपत्नीकाः भवन्तः कृपया तिष्ठन्तु इति मे प्रार्थना।[1] जनकोऽपि विचारेणानेन सहमतो जातः। इत्थं विचार्य जनकः प्रस्तुतोभूत्वा प्रत्यागमनार्थं जनकपुरं ययौ।

रामः स्वयमेव सीतया सह वाल्मीकेराश्रम ययौ। तत्र सर्वाः पूर्वव्यवस्थाः सुसज्जिताः सञ्जाताः। **यत्र साक्षात् सीतारामावुपस्थितौ तत्र कथं न सर्व साधनानि स्युः।**

ततो रामेण सीतया सह रहसि विचार विमर्शः कृतः। एतत्क्रमे रामः सीतामुक्तवान्, यत् रजककथितमपवादमनसि निधाय त्वामत्रैव प्रसूत्यनन्तरं पञ्च मास पर्यन्तमवस्थितेर्व्यवस्थां करिष्ये। प्रसूतेरनन्तरं पञ्चमासं पर्यन्तं स्त्रीसंयोगोऽपि वर्जितः। पुनस्तदनन्तरं त्वां नेष्यामि, तथा चिरकाल पर्यन्तं राज्यादि सुखभोगं करिष्यामि।[2]

---

१. प्रसूत्यग्रे पञ्चमासैः स्त्रीस्वास्थ्यं प्राप्यते पुनः। पञ्चमासैर्विना सङ्गाद्दंपत्योः क्षीणतेरिता ॥५।२।३७। गङ्गाया दक्षिणे तीरे वाल्मीकेराश्रमे शुभे। त्यजामि जानकीं शुद्धां किञ्चित्कालान्तरात्पुनः ॥५।२।४१। जनकाद्य त्वया तत्र निजपत्न्या सुमेधया। वाल्मीकेराश्रमे गत्वा स्थेयं वर्षाणि पञ्च वै ॥५।२।४३।

२. एकान्ते जानकीं प्राह वीजितो लक्ष्मणेन हि। कल्पयित्वा मिष देवि रजकोक्तं त्वदाश्रयम्। त्यजामि त्वां वने लोकवादाद्भीत इवापरः। त्रिमासात्पञ्चमासाद्वा सप्तमासात्सुबुद्धिभिः। अन्तर्वत्नी न गम्येति शास्त्राज्ञां रजकच्छलात्। त्वां त्यक्त्वा पालयिष्यामि निकटे वस्तुमक्षमः॥ (५।३।४६)। तस्मात्कृतोऽयं निर्बन्धः सत्यं विद्धि मनोरमे। पञ्चवर्षानन्तरेण पुनरागत्य मेऽन्तिकम्॥ लोकानां प्रत्ययार्थं त्वं शपथं हि करिष्यसि। भूमेर्विवरमार्गेण स्थित्वा सिंहासनोपरि॥ ५।३।८-९।

एतदनन्तरं रामचन्द्राज्ञया लक्ष्मणः सीतां वने त्यागार्थं प्रतस्थे। त्यागस्य कारणं तु पूर्वोक्त रजकोक्तापवाद एव मुख्यः। वाल्मीकेराश्रमं गत्वा सीतां स्थापितवान्।

तत्रार्धरात्रौ सीतापुत्रद्वयं जनयामास। तत्र रामोऽपि विमानादुपस्थितः। सीतां दृष्ट्वा रामोऽश्वमेधयज्ञस्य पुनर्निश्चयं कृतवान्। **अस्मिन् विशिष्ट यज्ञे स्वर्णमयीं सीतां निर्मापयित्वा यज्ञं चकार।**

एतन्मध्ये बाल्मीकिना कुशलवेभ्यः रामायणशिक्षां ददौ। तत्र विष्णुदासेन रामरक्षा स्तोत्रं पठितं यत्स्तोत्रमति गुह्यतमं महनीयं च।

ततः सीता पति वियोग नाशार्थं वाल्मीकिं यथायोग्यमुपायं पृष्टवती। महर्षिणा तथोपदिष्टम्।

अयोध्यायां रामस्य शताश्वमेध यज्ञ समये सीतयासह वाल्मीकिरागतवान्। यज्ञस्थले सर्वेविस्मिताः जाताः। रामोऽव्यथित आसीत्। सर्वेषां समक्षमेव सीता पृथिव्यां प्रविष्टा। रामः व्यथितः सन् पृथ्वींप्रार्थितवान्। यदा पृथ्वी प्रार्थनामुपेक्षवती तदा क्रुद्धो रामः पृथिव्याः सीतां प्रत्यावर्तितवान्। **पुनस्तत्र सीता रामयोर्मिलनं जातम्।** यज्ञे च समागताः ऋषयः स्वस्थानं ययुः।

'कथयाऽनया संयोगान्तमिदं रामायणकथानकमितिसुस्पष्टम्'।

एतन्मध्ये उर्मिला माण्डवी श्रुतिकीर्त्ति प्रभृतयस्त्रियो भ्रातृबध्वोऽपि गर्भिण्यः जातास्तथा यथा समयं पुत्रांश्च जनितवत्यः। भगिनीभिः सह सीता सानन्दं समयं यापितवती।

गुरु वसिष्ठेन सर्वेषां नामकरणादिकं कारितम्। लव कुशयोरूपनयनस्य परामर्शं कृतवान् वसिष्ठेन सह रामचन्द्रः। वसिष्ठेनादिष्टः यथायोग्यमुपनयनादि संस्कारं विधाय वेदाध्ययनार्थं गुरु गृहं प्रेषितास्ते बालकाः।

अध्यापनानन्तरं सर्वेऽयोध्यां प्रत्यागतवन्तः। तदाऽयोध्यायां महत्तुत्साहपूर्णोत्सवो बभूव।

एवंरूपेणास्मिन् काण्डे सीतापरित्याग पुनरागमन लवकुशादि सहिताऽन्यासांबधूनां पुत्रादिजन्मकथादिवर्णनं सर्वथा नूतन शैल्यां प्रचलित कथातो भिन्नं विद्यते।

विवाह काण्डम्

अस्मिन् काण्डे लवकुशसहित सर्वेषां राजकुमाराणां विस्तृतरूपेण विवाहोत्सववर्णनं मुख्यमस्ति ।

सर्वप्रथमं राम सभायां पूर्वदेशाधिपतेः भूरिकीर्त्तिमहाराजस्य दूतः तस्य सन्देश पत्रेण सह समागतः । तेन लिखितं यन्मम चम्पिका सुमति नाम्न्योः उभयोः पौत्र्योः स्वयम्वरे समागमनार्थं तत्र भवन्तं भगवन्तं प्रार्थये ।

लक्ष्मणद्वारा पत्रं श्रुत्वा तत्र गमनस्य निश्चयं कृत्वा सर्वैः राजकुमारैः सह तत्र प्रस्थितवान् । भगवतो रामचन्द्रस्यागमनं श्रुत्वा भूरिकीर्त्तेर्नगर-वासिनोनां नारीणामसीमा प्रसन्नता दर्शनीया जाता ।

प्रातः स्वयम्वरायोजने विभिन्न देशीयाः—राजकुमाराश्चोपस्थिताः आसन् । तत्र सुनन्दानाम्न्या दूत्या सह चम्पिका स्वयम्वर मण्डपे प्रविष्टा । सुनन्दा क्रमशः सर्वेषां राज्ञां परिचयं प्रदत्तवती । चम्पिका क्रमशः सर्वान् विहायराम समीपमागतवती, तथा कुशस्य ग्रीवायां वरमालां सर्मपितवती । पुनश्च सुनन्दा सुमतिं नीत्वा सर्वेषां राजकुमाराणां परिचयं दत्तवती । सुमतिस्तु क्रमशः सर्वान् परित्यज्य लवस्य मूर्धनि वरमाला सर्मपितवती ।

एवं रूपेण कुश लवयोरुभयोः भ्रात्रोः परिणयः चम्पिका—सुमतिभ्यां साकं सोत्साहं विधिवत् वैदिकरीत्या सञ्जातः ।

तत्र रामस्य विशिष्ट सत्कारोऽभूत् । रामश्च स्वपुत्र-पुत्रबधूभ्यां साकं साकेतमाजगाम । तत्रायोध्यायां महान् उत्सवः स्वागतश्च समभूत् ।

पुनः रामचन्द्रः सीतया भ्रातृभिः सह अगस्त्याश्रमं प्रतस्थे । अगस्त्या-श्रमे पञ्चाप्सरसः मिलिताः । अगस्त्य ऋषिणा तासां परिचयं प्राप्य रामो वाणं सन्दधे । ततस्ताः पञ्च जलदेवीरूपेण परिवर्तिताः—सत्यः, रामाय इमां द्वादशकन्यां सर्मपितवान् ।

तत्र विविधा-गन्धर्वाः पन्नगाश्च समागताः । अयोध्यामागमनार्थं तेभ्यः आज्ञां ददौ । ताभिः कन्याभिः सह रामोऽयोध्यामागत्य तान् कन्यकान् वसिष्ठाश्रमे स्थापितवान् ।

गन्धर्वाद्यश्चायोध्यामागतवन्तः। शुभेमुहूर्त्तेतासां सर्वासां कन्यकानां विवाहः भरत लक्ष्मण शत्रुघ्नानां पुत्रैः सह स्वयं रामचन्द्रेण कारितः।

सर्वे भ्रातरो मातरः पुत्रवध्वश्च रामद्वारानिर्धारिते—राज प्रासादे सानन्दं कालं यापयामासतुः। प्रतिदिनं ते पुत्राः दैनिक पूजां हवनं च कुर्वन्तिस्म। सायं प्रतिदिनं वसिष्ठेन पौराणिक कथां च श्रुतवन्तः आसन्।

तथा च सर्वे भ्रातरः पुत्रादयश्च यथासमयं रामेण सह जलपानादिकं कुर्वन्त आसन्। एवं प्रकारेण रामः सीतया तथा परिवारेण सह सर्वथा सानन्दं जीवनं यापयामास। नात्र कुत्रापि कश्चन भाव भेदः, विवादो वा केनापि साकमभूत्।

अस्य काण्डस्यापि कथा वाल्मीकि रामायण मूल कथातः सर्वथाभिन्ना मनोहारिणी आनन्दवर्धिनी च।

राज्यकाण्डम्

(पूर्वार्द्धमुत्तरार्द्धं च)

अस्मिन् काण्डे पूर्वार्धोत्तरार्धरूपेण द्वौ भागौ विद्येते। उभयोर्भागयोर्मध्ये विविधाः विचित्राद्भुताश्च कथाः सन्ति **याश्च कथाः कस्मिनन्यस्मिन् रामायणे न वर्तन्ते।**

आसु कथासु मुख्यरूपेण रामस्य राज्यशासन प्रणाली, विविध देश यात्रा, विविधोपदेश श्रृंखला तथा सीता द्वारा भयङ्कर-मूलकासुर वध चर्चाश्च विद्यन्ते।

सर्वप्रथमं सनत्कुमार द्वारा **'राम-सहस्रनामस्तोत्र'** पारायणं दृश्यते। ततश्च सहसा षष्ठिसहस्र शिष्यैः साकं दुर्वासा ऋषेः रामसमीपमागमनं तथा सर्वेषां भोजनार्थमादेशदानमेवं च तेषां पूजनार्थं विशिष्ट पुष्पाणां प्रबन्ध-स्यादेश प्रदानमवलोक्यते।

रामेण पत्रेणैकेन सह इन्द्र समीपे वाणप्रेषणमिन्द्रेण च कल्पवृक्षं पारि जात पुष्पं च स्वयमयोध्यामागत्य प्रदत्तम्। तत्प्रभावेण दुर्वासा ऋषेः सर्वविधयाचना पूर्तिर्जाता। प्रसन्नो दुर्वासाः रामस्तुतिं कृत्वा सर्वैः साकं प्रतस्थे।

ततश्च कुम्भकर्णस्य पौत्रेण-पौण्ड्रेण सहसा लङ्कायामाक्रमणं कृत्वा विभीषणं पराजितम् विभीषणश्च पुनरयोध्यामागत्य रामशरणं ययौ।

रामश्च पुनः लङ्कां गत्वा पौण्ड्रेय साकं युद्धं कृत्वा तं जघान, तथा विभीषणं पुनश्च राज्ये प्रतिष्ठापितवान्।

लङ्कातः परावर्तन काले सामन्त राज्ञा सह प्रचण्ड मूलकासुरेण सह रामः युद्धं चकार। तत्र मूलकासुरवधस्योपायं ब्रह्मा-गुप्तरूपेण सूचितवान्। तदनुसारं गरूड संप्रेष्य रामः सीतामयोध्यातः समानयनस्य व्यवस्थां कृत-वान्। सीता समागत्य मूलकासुरं जघान। सर्वैदेवाः प्रसन्नाः सञ्जाताः। रामः सीतया सहायोध्यां परावर्तितवान्।

ततश्च रामाज्ञया शत्रुघ्नो लवणासुरस्य बधार्थं प्रतस्थे। शत्रुघ्न-द्वारा लवणासुरस्य बधो जातः।

अनन्तरं रामचन्द्रस्य प्लक्षद्वीप-शाकद्वीप-पुष्कर-द्वीपादि यात्रा वर्णनं मनोहारि विद्यते। विजितेषु विभिन्न द्वीपेषु रामेण स्वभ्रातरः भ्रातृपुत्राश्च प्रतिष्ठापिताः।

दण्डकारण्ये कस्यचित् शूद्रस्य तपोदृष्ट्वा तेनसह वार्तालापं कृत्वा तस्मै वरदानं ददौ रामचन्द्रः। (**अत्र बाल्मीकिरामायणस्य शम्बूकवध कथास्थाने इयमेव परिर्वात्तितकथा विद्यते**)।

पुनश्च मृगयायै रामस्य वनयात्रावर्णनं विद्योतते। तत्र षोडष सहस्र संख्याकाः नार्यः मिलिताः। ताश्च सर्वाः स्त्रियो रामोपरि संमोहिता जाताः। ताभ्यो वरदानं दत्वा रामोऽन्तर्धानं ययौ। (**इमा स्त्रिय एव कृष्णावतारे षोडश सहस्र गोपिका रूपेजन्म लेभिरे—इति मन्ये**)।

पुनश्च स्वसभायां कस्य चित् जनस्य हास्यं श्रुत्वा रामो राज्ये हास्यं वर्जितवान्। तदनन्तरं महती कथा विद्यते यस्याः सारांशोऽयमेव यत् वसिष्ठोपदेशेन देवाः प्रजाश्च शान्तास्तथा रामः स्वकीयादेशं परावर्तितवान्।

रामः लव-कुश सहित भ्रातृ पुत्रभ्यो राजनीतेरूपदेशं प्रदत्तवान्, ये चोपदेशा महत्त्वपूर्णाः (७।१६।२-१५)।

ततश्च रामस्य दिनचर्या वर्णनं वैद्येन दैवज्ञेन सह रामस्य वार्तालाप-वर्णनं वर्तते।

सीतायाः जिज्ञासायां कुश लवातिरिक्त सन्तानाभावस्य कारणं राम द्वारा वर्णितमस्ति। (७।१९।११६-२१)।

अत्र च मृतस्य सुमन्त्रस्य पुनर्जीवनदानं-कथा, आनन्द रामायण पाठस्य महत् फलमति-विशिष्ट-फलदायक-वर्णनमपि विराजते।

यथापूर्वमेवोक्तं यदस्य काण्डस्य कथा सर्वथा चमत्कारकारिका विद्यते या चानन्ददायिका।

मनोहरकाण्डम्

काण्डमिद वस्तुतो मनोहरम्। कथाऽत्र मनोहारिणी रहस्यपूर्णा। सर्वेऽ-योध्यावासिनः उपदेशप्रदानार्थं रामं याचितवन्तः। तदा रामो दूत द्वारा, प्रातश्च स्वयं रामचन्द्रेणोपदेशाः प्रदत्ताः।

ततश्च कैकेयी सुमित्रा कौशल्यादिभ्यश्च क्रमशो यथायोग्यमुपदेशं ददौ। क्रमशश्च ताः तिस्रोमातरोदिवंगताः।

एतदनन्तरं रामस्य मानसवाह्य पूजा विधानं वर्णितम्। विभिन्नाक्षर युत राम मन्त्राः पुष्पाञ्जलि मन्त्राश्च विद्योतन्ते।

प्रतिदिनं पूजा विधान शास्त्राध्ययन चर्चा विविध रामायण चर्चा च विराजन्ते।

ततश्च चैत्रमास महिमा चैत्र पूजा विधानं **हनूमत्कवचं, तस्य माहात्म्यं सीताष्टोत्तरशनाम स्तोत्रं**, लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न कवचाश्च वर्णितानि सन्ति।

तत्र रामोपदिष्टं साररामायण कथा वर्णनमति महत्वपूर्णम्।

एवं रूपेण "मनोहर काण्डं" नामानुगुणानुरूपं विराजते।

पूर्ण काण्डम्

आनन्दरामायणस्येदमन्तिमं काण्डं पूर्णता प्राप्तं नात्र सन्देहलवः।

काण्डेऽस्मिन् हस्तिनापुरतो राम समीपं दूतस्यागमनं रामस्य तत्र प्रस्थानं तत्र सोमवंशोद्‌भवेन राज्ञा सह रामस्य भीषण युद्ध वर्णनं सीतया च निवारित युद्ध कथा वर्णणं च विद्यन्ते।

तदनन्तरं ब्रह्मणा रामचन्द्रस्य वैकुण्ठागमन प्रार्थना, रामस्य स्वीकृतिश्च विशदेन वर्णिता वर्तते।

ततश्च सर्वेभ्यो यथा स्थानं प्रतिनियोजनमयोध्यावासिभ्यो वानरादिभ्यश्च "सान्तानिक लोक" प्राप्ति वरदानं दृश्यते।

स्वयं च भगवान् रामचन्द्रः सीतया सह गरूडोपरि समुपविश्य वैकुण्ठ ययौ। तत्र महानुत्सवः स्वागत—सत्काराश्च सम्पन्नाः। (९।६।२-१५)

तदनन्तरमानन्दरामायणान्यरामायण भेदकरणं निर्दिष्टम् (९।७। २८-३६)। एवंरूपेण पूर्णतां गतमिदं पूर्णकाण्डम्।

"इत्थं हि रामायणमिदं सर्वेभ्यः श्रेयस्करंप्रेयस्करं च भूयात्।"

तथाहि संक्षिप्तरूपेणोपर्युक्त कथा सारांशैरेवास्यानन्द रामायणान्तर्गता सर्वथा मनोहारिणी चमत्कारपूर्णाऽन्यत्र दुर्लभाऽदृष्टा च शतकोटि रामायणान्तर्गत कथा-सुधाधारा-सदा प्रवहमाना विद्यते यस्यां सुधाधरायां प्रविश्य ज्ञानरत्नान्यादाय भक्ताश्चिन्तकाश्च चिरन्तन-शाश्वतानन्द प्रकाशे-जीवन यात्रां सफलीकर्तुं क्षमाः स्युः।

●

भारतीय वाङ्मयेषु रामकथा वर्णनम्

प्रथमं खण्डम्

(३)

"अद्भुत रामायणम्"

पुरोवाक्

अद्भुतरामायणमदः बाल्मीकि प्रणीतमेवेति सिद्धमस्ति। मूल-बाल्मीकि रामायण कथातः सर्वथा भिन्नमस्य रामायणस्य कथानकम्।

अत्रत्या कथा पूर्णतोऽध्यात्मपरा। शक्तिप्रधानमिदं रामायणं किञ्चिन्नूतनतामादधाति। प्रकृतिपुरुषात्मिकायाः सृष्टेरस्याः या स्थिति स्तथैवात्र सीतारामाभ्यां धराभारहरणार्थ विशिष्ट शक्ति प्रदर्शनपूर्ण वर्णनमत्र।

सहस्रवाहुरावणेन सह युद्धे पराजिते रामे महाकाली स्वरूपधारिणी सीता तं सहस्रवाहुरावणं हत्वा रामस्य प्राण रक्षां कृतवती। इयमेव कथाऽत्र सविस्तारं वर्णिता। सहस्त्रावाहुबधानन्तरमेव सैन्यैः सह रामोऽयोध्यामागतवान्।

रामायणेऽस्मिन् तान्त्रिकपद्धत्योपासना मार्गः प्रदर्शितः यस्यामुपासनायां स्त्री शूद्रादीनामबाधप्रवेशः।

अत्र २७ सप्तविंशतिरध्यायाः १३५३ श्लोका सन्ति। अन्यच्च समीक्षायां द्रष्टव्यम्।

क्रियती समीक्षा

महर्षि बाल्मीकि निर्मितं रामायणत्रयमुपलभ्यते तेष्वन्यतमोऽद्भुत रामायण ग्रन्थोऽयम्। संक्षिप्ताकारकेऽस्मिन् रामायणे सीताजन्मकथा मूलभूत विशाल बाल्मीकि रामायणकथातः सर्वथा भिन्ना वर्तते। सम्पूर्णाकथाऽत्राध्यात्मपरा।

यत्रान्य रामायणं **पुरुषशक्ति** प्रधानं **तत्रेदं प्रकृति शक्तिप्रधानम्।** यथा प्रकृति पुरुषात्मिकेयं सृष्टिः तथैव संश्लिष्ट सीतारामाभ्यां पृथिव्याः भारहरण वर्णन कर्म-ज्ञान-भक्तियुतं विशिष्ट शक्ति परिचायकमिदं काव्यम्।

रामस्य हनुमते चतुर्भुजरूप दर्शनं हनुमद्द्वारा रचिता पाण्डित्य रहस्यपूर्णा **रामस्तुतिरत्राद्भुता।**

विकराल काली रूपधारिण्या सीतया सहस्रमुख रावणबधोपरान्तं रामस्य मूर्च्छापनयनानन्तरं भगवता रामेण कृता **सीता सहस्रनामस्तुति**श्चास्मिन् रामायणे विचित्रा महत्त्वपूर्णा।

अत्र च तान्त्रिकपद्धत्योपसनाप्रक्रियाप्रधाना यत्र वैदिकी प्रक्रियावत् स्त्रीशूद्रादीनां प्रवेशे न कोऽपि निषेधः प्रतिबन्धो वा।

तन्त्रं च नाम—**'आगमशास्त्रम्'' आगमस्यार्थः—**

आगतं शिववक्त्रेभ्यो **गतं** च गिरिजामुखं
मतं च वासुदेवस्य तस्मा**दागम** उच्यते।

सारांशतोऽयं ग्रन्थः वस्तुतोऽद्भुतोऽन्वर्थ **संज्ञकः श्रीमद्भगवद्गीतावदपरः प्रतिभाति।**

●

अथ सारांश कथारम्भः

अथ तमसातीर निलयोपविष्टं मुनि पुंगवं बाल्मीकिं मुनिं नत्वा भरद्वाजः पृच्छति भो ब्रह्मन्—

शतकोटि प्रविस्तरं रामायणं निर्मितं तदेव पितृ-ब्राह्मणौ नित्यं श्रूयते। तेषु पञ्चविंशति सहस्रं रामायणं पृथिव्यां वर्तते। ततो बाल्मीकिना कथितं भो भरद्वाज शतकोटि प्रविस्तरे रामायण महार्णवे रामचरितं तु महदाश्चर्य-मस्ति। लोके पञ्चविंशति साहस्रं यत्प्रतिष्ठितं तेषु नृणां सदृशं रामचरितं वर्णितमस्ति किन्तु सीतायाश्चरितं विशेषेण नोक्तवान्। तेनात्र गोपनीयं सीतायाश्चरितं तवाग्रे वर्णयामि। सीता-आदि प्रकृतिस्वरूपा, इयं ब्रह्मब्रह्माण्ड संभूता सुखमूर्त्तिस्वरूपाऽस्ति। यदा यदा धर्म ग्लानिर्भवति तदा तदा अधर्मनाशाय प्रकृति संभवौ भवति। रामश्च साक्षात् परंज्योतिः परंधाम परापुमान्। रामसीतयोरणुमात्रोऽपि भेदोनास्ति। रामोऽचिन्त्यः सर्वान्तःस्थः सीता योगात् सीताराम" इति योगि-भिश्चिन्त्यते।

असौ अपाणिपादौ जवनः गृहीतः। अचक्षुः पश्यति अकर्णश्च शृणोति। ब्रह्मवेत्ता त पुराणपुरुषं आहो इतः परं तयोः पृथक् जन्म उदाहरिष्ये।

त्रिशंकोः प्रतिव्रता स्त्री पद्मावती नित्यं गन्ध पुष्पादिभिर्विष्णु पूजां कुर्वन्ती आसीत्। पूजा काले नमोनारायणाय इति दशसहस्रवर्षं जपन्ती आसीत्। अथ कस्मिश्चित् दिने द्वादशीव्रतं कुर्वन्ती पत्या सह नारायण समीपं सुस्वाप। द्वयोः सुप्तयोः नारायणेनोक्तं, त्वं किमिच्छसि, वरं ब्रूहि। तदा पद्मावती ब्रूते भक्तिवन्तं पुत्रं मे देहि। तथेत्युक्त्वा नारायणेन फल-मेकं दत्तवान्। सा तत्फलं स्वामिनं समर्प्य पुनस्तफलं भक्षयामास। ततः कालेन सा कुलवर्धनं नारायणभक्तमेकं पुत्रमसूयत। अम्बरीष नामासौ-ख्यातः। पितर्युपरते श्रीमानभिषिक्तो महात्मभिः राज्यं मंत्रिस्वाधाय महत्-तपश्चकार सः सहस्रवर्षं नारायणस्य जप पूजां च चकार। ततो गरुड़ वाहनः नारायणः ऐरावतमिव यानामारुह्यागत उक्तवान् भो अम्बरीष, त्वां रक्षितुमागतोऽस्मि। अहमिन्द्रोऽस्मि तवार्थे किं देयमिति ब्रूहि। ऐरावता-रूढमिन्द्रं दृष्ट्वाम्बरीषेणोक्तं विष्णुभक्तिपरायणस्त्वामभिसंधाय नाहं तपः

आस्थितवान्। त्वयादत्तं नेच्छामि यथासुखं त्वंगच्छ, मम नाथस्तुनारायणोऽस्ति। त्वांनतोऽस्मि। वृथाकालं मा गमय। ततो नारायणः प्रहस्य स्व स्वरूपं दर्शयामास। ततश्चाम्बरीषः स्तुतिंचकार। त्वां प्रपन्नोऽस्मि, मां पाहि भो जगन्नाथ। ततो नारायणेनोक्तं सर्वदास्यामि। ममभक्तोऽसि-त्वम्। तुभ्यं यथेच्छं फलं दातुं समागतोऽहम्। ततोऽम्बरीषो हर्षगद्गदयागिरा प्रोवाच त्वयि विष्णौ परानन्दे मे मतिः नित्यं वर्ततास्।

एवमुक्तेऽम्बरीषे भगवान् प्रत्युवाच, एवमस्तु तवेच्छा। सुदर्शनचक्रमिदं गृहाण। पुरा रुद्रेणप्रदत्तमिदं ऋषि शापादिकं दुःखं रोगादिकं निहनिष्यति। इत्युक्त्वान्तरधीयत। ततो राजा प्रभुं प्रणम्य, अयोध्या नगरीं प्रविश्य राज्यं स्वधर्मेण पर्यपालयत्। "अश्वमेध शतैरिष्ट्वा वाजपेय शतानि च सागरावरणामिमाँ पृथिवीं पालयामास। तस्मिन् राज्ये गृहे गृहे हरिस्तस्थौ वेदघोषो गृहे च स्वधर्मनिरताः सर्वेवर्णाश्चासन्।

(१-२ सर्गसमाप्तः)

ततः कालान्तरे तत्सुदर्शनप्रभावात् कमललोचनी शुभलक्षणयुक्ता श्रीमतीनामैकाकन्या जाता। परिणयसमयसमायाते अम्बरीषगृहे एकस्मिन् दिने नारद पर्वतौ ऋषो समागतौ। द्वावेव कन्यालोभात् राज्ञः परस्परमेकान्ते स्वामिप्रायं प्रस्ताविनौ। राज्ञाचोक्तं कन्या यस्मै रूपं दृष्ट्वा वरिष्यति तस्मै कन्यां दास्यामि। उभौ मुनिवरौ विष्णोः समीपमाजग्मतुः परस्पर मुक्तञ्चैकान्ते। प्रस्तावानुसारेण तयोः नारद पर्वतयोर्मुखं वानराकारमेकस्य अन्यस्यच गोलांगुलाकारं विष्णुनाकृतम्। ततोऽम्बरीष सभायामुपस्थितौ तौ। श्रीमती द्वयोर्मुन्योराकारं कुरूपं दृष्ट्वा चतुर्भुज विष्णोर्गले मालां ददौ। विष्णुःकन्यां नीत्वा विष्णुलोकमाजगाम। तौ माया प्रभावं बुध्वा राजानं शापं दत्तवन्तौ यद्यारम्य त्वमज्ञानी भविष्यति। शापं प्राप्तेन राज्ञा सुदर्शनचक्र प्रभावात् शापनिर्मुक्तोजातः। क्रुद्धौ नारद पर्वतौ विष्णोः समीपंगत्वा विष्णुमुद्दिश्य शापं ददतुः। हे मधुसूदन छद्मना त्वया श्रीमतीहरणं मायामूर्त्याकृतं, तथैवत्वम्आम्बरीषान्वये राज्ञः दशरथ गृहेपुत्रोभविता धरणीप्रजा श्रीमतीभविष्यति। विदेहश्च तां पालयिष्यति। कश्चित्तांते भार्या रक्षसापदः हरिष्यति। यतः राक्षस धर्मेण शुभा श्रीमती हृता। अतस्तेरक्षसा भार्या छद्मना हर्तव्या। यथा आवाभ्यां श्रीमती कृते दुखं प्राप्तं तथा ते दुःखं भविष्यतीति विप्रौ उक्तवन्तौ।

शोक सन्तप्तौ परस्परमूचतुः यदद्य प्रभृति देहान्तमावां कन्या परिग्रहं न करिष्यावः।

तदतन्तरं राजा अम्बरीषोऽपि मेदिनीं परिपाल्य विष्णु लोकं जगाम। ततः कालानुसारेण रामो दाशरथिर्भूत्वा लब्धबुद्धिकोऽपि कदाचित् कार्यवशतः इयंस्मृतिरायात्येव। पूर्णार्थोऽपि महावाहुरपूर्ण इव दृश्यते। मायावशात् प्रभूणामीदृशी गतिः। रामावतारस्य कारणमिति।

(३-४ सर्ग)

पुरात्रेतायुगे कश्चित् कौशिकोनामद्विजः गानविद्यायां निपुणश्चासीत्। वासुदेवपरायणश्चासौ सदा विष्णुगानरतश्च। कश्चित्पद्माक्षनामको वैश्यः अन्नदानादिना कौशिकं पालयतिस्म। सचासौ शिष्यत्वं स्वीकृत्य गान विद्यायां निपुणोजातः। द्वावपि गुरुशिष्यौ गानविद्याप्रभावेण सर्वंकार्यं परिहाय विष्णु गानं कुर्वन्तौ विष्णुलोकं गतवन्तौ।

नारदश्चापि विष्णुसमीपे सदा गानं करोतिस्म सदा नारद गानेन विष्णुः प्रसीदतिस्म। तत्र तुम्बुरू नामकश्चैकश्चान्योगायकः विष्णुसमीपे लक्ष्मीं स्वगानेन प्रसीदतिस्म। अथैकदा लक्ष्म्या तुम्बुरोः विशिष्ट सत्कारं दृष्ट्वा नारदः कुपितो जातः यतो लक्ष्म्या नारदस्य पूर्णसत्कारो नाभवत्।

ततो मनसाक्रोधसन्तप्तेन नारदः सहसा लक्ष्मीं शशाप। यतः अवहेलया चेष्टीभिर्वहिराक्षिप्तस्तस्तस्मात् लक्ष्मी राक्षसांगर्भसंभवा संजायताम्। हेलयाच राक्षसो त्वां भूतले वहिः क्षेत्स्यति। इत्युक्तेन नारदेन भुवनत्रयं कम्पितम्। देवगन्धर्वदानवाश्च हाहाकारं चक्रुः। पश्चात् नारदोऽपि धिङ्मामिति च ब्रुवन् विललाप। एवम् कृते नारदे नारायणः लक्ष्म्याः सुदारुणं शापं श्रुत्वा लक्ष्म्यासह नारद समीपंगत्वा कृताञ्जलिः प्रणम्य नारदं प्रत्युवाच। भो ब्रह्मन्, "भवता यदुक्तं मह्यं तत्तथा न तदन्यथा तत्रकिञ्चित्प्रार्थयामि कृपां कुरु। यत् 'अरण्यानां मुनीनां स्तोकं स्तोकं शोणितम् कलशापूरितं कामतो या राक्षसी भक्षेत्तस्याः गर्भे तच्छोणित संभवाहंभविष्यामि। नारदोक्तमेवं भविष्यत्येव।

नारदोऽपि नारायणेनप्रेरितः गानबन्धु उलूकस्य समीपं ज्ञानविद्यां प्राप्त्यर्थं गतः स्ववृत्तातं च श्रावयामास। उलूकोऽपि गानविद्या प्राप्तस्य सर्व वृत्तान्तं नारदं श्रावयामास। ततश्चासौ गान वन्धुना दिव्यसहस्र वर्षकम् गीतं शिक्षितम्। ततोनारदः गीत प्रस्तावकादिषु विपंच्यादिषु सर्वस्वर

विमागवित् वभूव। अयुतानि षट्त्रिंशतसहस्राणि शतानि स्मराणां योगेन ज्ञानवान् नारदो जातः। ततोनारदः गान बन्धुकमकथयत् त्वामासाद्य गीतविशारदोऽहं जातः तव प्रियं किं करवाणि। ततो नारदं गानबन्धुराह-गतेषु चतुर्दश मनुषु मम यशो भविता इति प्रार्थयामि।

ततो नारदः प्राह भो उलूक सर्वं तेऽस्तु मनोगतम्। अतीते कल्प संयोगे गरुड़स्त्वं भविष्यसि। गुणगानादच्युतस्य तस्य सायुज्यं लप्स्यसे। स्वरित्ततेऽस्तु महाप्राज्ञ, गमिष्यामि प्रसीद मे इति उक्त्वा नारदः तुम्बुरु जेतुं ययौ। तुम्बुरोश्च गृहाभ्यगते विकृताकृतीन् ददर्श, कृत्त बाहूरूपादांश्च कृत्तनासाक्षिवक्षसः कृत्तोत्तमांगांगुलींश्च छिन्न भिन्न कलेवरान्। पुंसः स्त्रियश्च विकृतान्ददर्शायुतशोबहून्। नारदेन च ते प्रोक्ताः के यूयं कृत-विग्रहाः। ते नारदं प्रोचुः त्वया कृत्तांगाः वयम्। वयं रागाः रागिण्यश्च, तवभिन्न संधानगानेनेदृशी अवस्था जाता। यदा तुम्बुरुः गन्धर्व गानं करोति तदा जीविताः स्मो वयम्। हे नारद त्वंमारयसि इति महदाश्चर्यं दृष्ट्वा नारदः सविस्मितो धिग्धिगुक्त्वा जनार्दन समीपं श्वेत द्वीपं गतवान्। तदा भगवतोक्तं तुम्बुरोः सदृशोऽनेन गानेन नासि नारद। यदाहं कृष्णा-वतारोभविष्यामि तदा त्वमागत्य मां स्मरिष्यसि तदा तुम्बुरोरधिकं गान विद्यायां करिष्यामीत्युक्त्वान्तर्दधे भगवान् तावत्त्वं एवं विचर।

एवम् कृते नारदः कृष्णावतारे भगवदादेशेन जाम्बवती सत्यभामा रूक्मिणिभिरेकैक वत्सरं क्रमशः गानेन शिक्षितस्ततः स्वयं कृष्णः नारदऽ-विनाशिनो गानस्य शिक्षांददौ तदा नारदाल्प ब्रह्मानन्द प्राप्ति जाता। ततः भगवतोक्तं भो नारद गानेत्वं सर्वज्ञो जातः। तुम्वुरूणा सह सर्वत्र गानं कुरू।

(५-६ सर्गौ)

सीताजन्म वर्णनम्

दशास्यो रावणस्त्रैलोक्याधिपत्याय अजरामरणाय च बहुवर्षं तपः कर-णेन ज्वलनार्कं समोजातस्तेन तत्तेजसा दह्यमानं जगत् दृष्ट्वा सुरैर्वृतः ब्रह्मा-गत्य तमुवाच भो रावण तपसा ते प्रसन्नोऽस्मि, ईप्सितं वरं ब्रूहि वत्स— रावणोऽवदत् अमरत्वं देहि ब्रह्मा ब्रवीति न कोऽप्यभरोभवितुर्महति। अन्य-द्वरं ब्रूहि पुनस्ततोदशास्योब्रूते सुरासुरायक्षापिशाचोरगराक्षासाः विद्या-धरा किन्नरा वा तथेवाप्सरसांगणाः न हन्युर्मीमिति उत्तमंवरं देहि। तया

यदाज्ञानान्मोहाद् कन्यां मे मनः कांक्षति तदामेमृत्युर्भवेदिति द्वितीयं वरं देहि । तथेत्युक्त्वा लोकपितामहः ब्रह्मलोकं गतः । ब्रह्मदत्तवरोरावणो वर-दर्पितः बाहुवीर्यतः त्रैलोक्यजय सर्वस्वंप्राप्तवान् । स दुरात्मैकदा दण्डकारण्ये मुनिपुंगवानेनं प्राह । अहं जगतः सर्वस्य शास्ता, जयभागहं भवन्तं जेतुमि-च्छामि । इत्युक्त्वा स शराग्रेण क्षताच्छोणितमंगतः बलादाकृष्य तेषां कलशेऽस्थापत् । तत्र गृत्समदो नाम शतपुत्रपिताद्विजः दुहित्रर्थे भार्यया स प्रार्थित भगवान् मुनिः लक्ष्मीर्मेदुहिता भूयादित्यसौ कलशे दुग्धं चाहरह-स्तत्र कुशाग्रेण समन्त्रतः स्थापयति । ततः तस्मिन् दिने स वनंनिर्ययौ । तद्दिने दैवयोगात् कलशें तत्र मुनीनां शोणितं रावणः संस्थाप्य गृहीत्वा स्वगृहं ययौ । गृहं गत्वा रक्षार्थं मन्दोदरीमकथयत् यत् कलशेऽस्मिन् विषा-दपितीक्ष्णं रूधिरमस्ति न कस्मै देयं न वा भक्ष्यम् । इति कथयित्वा स लोकरावणः जय लाभार्थं हिमवन्मेरू विन्ध्याद्रौ रमणीय वने गतः । मन्दो-दरी स्वपतिमेवं तथाविधंदुराचारं दृष्ट्वा स्वामपमानितां बुद्ध्वा तस्य कलश शोणितं मरणेच्छया पपौ । लक्ष्मीशरण दुग्ध मिलितेन रूधिरेण मन्दोदरी गर्भयुक्तेन विस्मिता जाता । संवत्सरमिमं भर्त्रासहमे वसतिर्नहि । इति चिन्तया दग्ध गात्रीव तीर्थ सेवन छद्मना विमानमारूह्य कुरू क्षेत्रं जगाम सा । तत्र गर्भं विनिष्क्रिष्य भुवस्तले निचखान । स्नात्वा सरस्वतोतोये स्वमालयं पुनरगात् । नोदितं तत्कस्मैचित् । कियता कालेन जनर्कषि महा-मनाः कुरूक्षेत्रं समासाद्य जांगले यज्ञं कुर्वन् स्वर्ण लांगलमादाय स यज्ञ भूमिं चखान । स्वर्ण लांगल सीतांतः कन्यैका प्रोत्थिताभवत् तदा कन्यको परि महती पुष्प वृष्टिः पपात ।

तद् दृष्ट्वा जनकः विस्मितोजातः कर्तव्येमूढ़तामवाप । तस्मिन् काले आकाशवाणी अभवत् हे राजन् कन्यां गृहाण, पुत्रीवत् इमां पालय । अस्याः नाम सीता भवेत् । यज्ञं समाप्य जनकः तां गृहमानीय पुत्रीवत्पालयतिस्म ।

नवम-सर्गः

श्रीरामचन्द्रः सीतां परिणीय दशरथादिभिर्भ्रातृभिः सहितः सीतया-भार्ययासहायोध्यां गन्तुमारेभे । मार्गे रेणुकासुतः परशुरामः रामस्य विवाह कौतुकं श्रुत्वा रामस्य बलं ज्ञातुं समागतः । उद्यतास्त्रं भवस्थित सततमभ्या गतं परशुरामं दृष्ट्वा प्रहसन्निव रामोऽब्रवीत्, हे मुनिश्रेष्ठ, ते स्वागतम् । किं कार्यं ते करवाणि । ततः परशुरामः ब्रूते स्वागतेन किमस्ति मम । मम हस्ते क्षत्रियान्तकरं परशुरस्ति । यदि शक्तोऽसि राघवस्तदारोपय ।

श्रुत्वैव भार्गवं रामो जगाद, भो विप्र मयि आक्षेपं न करोतु। ब्राह्मणैः सह स्वबल प्रकाशनं नोचितं क्षत्रियाणाम्। विशेषतः इक्ष्वाकुवंशी ब्राह्मण संमुखे स्वबलं न प्रकाशयति। एवं श्रुत्वा परशूरामो ब्रूते, अलं वागुपदेशेन, धनुरारोपय। तदा रोषेण रामः धनुर्जग्राह। रामचन्द्र हस्ते यदा धनुरागतम्, तदा लीलयैवहसन्ज्याशब्दमकरोत् तेन शब्देन सर्वे प्राणिनः व्याकुलाः संजाताः। ततो रामाज्ञया परशुरामः वृहत्तीक्ष्ण वाणं दत्वा कर्ण पर्यन्तमाकर्षणार्थं कथितम्। एतच्छ्रुत्वा रामः प्रदीप्तमन्युना इव श्रूयते क्षम्यते, दर्पं पूर्णोऽसि भार्गव। त्वया क्षत्रियेभ्यस्तेजः अधिगतं, तेन पितामहप्रसादेन मां क्षिपसि। भो भार्गव, स्वेन रूपेण मां पश्यते चक्षुर्वितराम्यहम्। इत्युक्त्वा रामः परशुरामाय दिव्यां दृशं ददौ। तदा परशुरामः रामस्य शरीरे ब्रह्माण्डस्य सर्वाणिवस्तूनि ददर्श। तस्मिन्नेवकाले रामः वाणं मुमोच। तेन बाणेनोल्कावत-भूकम्पादि निर्धातिन परशुरामः विह्वलोऽभवत्। ततः पुनः चेतनागतानन्तरं रामाज्ञया परशुरामः महेन्द्रगिरिमगमत्। तपोबलात्पुनः तेजः प्राप्तवानिति।

दशमः सर्गः

अथ केनापि हेतुना सीता लक्ष्मणाभ्यां सह रामः दण्डकारण्यमाजगाम। तत्र गोदावरीतीरं पर्णशालां निर्माय मृगयामभिकारयन् कंचितकालम् उवास।

कदाचिद्रावणः सीतां हृत्वा तां लङ्कां न्यवासयत्। तामदृष्ट्वा रामलक्ष्मणौ संपूर्णं वनं भ्रामयामासतुः। रूदतः रामस्य वाष्मवारिसमुद्भवा वैतरणी नदी संजाता। सुग्रीवेण सख्यं कर्तुं रामो लक्ष्मणेनानुजेन च ऋष्यमूकमगात्। तत्र पञ्चभिर्मन्त्रिभिः सार्धं सुग्रीवो नाम वानरः बालिभयात् तिष्ठतिस्म। सुग्रीवः चापवाणधरौ रामलक्ष्मणौ दृष्ट्वा त्रस्तश्च भिक्षुरूपेण हनुमन्तं प्रेषितः। हनुमान् स्वरूपेण चतुर्भुजं किरीटधारिणं रामचन्द्रं ददर्श। महावीरः एवं रूपं दृष्ट्वा विस्मितो जातः। किंचित्कालान्तरं नयने निमील्याद्भुतं रूपं दृष्ट्वा स्तुतिं चकार। ततो हनुमान् ब्रूतेऽहं सुग्रीवस्य मन्त्री हनुमान् नामाहं सुग्रीवेण प्रेषितः समागतोऽहम्। कथ्यतां को भवान् तदा रामो ब्रूते। अत्रैकादशसर्गतः पञ्चदश सर्गपर्यन्तं रामेण हनुमते कर्म-योग-भक्तिज्ञानप्रदानवर्णनमतिमहत्त्वपूर्णम्। हनुमन्तं भक्तं ज्ञात्वा तस्यै सांख्ययोगस्य ज्ञानं प्रददौ। सांख्ययोगानन्तरमुपनिषदः ज्ञानं प्रदत्तवान्। पुनः भक्तियोगस्यापि ज्ञानमुपदिदेश। तदनन्तरं राम-हनुमतोः

ज्ञानस्य संवादः विशेषरूपेण जातः। संवादानन्तरं हनुमान् पञ्चविंशति श्लोकैः रामस्य स्तुतिं चकारः। या स्तुतिरद्भुता।

(१६ सर्गः)

ततो रामेणोक्तं हे महावीर दुरात्मना रावणेन मम भार्या हृता। सुग्रीवेण मम सख्यं कारय। ततो हसित्वा हनुमान् ब्रूते तव भार्या रावणेन हृतेति विश्वविदितमस्ति। तथापि प्रभुणादिष्टं कार्यं किंकरैरवश्यं कार्यमित्युक्त्वा तौ रामलक्ष्मणौ स्वस्कंधयोरारोप्य सुग्रीवसमीपमानयत्। सुग्रीवोऽपि रामेणसह सख्यं चकार। ततो रामः बालिनं हत्वा सुग्रीवाय राज्यं ददौ। नानादेश्यान्वानरांश्च आनाय्य रघुनन्दनो हनूमानंगादारूढौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ सुग्रीवेणसह सिन्धु तटं गतवन्तौ। रामो ब्रूते भो लक्ष्मण! समुद्रपारस्योपायं कुरू। तदा लक्ष्मणः समुद्रमकथत् भो समुद्र! त्वमात्मानं स्तम्भय वानराः पारं गमिष्यन्ति। यदा समुद्रः प्रभुणादिष्टं न शुश्राव तदा लक्ष्मणः क्रोधसंदीप्तः समुद्रजलान्तरे पपात। लक्ष्मणदेहवह्निशिखया समुद्रस्य जलं शुशोष तदा जलजन्तवो भयभीता जाताश्च। देवा इतस्ततः अद्रवन्। तद्दृष्टवा वानराः विस्मयं गताः हाहाकारं प्रचक्रुः लोकाः सचराचरा ऋषयः भूतसंघाश्च स्वस्ति स्वस्ति चाब्रुवन्। रामोऽपि लक्ष्मणं प्राह त्वया नैतद्युक्तं कृतम्। सीता विरहजेनाश्रुणा प्रतिज्ञाय समुद्रं तथापूरयत्। तदा रामोपरि आकाशात्पुष्पवृष्टिः पपात। लोकाश्च विचारयन्तः सुस्थिरा संजाताः। ततः सिन्धुना संस्तुतो रामः सिन्धौ सेतुंबवन्ध च लंकायां सगणं रावणं हत्वा विभीषण साहाय्येन सीतां पुष्पके आरोप्य हनुमदादिभिरयोध्यामगमत्। तत्र भ्रातृन्मातृंश्चवान्धवान् आनन्दे योजयामास। सर्वस्य लोकस्य जनानामनुरंजकः राजा बभूव। रामं राजानमासाद्य तिर्यञ्चोऽपि पक्षिणोऽपि मुदं ययुः। सर्वदा नभस्तले देवदुन्दुभयो नेदुः, जलदाः काले ववृषुः, पुष्पवृष्टिः पपात च।

(१७ सर्ग)

रामे सिंहासनेरूढेऽगस्त्यादि ऋषयः देवाश्च स्वस्त्यादियुक्तेनानेकशः प्रशंसुर्धन्यवादं ददश्चैवं कथितं यत् वने भयरहितास्तपः कुर्वन्ति। त्वया रामेण रावणादयः हता इत्याश्चर्यं कृतं ऋषयः वारंवारं धन्यवादं ददुः। रामस्यैवं प्रशंसा श्रुत्वा सीता मधुरभाषिणी जहास। रावणो दुराचारः सत्यमेतन्न संशयः, दशभिर्वदनैर्वीरः जगदुद्वेजकश्चासीत्। भो विप्राः दशास्यबधेन रामः प्रशंसायोग्योनास्ति, इति परिहास इव भाति।

सीतायाः वचनं श्रुत्वा सर्वे विस्मयं गताः च परस्परं मुखेक्षणाश्च जाताः। अयोनि-संभवा सीता इक्ष्वाकुवंशाश्रितापि कथमेवं हास्यम्। श्रुत्वैवं भीता सीता कृतांजलिपुटा प्रणम्य उक्तवती। यदि आज्ञास्यात् तदा आदितः वृत्तान्तं कथयामि। सामान्यजनतुल्यं नाहमनृतभाषिणी। ततः पतिं मुनीन्देवरांश्च मन्त्रिणः श्रेणोमुख्यान् विनयेनाभ्यनुज्ञाप्य पूर्ववृतान्तं कथितु मारेभे।

मम विवाहात्पूर्वमेकः भक्तः ब्राह्मणः मम पितुराज्ञया मम पितुर्मन्दिरे चतुर्मासमतिष्ठत्। तत्रैव भक्ष्यभोज्यादिकं करोतिस्म। तस्य सेवार्थमहं नियुक्तास्मि। तस्याज्ञानुसारेण पूजादिकसामग्रीमुपस्थापयास्मि। प्रतिदिनमसौ विचित्रां कथामपि श्रवयामास। अथैकदा स प्रातरूत्थाय कृताह्निकः कथयतिस्म, हे सीते! दधिमंडोदकाब्धेश्चयपरः स्यादुदकोऽब्धिः पुष्करदीपमाबृत्य वलयाकारोऽस्ति, तत्रैव ब्रह्मणः कमलासनोऽस्ति। तद्दीप पर्वतयोर्मध्ये दशसहस्त्रं दैर्ध्यं विस्तारः मानसोतरसंज्ञकः महान् पर्वतश्चास्ति। तच्छैलस्य चतुर्दिक्षु इन्द्रादीनां पुराणि सन्ति, क्रीडार्थं विश्वकर्मणा निर्मितानि सन्ति। सुमालीनाम राक्षसपुत्रीकेकसी विश्रवासः पत्नी रावण द्वयं पुत्रं सासूत। एकः सहस्त्रवदनः पुष्करदीपे द्वितीयः लंकायां शिवभक्तश्चासीत्। लंकायां धनदनिवासार्थ विश्वकर्मणा निर्मितं लंकायामस्ति। सहस्त्राक्षः रावणः जगद्वशीकृत्य हेलया बाहुलीलया इन्द्रादि देवान्पराजित्य निर्भयः वर्तते। इति कथां श्रवयित्वा सः ब्राह्मण तीर्थे यात्रायां गतवान्। अद्यापि तन्मम हृदि जागरूकं वर्तते। पत्या मे वाहुवोर्येण दशास्यो रावणः हतः। सानुगः ससतुमत्य भ्रातृकवान्धवः मत्कृते च पुरी दग्धा सेतुवद्धश्चवारिधौ सुग्रीवेण साहाय्येन तथा हनुमदादिना इदं लोकोत्तरं कर्ममहत् कृतं लोकहितम्। तथापि मम हृदि नैतदाश्चर्यं प्रतिभाति। यदि तस्य सहस्त्राक्षस्य दुरात्मनः वधं कुर्यात् तदा संभाव्यते कीर्तिर्जगत्स्वास्थ्यमवाप्नुयात्। अतो मम हसितं क्षमध्वं भो विप्रादयः।

सीतायाः वचनं श्रुत्वा मुनयः सर्वे साधु साध्विति सीतां प्रशंससुः। रामोऽपि सीतायाः वलवर्धनं वचनं श्रुत्वा उच्चैः सिंहनादं विनद्य तथा सर्वानाज्ञापयत्। यदद्यैव भ्रातृभिः सुग्रीवादिभिः सैनिकैः सहिता सर्वे सहस्त्रास्य रावणं जेतुं गच्छन्तु। प्राप्ते आदेशे सर्वे प्रस्थानमकुर्वन् तथा रामकोपेन वसुधा चचाल शैलाश्चेलुः आकाशात् ग्रहाश्च पेतुः सागराश्चकंपिरे। आकाश ग्रसन्तस्ते प्रयाताः। सीतया साधं रामचन्द्रोऽपि कामगं पुष्पकं धनुर्धरः आरूरोह भ्रातृभिः सार्धं प्रचलितः। क्षणमात्रेण सर्वे पुष्क-

रद्वीपं गतवन्तः। पुष्करद्वीपस्योत्तरभागे गते राघवो भ्रातृभिः सार्धं वानर-पुङ्गवैः उच्चैः सिंहनादं ननाद धनुश्चापि व्यकर्षयत्। रामदलस्य तुमुला-दिकं नादं श्रुत्वा सहस्रास्यः सहसोत्तस्थौ किमेत्तदितिसंवदन् तत्रैव सर्वे क्रुद्धाः राक्षसा विनिर्ययुः। सर्वशस्त्रास्त्र सज्जितः सपुत्रैः सैनिकैः सह राम-चन्द्रस्य समीपमाययौ। क्रोधेनाग्निवमनं कुर्वन् रामं ब्रूते, कोऽयं ममपुरे सिंह नादं करोति। ब्रह्मादिदेवा अपि न किमपि कर्त्तुं शक्नुवन्ति। अनेके योद्धा-रश्च-अनेकरूपा समागताः रामेण सार्धं योद्धुं प्रवृताः। एवं रामं समीपं नादं कुर्वन्तः गृहाण-गृहाण वदन्तिस्म। कोऽयं किमर्थमायात इति चिन्तापरोऽ-भवत् सहस्रास्यस्तदा गगनसंभूतावाणी समुपद्यत। भो रावण—महावीर्यं-वान् रामोऽयं समागतश्चानेन लंकास्थित रावणः हतवान्। एवममानुषं वाक्यं श्रुत्वा द्विगणित क्रुद्धः सहस्रास्यः हन्यतां वध्यतां एष मानुषः—मम विश्वजितः समक्षे रणाय समुपस्थितः। उभयोः सैनयोः महद्युद्धं जातं ततः सहस्रास्यस्य वायव्यास्त्रेण वानरीसेनादलम् अस्त्रवेगेन स्वगृहं गताः। केवलं ससीतो रामचन्द्रः पुष्पकेऽतिष्ठत्। ततो रामः सहस्रास्येन भयङ्करं युद्धं कृत्वाऽन्ते लंकास्थितं दशमुखरावणवधस्य शरं प्रक्षिप्तवान्। तमपि सहस्र-मुखः हूं कृत्य वामेन पाणिना धृत्वा जानुना बभंज। नष्टे तद्बाणे रामचन्द्रो-विनमस्कः तस्थितवान्। एवंभूतस्य रामस्योपरि दुष्टरावणस्य भयङ्करो वाणः वक्षस्थलं निर्भिद्य पृथिवीं विदार्य च पातालं गतः, रामश्च पुष्पको-पर्येव पपात। इमामवस्थामवगत्य सीता च महाविकटरूपिणी दीर्घजीवा काली स्वरूपिणी श्येनीव रावणरथमुत्प्लुत्य तस्य शिरांसि निमिषार्धेन—चिच्छेद चान्येषां राक्षसाणां शिरांसि खण्डयित्वा तेषां मालामवधार्य चाव-शिष्ट शिरोभिः कन्दुकवत् क्रीडां कुर्वन्ती रणक्षेत्रे जाता। इतस्ततो धाव-न्त्या जानक्याः मायया पृथ्वीं रसातलं गतवन्तीं चाकाशं पतन्तं भयङ्कर प्रलयमिव दृष्ट्वा ब्रह्मादिदेवास्तत्र समागताः स्तुतिं चक्रुर्ब्रह्माण्डे हाहाकारो जातः। रसातलं गतवन्तीं पृथिवीमवरोधार्धं शङ्करः कालिकायाः पादतले सुप्ताः तदास्थिरा भूत्वोक्तं यत् रामः पुष्पके निःसंज्ञोभूत्वास्थितोऽस्ति तमत्रानय। ततो ब्रह्मणा मन्त्रेण संसज्ञं कृत्वा रामं कथितं यत् मा भैषीः, जानकीं पश्य। तदा रामश्च ब्रह्मणो वचः श्रुत्वा वेपमानः शनकैरक्षिप्रोन्मील्य विकरालं सीतास्वरूपं दृष्ट्वा शिरसाभूमौ प्रणम्य तत्तेजसा विह्वलः भीतश्च कृताञ्जलिपुटः परमेश्वरीं प्रोवाच। हे विशालाक्षि, देवि, कासित्वं, अहं त्वां न जाने। तदा रामस्य वचः श्रुत्वा परमेश्वरी योगिनामभयं प्रदाय

रामं ब्याजहार । मां परमां शक्ति विद्धि, यां मुमुक्षवः पश्यन्ति । अहं समान्तरा शिवा अस्मि । त्वां दिव्यं चक्षुर्ददामि, मम पदमैश्वरम् पश्य इत्युक्त्वा देवी विरराम । रामश्च कोटिसूर्यप्रतीकाशं विश्ववत्तेजो निराकुलम् तस्य पदम् स रामः ईश्वरपदं दृष्टवा तथैव समाविष्टः हृतमानसः आत्मन्याधाय चात्मनमोंकारं समनुस्मरन् सहस्रेण परमेश्वरं तुष्टाव ।

एवं स्तुता नामसहस्रेण रामः भूयः कृताञ्जलिः प्रणम्योवाच । हे परमेश्वरि, इदं घोरं ईश्वरस्वरूपं दृष्ट्वा भीतोऽस्मि इदं शान्तं कृत्वा सौम्यं रूपं दर्शय । ततः देवी स्वजानकीस्वरूपं दर्शितवती । ततो रामः भीतिं संत्यज्य हृष्टात्मा पुनः परमेश्वरीमभाषे ।

मे जन्म सफलं जातं त्वयासृष्टं जगत्सर्वं त्वय्येव लीयते देवि त्वमेव परागतिः । ततो जानकी ब्रूते, स्तुत्या प्रसन्नोऽस्मि । सहस्रास्यरावणास्य बधाय यन्मयारूपगृहीतं तेन रूपेणाहं मानसोत्तरे वसामि, रावणादितः लोहितवर्णः अतः त्वयासह नीललोहित वर्णः वसामि । त्वं यदीच्छसि वरं ब्रूहि । तदा रामो ब्रूते, हे महाभागे सीते, यदीदं ईश्वरसंबधिरूपं दर्शितं तन्मम हृदयान्नगच्छेदिति मे वरं दीयताम्, तथा मम भ्रातरः सविभीषणाः वानराः सेनान्यः अयोध्यायोधमुख्याः पुनस्ते मम संगताः सन्तु । तदा सीता प्रहस्य रामं प्राह तथेति ततो रामः ब्रह्मादीनां विसृज्य सीतां नीत्वा स्वदेशं गन्तुं प्रचक्रमे । पुष्पकविमानमारुह्यायोध्यां प्रतस्थे । तत्र सर्वं रावणवधवृतान्तं श्रवयामास, ऋषयश्चाशीर्वादं दत्वा गृहमाययुः ततो देवानां हितं सीतया भ्रातृभिः साधं रामः निष्कण्टकां राज्यं चक्रे । उत्तमे सरयूतीरे बहुविधान् यज्ञान् चक्रे, तथैकादशसहस्रवर्षान् रामो राज्यं चकार ।

वाल्मीकिनोक्तं, हे भरद्वाजः, रामकथाश्रयाम् सर्वं वक्तुनेच्छामि । किंचिदाश्चर्यमिह कथितं, ब्रह्मणासर्वं गोपितं तेन पुनरुक्तिभयान्नतदुक्तम् ।

इदं वेदसम्मितमद्‌भुतोत्तरकाण्डेकथितं यश्चेदं श्रृणोत्यधीते वा स तद्ब्रह्ममाप्नुयात् । यः मानवः प्रातर्मध्याह्नयोगे श्लोकमेकं तदर्धं वा श्रृणुयात् स परमां गतिं याति ।

पञ्च विंशति २५ साहस्रं रामायणमधीत्य यत्फलमाप्नोति तत्फलं श्लोकमेकस्य पठित्वा फलमाप्नोति ।

●

भारतीय वाङ्मयेषु रामकथा वर्णनम्

प्रथमं खण्डम्

(४)

अध्यात्म-रामायणम्

'पुरोवाक्''

नेदंमध्यात्मरामायणं नवीनो ग्रन्थः। भगवता वेदव्यासेन निर्मितब्रह्माण्ड-पुराणस्योत्तरखण्डे साक्षात् पार्वती-परमेश्वर-उमा महेश्वर-सम्वादात्मिक-मिदं राम कथा वर्णनम्।

अत्र नामानुगुणान्वर्था संज्ञा। अर्थात् अध्यात्मशब्दश्चाक्षरशश्चरि-तार्थः। समग्रकथाऽध्यात्मतत्वपरिपूरिता। यत्र च सहजसरससुकोमल-काव्यधाराप्रवहमाना तत्रैव कर्म-भक्ति-ज्ञान-परकमुपदेशात्मकमन्तः सलिलं स्रोतः त्रिवेणीसंगमवत् पावनम्।

न केवलमिदमेव किन्तु नीत्युपासनासदाचारपरिपूरिता द्वैताद्वैत विशिष्टाद्वैतरूपस्य परब्रह्मस्वरूपस्य रामस्याख्यापिका विद्याबलबुद्धिविवेक-दायिका विद्योतते।

इदमप्यत्र रहस्यं यत् पुराऽनादिकाले परब्रह्मणा रामेण स्वयं महेश्व-राय या कथा कथिता तामेवानुसृत्यात्र उमा-महेश्वर संवादात्मकमिदं रामायणम्। यथा—

> **"शृणु देवि प्रवक्ष्यामि गुह्यात् गुह्यतरं महत्।**
> **तदत्रकथयिष्यामि शृणुतापत्रयापहम्॥**
> **यच्छ्रुत्वामुच्याते जन्तुरज्ञानोत्थमहाभयात्।**
>
> **(बालकाण्डम्-२। ४-५**

पद्यमिदं पार्वतीप्रश्नोत्तरे शिवेनोक्तम्। फलतः आध्यात्मिकाधिदैवि-काधिभौतिकतापत्रयसंहारकम्, अज्ञानान्धकारनाशकमध्यात्मरामायणम् एतेन सुस्पष्टं ज्ञायते यत् गोस्वामिना तुलसी दासेन यद्यपि "नानापुराण निगमागमसम्मतं यद्रामायणे निर्गादतं क्वचिदन्यतोऽपि"—इति कथयता-ऽपि तेषामग्रे विशेषतोऽध्यात्मरामायणं जाज्वल्यमानमास्ते नात्र कश्चन मतभेदः।

अत्र बाल्मोकिरामायणवत् सप्तकाण्डानि सन्ति। चतुः षष्ठि ६४ सर्गाः द्विशतोत्तरं चतुः सहस्रा ४२०० श्लोकाः विद्यन्ते। तत्त्वार्थपूर्णानि शतशः स्तोत्राण्यप्यत्र विराजन्ते।

किञ्चिद्विस्मृतविवरणमस्य समीक्षायामस्ति।

●

अध्यात्मरामायणम्

प्राक्कथनम्

परमपवित्राख्यानकमिदमाशुतोषशङ्करेणादिशक्त्यैपार्वत्यै प्रश्नोत्तरक्रमे सुश्रावितम् । अथोत्तरदानात्पूर्व निवेदितम् शङ्करेण यत्—

अध्यात्मरामचरितं र.मेणोक्तं पुरा मम ।
तदद्य कथयिष्यामि शृणु तापत्रयापहम् ।।

(अ० रा० १।२।४-५)

परमरहस्याख्यानकमिदं ब्रह्माण्डपुराणस्योत्तरखण्डान्तर्गतमस्ति । अस्य रचयिता वेदव्यासोऽस्ति । परमगुह्यरसायनेऽस्मिन् श्रीरामचरितस्य लीलावगाहनं कुर्वन् प्रसङ्गानुसारेण पदे पदे भक्तिज्ञानोपासनानीति-सदाचारादीनामुपदेशं सुसम्यक् प्रगुम्फितम् । विषयाधिक्यवर्णनेऽपि प्राधान्यमध्यात्मतत्त्वस्यैवास्ति तेनाध्यात्मरामायणमिति लोके प्रसिद्धम् । तथा भगवान् रामचन्द्रोऽपि आदर्शचरितस्य मूर्तिमानवतारः आध्यात्मिक तत्त्व स्वरूपः । तस्यैंव परमपावनचरित्रस्य महिम्नो वर्णनेन केषां शेमुषी-मतां लेखनी कान्तिमती बभूव । परमपावनलीलामयस्य लीलाकटाक्षेण प्रेरितामिमां लीलां लिखित्वा तस्मै साष्टांगं समर्पितमस्ति ।

—:•:—

संक्षिप्त समीक्षा

(क) सत्यपि विशालेऽतिविस्तृते बालमीकिरामायणे शतकोटि रामायणकथानकमिति प्रसिद्धरामकथासम्बन्धिन्योक्त्या विभिन्नकल्पे कथाभेदेन रामचर्चाऽर्चा संजाताऽद्यापि संजायते। एतत्क्रमे भगवता वेद-व्यासेन रचित ब्रह्माण्डपुराणस्योत्तरखण्डात्मकमिदमध्यात्मरामायणं पुण्यं पूज्यं भाक्ति-ज्ञानोपासनानीतिसदाचारादिदिव्योपदेशयुक्तं शिव-पार्वती सम्वादात्मकम्।

वैशिष्ट्यं चात्र यत् यत्र सागरवद्विस्तृते गम्भीरे बालमीकिरामायणेऽनन्ता ज्ञानविज्ञानयुता काव्यरसधाराः रत्नराशयश्च विराजन्ते तत्रैवास्मिन् रामायणे मूलकथायुक्तं स्थाने स्थाने परिवर्तिशैल्यां वर्णनं विद्योतते। अत्राध्यात्मिकज्ञानरहस्यात्मकतायाः प्राधान्यम् वर्णन नैपुण्यं च।

(ख) रामायणेऽस्मिन् सीतापरित्यागकथा तु विद्यते किन्तु लोकापवादेनोद्विग्नः सन् स्वयं रामचन्द्रः सीतया सह विमर्शं विधाय बाल्मीकिराश्रमे लक्ष्मणद्वारा वनं प्रेषयामास। तत्रैव गर्भस्थशिशोः प्रसवनं च स्यादित्यपि सङ्केतितम्।

(ग) पुनश्च बाल्मीकिना सह लवकुशसहिता सीता रामसभामागत्य सर्वेषां देवानां नागरिकाणां च समक्षमेव रामाज्ञां प्राप्य दिव्यसंकल्प वचसा मातरं पृथिवीं प्रार्थितवती। त्वरितमेव दृथिवीं विदार्य दिव्य सिहासनं प्रादुर्भूतम्। तदुपरि समुपविश्य सीता पृथिव्यामन्तर्भूता।

तिस्रो मातरश्च रामसमीपे एव दिवंगताः। कथानकेनानेन रामायणमिदं संयोगान्तमहाकाव्यान्तर्गतमेवेति गंभीरनिष्कर्षः।

(घ) शेषं कथानकं भ्रातृपुत्रेभ्यो राज्यभागवितरणं, लक्ष्मणपरित्यागः समेषामयोध्यावासिनां जीवजन्तूनां समस्तवानरादिसहितानां पावनसरयूनद्यां प्रवेशादिकं बाल्मीकिरामायणवदेव।

(ङ) केवलं रामस्य भगवद्रूपेण शंखचक्रधारिणि सद्योविष्णुशरीरे विलीनता कथा बाल्मीकिरामायणतः भिन्ना नवीना च।

(च) रामायणेऽस्मिन् शिवद्वारा द्विषष्ठि (६२) श्लोकात्मिका रामगीताऽतिगंभीररहस्यपूर्णा विद्यते तत्र निम्नांकितः सप्तविंशति (२७) श्लोकः सर्वथा शब्दार्थतत्त्वविवेचनेऽभिनवः गम्भीरचमत्कारात्मकः ।

यथाः—

एकात्मकत्वाज्जहती न सम्भवेत्तथाऽजहल्लक्षणताविरोधतः ।
सोऽयम्पदार्थाविव भागलक्षणा युज्येत तत्त्वम्पदयोरदोषतः ।।

अर्थात्—शब्दार्थप्रत्ययविमर्शे लक्षणाभेदे जहल्लक्षणा—अजहल्लक्षणात्मकौ द्वौ भेदौ वर्तेते । तत्र जहल्लक्षणायां सर्वथा स्वार्थं परित्यागं कृत्वा लाक्षणिकमेवार्थः ज्ञायते ।

यथा 'गङ्गायां घोषः' इत्यत्र गङ्गाशब्दः गङ्गातटं बोधयति । अजहल्लक्षणायां च 'काकेभ्योदधिरक्ष्यन्ताम्'-इत्यत्र काकसहितदद्युपधामक विडाल-कुक्कुरादीनामपि बोधो जायते ।

(छ) किन्तु '**तत्वमसि**' इति गहनशब्दे तत् पद वाच्ये ईश्वरे त्वम्-पदवाच्ये जीवे च क्रमशः सर्वज्ञतां परोक्षतां विहाय तथा अल्पज्ञतादिकं च त्यक्त्वा केवलं **चेतनांशता**मात्रमवशिष्यते । अतोऽत्र लक्षणाभेदद्वयभिन्ना '**भागत्याग**' नाम्नीलक्षणा विद्यते ।

(ज) परिणामतो **रामगीतेयं** सर्वथा श्रीमद्भगवद्गीतावत् गुह्यतर-रहस्यमयी । 'रामगीता' त्वत्र यथार्थतः विचित्रा मननीयाऽस्ति ।

धन्याऽयोध्यादशरथनृपः सा च माता च धन्या
धन्यो वंशो रघुकुलभवो यत्र रामावतारः ।
धन्या वाणी कविवर मुखे रामनामप्रपन्ना
धन्यो लोकः प्रतिदिनमसौ रामवृत्तं शृणोति ।।

बालकाण्ड कथासारांशः

अध्यात्मरामायणबालकाण्डे राममङ्गलपुरः सरं पार्वतीपृष्टमहादेव-कृत रामायणोपोद्घाते रामहृदय वर्णनम् ।

यः पृथिवीभरवारणाय दिविजैः सम्प्रार्थितश्चिन्मयः
संजातः पृथिवीतले रविकुले मायामनुष्योऽव्ययः ।
निश्चक्रं हतराक्षसः पुनरगाद् ब्रह्मत्वमाद्यंस्थिरां
कीर्तिं पापहरां विधाय जगतां तं जानकीशं भजे ॥

श्रीशंकररूपपर्वतात् निः सरन्ती रामरूपाब्धौमिलन्ती अध्यात्मरामायणकथा गङ्गेयं भुवनत्रयं पुनाति । यो जनः भवबन्धमुक्ति यदीच्छेत्तदाऽध्यात्मरामायणमेव नित्यं पठेत् । एवं सः अध्यात्मरामायणं नित्यं शृणुयात् स गवां सहस्रायुतकोटिदानात् फलं लभेत् ।

अथ कैलाशाग्रे रत्नपीठे मन्दिरे ध्याननिष्ठं शंकरं रहसि वामाङ्के स्थिता पार्वती देवी आत्मज्ञानतत्त्वस्य परमरहस्यं पप्रच्छ । तदा शङ्करः पार्वतीं प्रति कथमति । हे पार्वति, विषयेऽस्मिन् मोक्षसाधनं परमरहस्यं रामतत्त्वं कथयिष्यामि । क्रमेणैवं त्रिपुरारिः अत्यन्तगोपनीयं पवित्रं पापनाशनं रामलीलावर्णनं संक्षेपेण श्रावयिष्यामि । 'वेदान्तवेद्यं परमरहस्यं भक्त्या यः पठेत् सः मुक्तो भवति नात्र संदेहः इति राम मङ्गलपुरासरं पार्वतीपृष्ट-महादेव कृत रामायणोपोद्घाते रामहृदय वर्णनं प्रथमः सर्गः ।

पार्वत्युवाच--'हे प्रभो त्वन्मुखाद्गलितं रामतत्त्वामृतरसायनं पिवन्त्या मम मनो न तृप्यति । श्रीरामकथा संक्षेपतो मया श्रुत्ता । इदानीम् विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि । शिवेनोक्तं, शृणु देवि यत् अध्यात्मराम-चरितं पुरा मम रामेणोक्तं तद् गुह्याद् गुह्यतरं तापत्रयनिवारकं कथयिष्यामि ।

एकदा रावणादिरक्षोगणानां भाराद् व्यथिता पृथिवीगोंरूपं धृत्वा देवैः मुनिजनैश्च साकं ब्रह्मणः समीपं गता । पृथिव्याः रोदनं श्रुत्वा ब्रह्मा देवमुनिजनैः साकं क्षीरसागरसमीपं गत्वा स्तुतिपाठैः भगवन्तं हरिं तुतोष एवं कथितं यत् हे भगवन्, पौलस्त्यतनयो रावणः राक्षसाणा—मधिपतिः मदर्दापतः त्रिलोकं लोकपालांश्च बाधते । तस्य मृत्युः मानुषेणैव-स्यादतस्त्वं मानुषो भूत्वा देवरिपुञ्जहि ।

श्रीभगवानुवाच—कश्यपस्य तपसा तुष्टोऽहं पुत्र भावाय याचित मया तथेत्यङ्गी कृतम्। स इदानीं दशरथो भूत्वा भूतले तिष्ठति। अहं कौशल्यायां शुभे दिनं पुत्रतामेत्य चतुर्धात्मनमेवाहं सृजामि। पृथक् योगमायापि जनक स्वगृहे उत्पत्स्यते। तया सार्धं सर्वं सम्पादयाम्यहम्। इत्युक्त्वान्तर्दधे विष्णुः ब्रह्मादि देवान् एवं प्रत्यपादि तथा पृथिवी साहसमवधार्यं स्थिराजाता। **देवाश्चापि स्थिराः सञ्जाता।**

देवाश्च सर्वे हरिरूपधारिणः
स्थिताः सहायार्थमितस्ततो हरेः।
महाबलाः पर्वतवृक्षयोधिनः
प्रतीक्षमाणा भगवन्तमीश्वरम् ॥

(अ० रा० १।२।३२).

राजादशरथोऽत्यन्तदुःखपीड़ितः गुरुवशिष्ठाज्ञया ऋष्यश्रृङ्ग तपोधन द्वारा पुत्रेष्टियज्ञमकारयत् चतुरः पुत्रान् सर्वगुण सम्पन्नान् राम-लक्ष्मण-भरत-शत्रुध्नान्-प्राप्तवान्। तेषां बाललीलया गृहे आनन्दो जातः इति चतुर्धाभगवदवतारैः देवाः जनाश्चानन्दमाजग्मुरिति तृतीय सर्गः।

ततः कौशिकः आगत्य दशरथमुक्तवान्—यदा यदा देवपितृगणेभ्यो यज्ञारम्भं करोमि तदा तदा मारीच-सुवाहुप्रभृतयः यज्ञे विघ्नं कुर्वन्ति। अतस्तयोर्मारीच सुवाह्वोर्बधार्थं रामलक्ष्मणौ प्रदीयताम्। ततो गुरु वसिष्ठस्य परामर्शेण समर्पित श्रीरामं च लक्ष्मणं नीत्वा कौशिकः स्वस्थानं प्रस्थितः।

रामलक्ष्मणाभ्यां सह गते कौशिके मार्गे ताटकावने काममोहिनीं घोर रूपां ताटकां कौशिकाज्ञया रामः एकेन वाणेन जघान। सा सर्वाभरण-भूषिताऽतिसुन्दरी राम-प्रसादतः ऋषिशापात्पिशाचतां गता सा पुनः यक्षिणी रूपा जाता। ततो रामं परिक्रम्य नत्वा रामाज्ञया दिवंगतेति। चतुर्थः सर्गः।

रात्रौ तत्रैव कामाश्रमे विश्रम्य प्रातस्ते सिद्धाश्रमं ययुः। तत्र श्रीरामः कौशिकं प्राह, भो महर्षे कथ्यतां यत् तौ राक्षसाधमौ मारीच-सुवाहू कुत्रास्ताम् कृपया दर्शयस्व। तथेत्युक्त्वा मुनिभिः सह कौशिकः यष्टुमारेभे। मध्याह्ने कामरूपिणौ तौ राक्षसाधमौ ददृशाते। ततो रामश्चैकेन वाणेन मारीचं शतयोजनं भ्रामयन् जलधौ पातयामास। द्वितीयेनाग्निमयेन वाणेन सुवाहुमहनत् क्षणात्। अपरेऽनुयायिनश्चाशु लक्ष्मणेन हता-

स्ततो सर्वे देवाः सलक्ष्मणं राघवं पुष्पैरर्चितवन्तः। दिवसत्रयमतीत्य चतुर्थेऽहनि संप्राप्ते कौशिकः राममब्रवीत्। विदेहनगरे जनकस्य महायज्ञं द्रष्टुं वयं चलेम। एवम् क्रमेण ताभ्यां सह स मुनिः गङ्गा समीपं ययौ, यत्राहिल्याःपाषाणभूता स्थिता आसीत्। तपः पुण्यं गौतमस्याश्रमं दिव्य फल पुष्पोपेत पादपैः परिवेष्टितम् नानाजन्तुविवर्जितं दृष्ट्वा रामः मुनिमुवाच कस्यैतदाश्रमपदं, महद् भास्वच्छुभं भाति, मे चेतः आह्लादयति भगवन् तत्वतः कथयन्तु। ततो विश्वामित्रोऽहल्यायाः सविस्तरं परिचयं दत्वा कथितवान् यदहिल्या भवत्पादस्पर्शकांक्षतेऽतो ब्रह्मणः सुतामहल्यां स्व-पादस्पर्शेन पावयस्व। तदा रामः शिलां पदेनस्पृष्ट्वा तपोधनां तां ददर्श रामोऽहल्या ननाम रामोऽहमिति चाब्रवीत्। तदनन्तरं पीत-कौशेयवाससं-शङ्खचक्रगदाधरं धनुर्वाणधरं रामं लक्ष्मणेन सहाहल्या ददर्श। हर्षाश्रुजल नेत्रान्ता दण्डवत्प्रणिपत्य पुलकाङ्कितसर्वाङ्गा गद्गदगिराऽब्रवीत्। अहिल्योवाच—

अहो कृतार्थास्मि जगन्निवास ते
पादाब्जसंलग्नरजः कणादहम्।
स्पृशामि यत्पद्मजशङ्करादिभिः
विमृग्यते रन्धितमानसैः सदा॥

(आ० रा० १।५।४३)

परिकम्य प्रणम्याशु सानुज्ञाता पतिं ययौ।

अथ विश्वामित्रः रामलक्ष्मणाभ्यां सह जनकस्य यज्ञं द्रष्टुकामः मिथिला गमनं चकार। मार्गे गङ्गामुत्ततुं नाविकेन रघुनन्दनः निषिद्धः। नाविकः कथयति—

'क्षालयामि तव पादपङ्कजं नाथ दारु दृषदोः किमन्तरम्।
मानुषीकरणचूर्णमस्ति ते पादयोरिति कथा प्रथीयसी'॥

(आ० रा० १।६।३)

इत्युक्त्वा क्षालितौ पादौ परं तीरं ततो गताः।
कौशिको रघुनाथेन सहितो मिथिलां ययौ॥

(आ० रा० १।६।५)

(अत्र प्रचलितकथाभेदः स्पष्टः)

ततस्तत्र जनकस्य समीपं रामस्य परिचयं दत्तवान्। एवं जनकः शीघ्रं

महेशचापं दर्शयामास। जनकः कौशिकमब्रवीत् "यदा रामः धनुर्धृत्वा कोट्यामारोपयेद्गुणम, तदात्मजा मया सीता रामाय दास्यतेमुदा'।

कौशिकाज्ञया रामो धनुर्दृष्टवा प्रहृष्टात्मा दृढं परिकरं बध्या वामेन हस्तेन धनुर्गृहीत्वा लीलया च धनुस्तोलयन् बभञ्ज। दिशश्च विदिशश्चैवं शब्दैः पूरयन् स्वर्गं मर्त्यं पातालं च कम्पितवान्। देवाः कुसुमैराच्छादयन्तः स्तुतिभिः वन्दितवन्तः। तथा सीतापि स्वर्णमयीं मालां रामस्योपरि निक्षिप्य स्मयमाना मुदं ययौ। ततश्च अयोध्यायां सूचनां प्राप्य दशरथः सदलेन पुत्रैः सह मिथिलामाययौ। ततः पाणिग्रहविधानतः जनकः सीतां रामकरेऽर्पयत्। औरसीमुर्मिलाञ्च लक्ष्मणाय ददौ। भ्रातृकन्यके माण्डवीं श्रुतिकीर्तिं च क्रमशः भरताय शत्रुघ्नाय च ददौ। ततो जनकः स्तुत्वा दानमानादिभिः सीतायै चतुर्भ्रातृभ्यश्च समर्प्य वसिष्ठादीन् सम्पूज्य च दशरथं प्रस्थापयामास।

प्रयाणकाले रघुनन्दनस्य
भेरीमृदङ्गानकतूर्यघोषः।
स्वर्वासिभेरीघनतूर्यशब्दैः
संमूर्च्छितो भूतभयङ्करोऽभूत्॥

(अ० रा० १।६।८२)

अथ गच्छति रामे मिथिलाद्योजनत्रयम् नृपसत्तमः दशरथः निमित्तान्यतिघोराणि ददर्श वसिष्ठं प्रपच्छ च। वसिष्ठः प्राह शीघ्रमेवशुभसूचकाः मृगाः प्रदक्षिणं यान्ति। ततः कियद्दूरे विद्युत्पुञ्जसमप्रभवं कोटिसूर्यप्रकाशं जामदग्न्यं धनुः परशुपाणिं साक्षात्कालमिवान्तकं क्षत्रियमर्दकं परशुरामं ददर्श।

(अत्र प्रचलित कथा भिन्ना घटना वर्णिता)

क्रोधात्प्रचलितेन्द्रियः रामं प्रति निष्ठुरं वाक्यम् उवाच। रे राम, त्वं मम नाम्ना समः विख्यातः विचरसि। यदि त्वं वास्तविकः क्षत्रियोऽसि तदा मया सह युद्धं कुरू। पुराणं जर्जरं चापं भङ्क्त्वा वृथा प्रशंसां करोसि। अस्मिंस्तु वैष्णवे चापे यदि वाणमारोपयिष्यसि तदा त्वया साकं युद्धं करिष्यामि अन्यथा क्षत्रियान्तकरोऽहम् इति जानीहि।

एवं ब्रुवति परशुरामे रामः भार्गवं रूषावीक्ष्य तद् हस्ताद् धनुराच्छिद्य गुणमञ्जसारोप्य तूणीराद् वाणमादाय चापोपरि संधायउवाच। शृणु

ब्रह्मन्,वचो मम अमोघो मम सायकः लक्ष्यं दर्शय। लोकान् पादयुत्रं वापि शीघ्रं वद ममाज्ञया त्वं अस्मिन् लोकं परं लोकं वा न गन्तुं शक्यते। एवं रामे वदति भार्गवः विकृताननः पूर्ववृत्तान्तं स्मरन् इदं वचनमब्रवीत्। जानेऽहं त्वां परमेश्वरम्। अद्य मे सफलं जन्माभूत्। ततः रामं परिक्रम्य प्रणम्य च पूजितश्च महेन्द्राचलमन्वगात्।

तदनन्तरं राजा दशरथः मृत्युमुखान्निःसृत्य पुत्रैः सहायोध्यामागतवान्। ततः सर्वे भ्रातरः पत्नीभिः सह स्व स्व राजभवने रेमिरे।

ततः कैकेयी–भ्राता भरतं शत्रुघ्नं च स्वगृहं नेतुं समागतः। राजा दशरथोऽपि तं सत्कृत्य तेन सह भरतं शत्रुघ्नं च प्रेषितवान्। रामः सीतया सह साकेते विराजते।

बालकाण्डः समाप्तः

अयोध्या-काण्ड-कथा-सारांशः

अथैकदा सर्वाभरणसम्पन्ने रत्नसिंहासने सीतया सह स्थिते रामे नारदः आकाशादवतरत्। स्वागतान्तरं रामेणोक्तमहं त्वद्दर्शनादेव कृतार्थोऽस्मि हे मुनीश्वर! का सेवा मया विधातव्या कृपया कथयताम्। तदा नारदः स्वानन्दाश्रुपरिप्लुते नेत्रे रामं प्रणम्योवाच। हे रघुश्रेष्ठ, ब्रह्मणा प्रेषितोऽहमत्रागतोऽस्मि। त्वं रावणस्य वधार्थं संजातोऽसि। इदानीं राज्यरक्षार्थं तव पिता त्वामभिषेक्ष्यति। राज्याभिसंसक्तः सन् रावणं हन्तुमसमथ भूत्वा भूभारहरणाय तव प्रतिज्ञा वृथा भविष्यति। अतो हे राघव, त्वं सत्यसंधोऽसि तत्सत्यं कुरु। नारदवचनं श्रुत्वा रामः प्राह। हे महर्षे, किञ्चिदविदितं क्वचित् मे न विद्यते। यत्पूर्वं प्रतिज्ञातं तत् करिष्ये, नात्र संशयः। किन्तु कालानुरोधेन तत्तत् प्रारब्धसंक्षयात् सर्वं भूभारं हरिष्ये। अहं रावणस्य वधार्थं श्वो दण्डाकाननं गन्ता। तत्र चतुर्दश वर्षाणि स्थित्वा मुनिवेषधृक्, सीतामिषेण (व्याजेन) सकुलं तं दुष्टं नाशयिष्यामि। एवं प्रतिज्ञाते रामे सानन्दः नारदः प्रदक्षिणीकृत्य प्रणिपत्य च रामेणानुज्ञातो देवलोकं ययौ।

अथ राजा दशरथः स्वकुलाचार्यमाहूय कथितं यत् श्वो रामचन्द्रं राज्येऽभिषेक्ष्यामि भवांस्तच्चानुमोदताम्, तथा रामं मन्त्रय। आदेशानुसारेण वसिष्ठाश्चान्तः पुरं प्रविश्य राज्याभिषेकस्य समाचारं श्रावयामास एवं गोपनीयवार्तामपि कथितं, यत् हे राम त्वं विष्णुरसि देवकार्यसिद्ध्यर्थं रावण बधाय चावतीर्णोऽसि, तथाप्येतद् गुप्तरहस्यं नोद्घाटयामि शिष्टाचार वशादत्रागतोऽहम्। यद्यपि पौरोहित्य-कर्मातिनिन्दनीयमस्ति परन्तु पूर्वकालतः ब्रह्मणाज्ञासमासीद्यत् इक्ष्वाकुवंशे रामोऽवतरिष्यति। अतः सम्बन्ध योजनात् इदं कर्म स्वीकृतं तदद्य मनोरथः पूर्णो जातः। दशरथस्यादेशेनाद्य नियताहारविहारभ्यां तिष्ठतु। वसिष्ठस्तु राज्ञः समीपं गत्वा समाचारं कथितवान्। रामराज्याभिषेकावसरे सर्वे देवाः देवीं सरस्वतीमचोदयत्, हे देवि त्वं भूवोलोकमयोध्यायां गच्छ तथा ब्रह्मणो वाक्यतः रामराज्याभिषेक विघ्नार्थं यतस्व। प्रथमं मन्थरायाः हृदि प्रविश्य ततः परं कैकेयीं प्रविश्य विघ्नमानय। ततो विघ्ने समुत्पन्ने दिवं पुनरेहि। मन्थराबुद्ध्या कैकेयी पूर्वकालिकदेवासुरसंग्रामकालस्य प्राप्तवरद्वये एकेन 'भरतस्यराज्याभि-

षेकः' द्वितीये "चतुर्दशवर्षं यावत् रामवनवासः इति मनसि निश्चित्य कैकेयी कोपभवनं जगाम। (अत्र प्रचलितकथातस्तथा बाल्मीकिरामायण-कथातो भिन्ना कथाधारा)

ततो दशरथस्य कोपभवनगमनम्। कैकेय्याः वरद्वययाचने दुःख संविग्नो जातः। सुमन्तस्य कोपभवनगमनम्। ततो रामागमनेन राजा वरद्वयक्रमे निःसंज्ञो जातः। ततः कैकेयीनिदेशेन रामस्य वनगमन स्वीकृतिः।

वनगमनक्रमे कौशल्यारामसंवादस्ततः लक्ष्मणसुमित्रासंवादः ततः राम-सीता संवादे रामवनवासजन्यदुःखादिकं संश्राव्य सीतां रामः कथयति, हे भद्रे, त्वं गृहे तिष्ठ, मां शीघ्रं द्रक्ष्यसि, इति रामस्य वचनं श्रुत्वा सीता कथयति—

"अहं त्वां क्लेशयेनैव भवेयं कार्यसाधिनी।
बाल्ये मां वीक्ष्य कश्चिद्वै ज्योतिः शास्त्रविशारदः॥

(अ० रा० २।४।७५)

प्राह ते विपिने वासः पत्या सह भविष्यति।
सत्यवादी द्विजो भूयाद् गमिष्यामि त्वया सह॥

(अ० रा० २।४।७६)

रामायणानि बहुशः श्रुतानि बहुभिर्द्विजैः॥

(अ० रा० २।४।७७)

सीतां बिना वनं रामो गतः किं कुत्रचिद्वद।
अतस्त्वया गमिष्यामि सर्वथा त्वत्सहायिनी॥

(अ० रा० २।४।७८)

यदि त्वया सह वनं न गमिष्यामि तदा प्राणान् त्यक्ष्यामि। इति श्रुत्वा रामेण स्वीकृतम्।

अनेन पूर्वकल्पस्य निर्णयो ज्ञायते। तदनन्तरं सीतया सह रामः लक्ष्मणश्च वनं गमनायोपचक्रमे।

(अथ मूलकथातः नवीना कथा विद्यते)

वनगमनक्रमे लक्ष्मणेन सह जानकीं सहितं रामं दृष्ट्वा नगरवासिनः कैकेयीं दशरथं धिक्कुर्वन्ति, कथयन्ति सर्वे परस्परं यत् इमे कथं वने स्थास्यन्ति। मध्येऽस्मिन् वामदेवनामको मुनिः कथयति यत् दुःखस्य चिन्तां मा कुर्वन्तु जनाः। यतः रामः साधारणजनो नास्ति। अयमादिनारायणो

भगवान् विष्णुरस्ति। पूर्वदिने नारदेन सर्ववृत्तान्तं कथितं यत् रावणवधार्थं स्वयमेव रामः दण्डकारण्यं सीतया लक्ष्मणेन सह गमिष्यति। नास्ति दशरथस्य कैकेय्याः दोषश्चात्र। इति परमगुह्यं वृत्तान्तमस्ति। श्रीरामो बहुस्थानमतिक्रम्य श्रृंगवेरपुरसमीपे गङ्गातटं गतस्तत्र निषादराजेनसह सम्मेलनं ज़ातम्।

सुप्ते रामे लक्ष्मणेन सह निषादराजगुहस्य परस्परालापो जातः। गुहेन कथितं यत् मन्थराबुद्ध्या कैकेय्याः चलनेन भगवतो रामस्य वने कष्टमिदं भवति। ततो लक्ष्मणेन कथितं भ्रातः गुहः शृणु सुखस्य वा दुःखस्य कः कस्य हेतुः स्यात्। सुखदुःखयोः कारणं स्वपूर्वार्जितकर्मणैव भवति। यतः–

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता
परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।
अहं करोमीति वृथाभिमानः
स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः॥

(अ० रा० २।६।६)

सुखस्यानन्तरं दुःखं दुःखस्यानन्तरं सुखं एतद् द्वयं जन्तूनां दिनरात्रिवत् अलंघ्यमस्ति।

एवं द्वयोः प्रलापानन्तरं नभो विमलं बभूव। ततो निषादराजस्य नावमारुह्य सर्वे गंगापारं ययुः। ततो भरद्वाजाश्रमं सर्वेगताः। स्वागतानन्तरं भरद्वाजः कथयति यदर्थमवतारोऽसि, ब्रह्मणा प्रार्थितः तथा यदर्थं तब वनवास इति ज्ञानदृष्ट्याहं जानामि। शिष्टाचारवशात् रात्रौ भरद्वाजाश्रमे सर्वे तस्थुः। पुनः प्रातः मुनिकुमारदर्शितमार्गेण यमुनापारं गत्वा सर्वे वाल्मीकेः आश्रमं दण्डकवनं गतवन्तः। परस्परं शिष्टाचार संलापान्तरं वाल्मीकिः स्वजीवनवृत्तं कथयामास। तवानुकम्पया हे राम सप्तर्षिभिः तव नाम व्यत्यस्ताक्षरं जपनार्थं दत्तं तदुपदेशानुसारेणाहं जपे एकाग्रमनसा ज्ञानं प्राप्तम्। ततो युगसहस्रान्ते ऋषयः पुनरागत्य मामूचुः, तच्छ्रुत्वाहं तूर्णमुत्थितः वल्मीकान्निर्गतश्चाहं नीहारादिवभास्करः। वल्मीकान्निर्गतेन ते ऊचुस्त्वं "वल्मीकिः" भव। यतः तव वल्मीकाद् द्वितीयजन्माभवत्।

इत्युक्त्वा राम ते नाम व्यत्यस्ताक्षरपूर्वकम्।
एकाग्रमनसात्रैव मरेति जप सर्वदा॥
आगच्छामः पुनर्यावत्तावदुक्तं सदा जप।

(अ० रा० २।७।८०-८१)

एवं शिष्यगणैः सह वाल्मिकिः एकां विशालशालां निर्माय सीतया सहितरामाय लक्ष्मणाय च वासार्थं दत्तवान्। ते तत्रैव निवासं कृतवन्तः।

वाल्मीकिना तत्र सपूजितोऽयं
रामः ससीतः सह लक्ष्मणेन।
देवैर्मुनीन्द्रैः सहितो मुदास्ते
स्वर्गे यथा देवपतिः सशच्या॥

(अ० रा० २।६।९२)

सुमन्त्रोऽपि सीतया लक्ष्मणेन सह रामं रथयानेन शृङ्गवेरपुरं नीत्वा स्थापितवान्। ततोऽयोध्यामागत्य रामवनगमनवृत्तान्तं दशरथं कथयामास। दशरथः रामवनगमनसमाचारं श्रुत्वा दुःखेन विललाप। ततो रुदन्ती कौशल्या स्वामिनमुवाच हे राजन्, पूर्वमेव यदि कैकेय्यापै वरं दत्तं तदा तत्पुत्रायैव राज्यं दत्तमासीतदा मम पुत्रस्य निर्वासनस्य किं प्रयोजनम्। स्वयमेवं कर्त्तव्यं कृत्वा कथं रोदिषि। कौशल्यायाः वचनमेवं श्रुत्वा क्षते अग्निना स्पष्ट इव जातः पुनः शोकाश्रुपूर्णनेत्रः इदं वचनमब्रवीत्। शप्तोऽहं यौवने केनचिन्मुनिना पुरो-श्रवणपितुः यज्ञदत्ताख्य वैश्यस्याख्यानं श्रावितवान् कौशल्यायै शापवचनम् श्रवणपिता प्राह, त्वमप्येवं पुत्रशोकेन मरणं प्राप्स्यसि। स अनिवारितः शापकालः इदानीं मम प्राप्तः। राजा इत्युक्त्वा शोकसमाकुलः विललाप।

हा राम पुत्र हा सीते हा लक्ष्मणगुणाकर।
त्वद्वियोगादहं प्राप्तो मृत्युं कैकेयिसम्भवम्॥

(अ० रा० २।७।४७)

वदन्नेवं दशरथः प्राणांस्त्यक्त्वा दिवंगतः।

(अ० रा० २।७।४८)

तदनन्तरं कौशल्यासुमित्रादयः, अन्ये च राजपोषिताः उरस्ताडनपूर्वकं चुक्रुशुः बिललेपुश्च। प्रातःकाले वसिष्ठः प्रययौ मन्त्रिभिरावृतः दशरथं तैलद्रोण्यां क्षिप्त्वा भरतं शत्रुघ्नं च आनेतुं दूतान् युधाजिन्नगरं प्रति प्रेषयामास। ततो दूतसंवादं प्राप्य भरतः शत्रुघ्नश्च त्वरितमेवायोध्यामाजग्मतुः। ततो वसिष्ठादेशेन तौ गुरुणोक्तप्रकारेण आहिताग्नेर्यथाविधि पितुर्देहं संस्कृत्य, एकादशेऽहनि संप्राप्ते विधिवत् श्राद्धं विधाय शतशः सहस्रशः वेदपारगान् ब्राह्मणान् भोजयामास। तत्र पितरमुद्दिश्य ब्राह्मणेभ्यो बहुधनं गवांसहस्राणि, ग्रामान् रत्नाम्बराणि च ददौ। ततः वसिष्ठेन सह भ्राता

मन्त्रिभिः परिवारितः गृहेऽवसत् । तदनन्तरमेवं अनुभूयते यत् अहं सीता समेतं रामसेवार्थं वनं गच्छेम नात्र तिष्ठेम ।

ततः एकस्मिन् दिने सभायामुपस्थितेषु सर्वेषु वसिष्ठः शत्रुघ्नेन सह भरतमाहूय भरतं राज्याभिषिक्तं कर्त्तुमुद्यतोऽभवत् । तदा भरतेनोक्तं, मे राज्यस्य किं प्रयोजनमस्ति । महाराजः रामो राजाधिराजोऽस्वयमेव । अहं प्रातः मन्त्रिभिः मातृभिः सह राममानेतुं वनं पादयानेन गन्ता । भवन्तः गच्छन्तु न वा गच्छन्तु । इति श्रुत्वा सर्वे साधुवादं कुर्वन्तिस्म ।

ततः प्रभाते गच्छन्तं भरतं सुमन्त्रेणोदिताः साश्वकुञ्जराः सर्वसैनिका अनुजग्मुः । एवं क्रमेण सर्वे शृङ्गवेरपुरे गङ्गातटं गतवन्तः । महत्या सेनया सार्धमागते भरते सशङ्कितो गुहः भरतसमीपमागत्य शुभभावनां ज्ञात्वा ननाम शिरसा भूमौ, गुहोऽहमिति प्रोवाच । तदा भरतः उत्थाय गाढ़मालिङ्ग्य कुशलं पप्रच्छ । ततो भरतेनोक्तं यत् सीतया सह रामः यत्र सुप्तस्तत्स्थानं दर्शय । ततो गुहेन तत्स्थानं दर्शयामास । ततो गुहेन सेनया सह भरतं चित्रकूटपर्वतपार्श्वे मन्दाकिनीतटे गङ्गापारं भरद्वाजाश्रमम् नीतवान् । भरद्वाज मुनिंदृष्ट्वा भरतोऽतिभक्तितः साष्टाङ्गं ननाम । शिष्टानुसारं भरद्वाजोऽपि अतिथिसत्कारं कारयामास । ततो मुनिं प्रणम्यादेशमवधार्य गुहेन सह शत्रुघ्नेन सह भरतः रामाश्रममार्गमन्विष्यम् प्रतस्थे । दूरतः सुन्दरं रामाश्रमं ददर्श ।

ददर्श दूरादतिभासुरं शुभं
रामस्य गेहं मुनिवृन्दसेवितम् ।
वृक्षाग्रसंलग्नसुबल्कलाजिनं
रामाभिरामं भरतः सहानुजः ॥

(अ० रा० २।८।६६)

ततो भरतः रामसीतापदाङ्कितमार्गेण रामाश्रमसमीपं जगाम । तत्र जटामुकुटनववल्कलाम्बरं प्रसन्नवदनं विलोकयन्तं जनकात्मजां शुभां सौमित्रिणा सेवितपादपङ्कजं रामं त्वराग्रहीत् । रामः दोर्भ्यां परिष्वज्य नेत्रजलैः सिषिञ्च । ततो द्रष्टुकामा सर्वाः मातरः त्वरान्विताः समाजग्मुः । वसिष्ठोऽपि आशीर्वादं ददौ । रामश्च स्वभावेन यथार्हमुपवेश्याह, पिता मे कुशली किं वा दुखितः, माम् किमाह ? ततः वसिष्ठेनोत्तरितम्, भो रामः ! त्वद्वियोगाभितप्तः त्वामेव परिचिन्तयन् राम-रामेति, सीतेति, लक्ष्मणेति ब्रुवन् दिवंगतः । ततो रामः हा तात, मां परित्यज्य क्व गतोऽसि

इति रुरोद। सर्वाः मातरश्च रुरुदुः। ततो वसिष्ठः शान्तवचनैः शमयामास। तदनन्तरं मन्दाकिनीं गत्वा ते वीतकल्मषाः स्नात्वा राज्ञे जलं ददुः। ते सर्वं जलकर्म जलकाङ्क्षिणे रामो लक्ष्मणसंयुतः पिण्डान्निर्वापयामास। ततः स्नानं कृत्वाश्रममाजग्मुः।

ततोऽपरेदिने भरतः स्नात्वा रामसमीपं गत्वा निवेदितवान्, हे राम स्वात्मानमभिषेचय। राज्यं पालय। मातुश्चापराधं क्षमस्व। अहं चतुर्दश वर्षं यावत् वने वत्स्यामि। अतीव दुराग्रहानन्तरं रामः वसिष्ठमिंगितं, तदा वसिष्ठश्चैकान्ते भरतं कथयति। शृणुवत्स ! रामो नारायणः साक्षात् रावण बधार्थमेव दशरथगृहे जातः। त्वं दुराग्रहं त्यज ! तदा भरतः श्रीरामस्य चरणपादुकां गृहीत्वा सर्वैः सह अयोध्यामागतः राजसिंहासने रामपादुकां संस्थाप्य स्वयं नन्दीग्रामे ब्रह्मर्षिवत् जीवनं यापयामास।

अत्र रामचन्द्रोऽपि चित्रकूटं परित्यज्य दण्डकारण्ये अत्रिमुनेः आश्रममागतः। अत्रेः रामस्य पूर्णपरिचयोजातस्तथा मुनेः संकेतेनानसूया पातिव्रतस्योपदेशं सीतायै प्रददौ।

समाप्तमिदमयोध्याकाण्डम्

अरण्यकाण्डम्

सर्ग—१

ततः परस्मिन् दिने प्रातः स्नानानन्तरं रामः मुनेः सम्मत्या दण्ड-कारण्यं गन्तुमुद्यतोऽभवत् । अतः आज्ञां देहि मार्गदर्शनार्थं च शिष्यानाज्ञापयतु । रामस्य वचनं श्रुत्वा निर्जगाद, भो राम, सर्वेषां मार्गदर्शकः भवान् तव को मार्गदर्शकः ? तथाप्यधुना भवान् लोकव्यवहारस्यानुसरणं करोति, अतः मम शिष्यगणः मार्गदर्शनार्थं गमिष्यति ।

क्रोशं गत्वा रामः महतीं नदीं दृष्ट्वा ऋषिशिष्यानपृच्छत्—कथं पारं गमिष्यामि ? तदा शिष्याः ब्रुवतेऽत्र एका सुदृढा नौका वर्त्तते । वयमानीय पारं न यामः । तथा कृते ततस्ते शिष्याः अत्रेराश्रमं परावर्तिताः । तदा भीषणवने किञ्चिद् दूरे गते एकं भीषणाकारं राक्षसं विराधं ददर्श । तं वाणेनैकेन पातयामास । विराधमृतशरीरात् एकः सुवर्णालङ्कारसुसज्जितः सूर्यसदृशः पुरूषः निःसृतः । असौ दुर्वाससा शापितः विद्याधरश्चासीत् । शापाद्विमुक्तः विद्याधरः रामं परिक्रम्य प्रणम्य च परमं पदं प्राप ।

सर्ग—२

विराधे वधे सति सीतया लक्ष्मणेन च सह रामः शरभङ्गमुनेराश्रमं जगाम । ततः शरभङ्गोऽपि रामस्यातिथ्यं कृत्वा कथितवान् यदद्यावत् तपसः फलं प्राप्तं, यन्मया तपसा पुण्यं प्राप्तं तत् भवन्तं समर्प्य मोक्षपदं प्राप्स्यामि । एवमुक्त्वा महाविरक्तः शरभङ्गः स्वपुण्यं रामचन्द्रं समर्प्य सहसा चितामारुह्य ससीतं रामं ध्यात्वाग्निं प्रज्वाल्य स्वपाञ्चभौतिकं शरीरं दग्ध्वा पञ्चभूतें निमग्नः । ततो मुनिगणाः एकीभूयः आतिथ्यं चक्रुः । एवं किञ्चित्कालं तत्र वने उवास ।

ततो रामः अगस्त्यशिष्य सुतीक्ष्णमुनेराश्रममगच्छत् । ततः सुतीक्ष्णः वहुविधं स्तुतिं चकार । रामेणोक्तं यत् तव गुरोरगस्त्यस्य दर्शनमिच्छामि । किञ्चिद् दिनं तस्याश्रमे स्थातुमिच्छामि । प्रातः काले सीतया लक्ष्मणेनसह सुतीक्ष्णं नीत्वा अगस्त्येन सह वार्तालापं कर्त्तुं अत्युत्कण्ठितः शनैः शनैः सहानुजः अग्निजिह्वाश्रमम् निकषा अगच्छत् ।

सर्ग—३

तस्मिन् दिने मध्याह्ने ससीतो रामचन्द्रः सुतीक्ष्णाभ्यां सहाग्निजिह्वस्याश्रमम् प्राप्तः। ततोऽपरेदिने नन्दनवनसदृशमध्येऽगस्त्यस्याश्रमसमीपं गत्वा सुतीक्ष्णमग्रे प्रेषितं सूचनार्थंमगस्त्यसमीपम्। ततोऽगस्त्यो ब्रूते, तव कल्याणमस्तु। त्वरितं श्रीराममत्रानय, अहं तद्दर्शनार्थं ध्यायामि। सूचनाप्राप्त्यन्तरं रामं स्वाश्रमं समानीयागस्त्यः विनयेनातिथ्यसत्कारमकरोत्। तत एकान्तोपविष्टे रामचन्द्रेऽगस्त्येन भगवतो रामचन्द्रस्य विराटस्वरूपस्यवर्णनमकारि। एवं कथितं यत् हेराम, सीतासहितस्वरूपं मम हृदये वसतु। एवमनुनयविनयानन्तरं कथितं यत् हेराम, स्वमायया यदर्थमवतीर्णोऽसि तं भूभारं राक्षसमण्डलं जहि। तत उक्तम् हेराम इतो योजन युग्मे पुण्यकाननमण्डितः पञ्चवटीनाम्ना गौतमीतटे आश्रमोऽस्ति। तत्र त्वया शेषः कालः नेतव्यः। तत्र देवानां बहुकार्याणि कुरु। तदनन्तरं रामः अगस्त्यस्य मनोहरभाषणं तत्वार्थगर्भितं स्तोत्रं श्रुत्वा तस्यानुमत्या तत्प्रदर्शितमार्गेण प्रतस्थे।

सर्ग—४

रामः मार्गे व्रजन् शैलशृङ्गमिव वृद्धं जटायुषं दृष्ट्वा सविस्मितः लक्ष्मणं प्राह। हे लक्ष्मण, मम धनुर्देहि। अयं राक्षसः ऋषिभक्षकोऽस्ति। इमं हन्मि। रामस्य वचनं श्रुत्वा गृद्धराजो ब्रूते नाहं वधार्हः, तव पितुः प्रियः सखास्मि। तव प्रिय-कामनार्थं पञ्चवट्यां वत्स्ये। कदाचित्तु जनकनन्दिनीं रक्षयिस्यामि। गृद्धस्य वचनं श्रुत्वा रामः सस्नेहमब्रवीत्--साधु साधु अत्रैव समीपस्थे वने पञ्चवट्यां वस।

एवं जटायुषं स्वसम्मतिं दत्वा आलिङ्ग्य च ससीतो रामः लक्ष्मणेनसह पञ्चवट्यां गतः। तत्र गौतमीतटे लक्ष्मणेन सुन्दरमाश्रमः निर्मायितवान्। तत्र गङ्गातटे कदम्बाम्रपनसादिफलोपेतं निर्जनं वनं देवलोकसदृशसुरम्यमासीत्। तत्र प्रतिदिनं लक्ष्मणेन कन्दमूलफलादिकमानीय समर्पितञ्च। स्वयं धनुर्वाणधरः रात्रौ जागर्ति।

एकदा एकान्तोपविष्टे रामस्य समीपं गत्वा लक्ष्मणः विनयावनतः मोक्षस्यैकान्तिकीं गतिं पप्रच्छ। तत् विज्ञानसहितं भक्तिवैराग्यवृंहितम् रामः सविस्तरेण लक्ष्मणं सुश्राव। एवं कथितं यत् यः पुरूषो भक्तिश्रद्धया मम सेवां करोति च सत्सङ्गत्या च नामानुकीर्त्तनं करोति सदा तस्याभिमुखेऽहं विराजमानोऽस्मीति।

सर्ग–५

पञ्चमवस्यामेकदा कामासक्ता घोररूपधारिणी शूर्पणखा रामसन्निधौ समागत्याकथयदहं रावणस्य भगिनी भ्रात्रा खरेणसहात्र वने विचरामि। त्वं कोऽसि कथमत्रागतः। त्वं मया सह रमस्व। तदा रामेणोक्तं मयासह तु एषा कल्याणी भार्या अस्त्येव। तवानुरूपोऽतीव सुन्दरः मम भ्राता बहिरास्ते ते पतिर्भविता। गच्छ तेन सार्धं वार्तां कुरु। तदा सा लक्ष्मणसमीपं गत्वा स्वाभिप्रायं निवेदितवती। लक्ष्मणेनोक्तमहं तस्य धीमतः दासोऽहं कथं त्वं दासी भविष्यसि। गच्छ तत्रैव। तदा सा दुष्टा क्रोधात् रामसमीपमागत्य प्रोक्तवती। अव्यवस्थितस्त्वं कथं भ्रामयसि अधुनैव तवाग्रतः सीतां भक्षयामीत्युक्त्वा जानकीमनुधावति। ततो रामाज्ञया लक्ष्मणः तस्याः नासाग्रं कर्णौ च चिच्छेद। ततः सा रूधिराक्तावपुः त्वरितं भ्रातुः खरस्याग्रे गत्वा पपात, सर्वं वृतान्तं च कथयामास। ततो रामस्य बधाकांक्षया दूषणेन सह सहत्रिशिरेरसा खरः चतुर्दशसहस्रसेनाभिश्च सहानीय तत्र समागतः। तैः सह रामस्य युद्धोऽभवत्। रामः प्रहरार्धेन सर्वान् जघान। तदनन्तरं सर्वं वृतान्तं शूर्पणखा लङ्कां गत्वा रावणं निवेदयामास धिक्कारं च ददौ। ततो रावणः चकितो भूत्वा रात्रौ निद्रां न लब्धवान्। रामस्य कथमेकेन वाणेन सर्वे हताः। रामः न मानुषः यद्वा परेशः मां हन्तुकामः समागतः। तदामनसि निश्चित्य शोचितं यदि परमात्मना रामेण वद्धस्तदा बैकुण्ठराज्यं परिपालयेऽन्यथा बहुकालं राक्षस राज्यं भोक्ष्येऽहम्। अतोऽवश्यं गच्छामि। रावणः इत्थं रामं परमेश्वरं विदित्वा विरोधवुद्ध्यैव हरिं प्राप्स्यामि। भगवान् भक्त्या द्रुतं न प्रसीदेत्।

(अत्र रावणाचरणं भगवद्भक्तिकामनां प्रकटयति)

सर्ग–६

असौ रावणः रात्रौ एवं निश्चित्य साहायार्थं मारीचस्य गृहं गत्वोक्तं यत् त्वं मायामृगो भूत्वा रामलक्ष्मणौ आश्रमादपनेष्यसि तदाहं सीतां हरिष्यामि। ततस्त्वं स्वाश्रमागमिष्यसि। ततो मारीचो विस्मितो ब्रूते एतन्मूलघातकरं वचः केनोपदिष्टम्। रामस्य पौरूषं विज्ञाय कथितम् यदा स रामः कौशिकस्य यज्ञसंरक्षणायागतस्तदा मामेकेनवाणेन शतयोजनं सागरे पातयामास। ततो भयार्दितः सततं राममेव विभावये। रात्रौ निद्रापि नायाति। अतस्त्वमपि रामं भज। ततो रावणेनोक्तं, ब्रह्मणा–प्रार्थितः परमात्मा रामः मानुषो भूत्वा मां हन्तुं यत्नादिहागतः। अतः सीतां हरि-

स्याम्यहम्। राघवात् रणे वधे प्राप्ते परमं पदं प्राप्स्यामि। यद्वा रामं रणे हनिष्यामि तदा निर्भयः सन् सीतां प्राप्स्यामि। अतस्त्वं विलम्बं मा कुरू, स्वर्णमृगो भूत्वा गच्छ। अन्यत्किञ्चिद् यदि भाषसे त्वं तदानेनासिना चैव त्वां हनिष्यामि।

मारीचस्तद्वचः श्रुत्वा स्वात्मनि अचिन्तयत्। यदि मां रामो हन्यात्तदा भवार्णवात्मुक्तो भवामि। यदि रावणः मां हन्यात्तदा मे निश्चयं निरयो भवेत्। तदा रावणभयात् स्वर्णमृगो भूत्वा रथमास्थाय रामाश्रमं गतः। तत्र सीतादृष्टिपथे विचरन् स खलः सीतां मोहितवान्।

सर्ग–७

अथ रामोऽपि सर्वं रावणचेष्टितं ज्ञात्वा सीतामेकान्ते उवाच हे सीते, भिक्षुरूपेण रावणस्तेऽन्तिकमागमिष्यत्यतस्त्वमत्राश्रमे छायारुपेण स्थित्वा अग्नौ अदृश्यरूपेण वर्षमेकं तिष्ठ। रावणस्य बधान्ते मां पूर्ववत् प्राप्स्यसे। रामस्य वचनं श्रुत्वा सीता तथाऽकरोत्। मायासीतां वहिः संस्थाप्य स्वयम् अनन्तेऽन्तर्दधौ। ततः सा मायासीता हसती मायामृगं दृष्ट्वा राममभ्येत्योवाच। पश्य राम रत्ननिर्मितं मृगं हत्वा मह्यम् देहि, मम क्रीडामृगो भविष्यति। तथेति धनुरादाय रामः गच्छन् लक्ष्मणमब्रवीत्। विपिने मायाविनः राक्षसाः बहवो भ्रमन्ति अतस्त्वं सीतां रक्ष। लक्ष्मणोऽपि आह, भो देव एवं भूतो मृगः कुतः चायं मारीचोऽस्ति नात्र संदेहः।

(अत्रत्या कथा मूलकथातो विभिन्ना)

रामेणोक्तं यद्ययं मारीचस्तदा हन्मि, अन्यथा सीताविश्रामहेतवे आनयिष्यामि। ततो रामो मृगमन्वगात्। असौमृगः कदाचित् दृश्यतेऽभ्याशे क्षणं धावति लीयते दृश्यते च। ततो दूरादेवं राममपाहरत्। ततो रामः मृगरूपिणं राक्षसं विज्ञाय शरमादाय विव्याध। तदा मारीचः हे लक्ष्मण ! हे महाबाहो ! हा हतोऽस्मि इति रामवचनवद्वाचा रूधिराशनः पतात।

तद्देहादुत्थिततेजः भगवन्नामान्ते स्मरणात् राममेवाविशत्। हा लक्ष्मण, इति वाक्यं श्रुत्वा शङ्किता सीता भीतातिदुःखसंविग्ना लक्ष्मणमिदं वाक्यमब्रवीत्। गच्छ लक्ष्मण वेगेन भ्राता तेऽसुरपीडितः। लक्ष्मणोऽपि सीतां प्राह हे देवि, रामवाक्यं नास्ति, कश्चिन्म्रियमाणः राक्षसः इदं वचोऽब्रवीत। स कथं दीनवचनं भाषते। तदा सीताऽपि प्राह हे दुर्बुद्धे लक्ष्मण भ्रातुर्व्यसनमिच्छसि। एवं लक्ष्मणः दुर्वाक्यश्रवणात् कर्णौ पिधा–

यातिदुःखितः एवं मां भाषसे चण्डि धिक् त्वां नाशमुपैष्यसि वनदेविभ्यः समर्प्य शनैः शनैः राममेव ययौ ।

(अत्रादि लक्ष्मणरेखा कथा नास्ति)

ततोऽन्तरं भिक्षुवेषधृक् रावणः सीतासमीपमागत्य परस्परालापान्तरं रावणः सीतायाः दुर्वचनं श्रुत्वा विशालरूपधारी नखैः धरणीं विदार्य बाहुभिरूद्धृत्य रथे संस्थाप्य विहायसा ययौ । ततः राम राम, हा लक्ष्मणेति रुदन्ती सीता भुवं पश्यन्ती भयोद्विग्ना जाता । पक्षिसत्तमः जटायुः सीतायाः वचनं श्रुत्वा तीक्ष्णतुण्डेन रावणरथं चूर्णयामास । ततो रावणः स्वखड्गेन जटायोः पक्षौ चिच्छेद । ततो रावणोऽन्येन रथेन सीतामादाय जगाम । ततः सीता गच्छन्ती पर्वताग्रे वानरान् दृष्ट्वा उत्तरीयार्धेनाभरणादिकं विमुच्य वद्ध्वा पपात । ततो रावणः समुद्रमुल्लङ्घ्य स्वान्तःपुरेऽशोकवने राक्षसीभिः परिवृत्तां सीतां मातृवद् स्थापितवान् । तत्र सीता कृशातिदीनवदना विह्वला हा राम हा रामेति विलप्यमाना राक्षसीवृन्दमध्ये स्थितेति ।

(अत्र रावणोत्तमचरित्रं वर्णितं व्यासेन)

सर्गः ८

रामः कामरूपिणं मायाविनं राक्षसं मारीचं हत्वा तत्र स्वाश्रमं गन्तुम् प्रतस्थे । ततो दूरादेव मुखेन परिशुष्यतायान्तं लक्ष्मणं ददर्श । रामः स्वात्मन्येव चिन्तयामास मयाकृतां मायासीतां तल्लक्ष्मणो न जानाति, एवं वञ्चयित्वा प्राकृतो यथाशोचामि । यदि विरतो भूत्वा मन्दिरे तूष्णीं स्थास्यामि तदा राक्षसकोटीनां वधो न भविष्यति । यद्यहं सीतायै दुःखातुरो भूत्वा शोचामि तदा सीतामनुचिन्वन् लङ्कां गत्वा सकुलं रावणं हत्वा चाग्नौ स्थितां सीतां नीत्वायोध्यां यास्यामि । ब्रह्मणार्थितोऽमनुष्यभावेन जातोऽस्मि । अतः मनुष्यभावमापन्नः किञ्चित्कालं वसामि । एवं निश्चित्य लक्ष्मणं प्राह— सीतां त्यक्त्वा किमर्थमागतोऽसि । राक्षसैः सीता नीता वा भक्षिता । तदा लक्ष्मणः सीतायाः दुर्वचः रुदन् त्वद्वाक्यसदृशं श्रुत्वा दुराग्रहेण प्रेषितः । तदा कर्णौ पिधायाहमत्रागतः । रामेणोक्तं, तथाप्यनुचितं कृतम् । त्वया स्त्रीवाक्यं सत्यं कृतम् । राक्षसैर्नीता वा भक्षिता च संशयो नास्ति । इति चिन्तापरो रामः स्वाश्रमं गतश्च सीतामदृष्ट्वा विललाप । हे प्रिये क्व गतासि । अथ मद्विमोहार्थं लीलया क्व विलीयसे । इति विलपन् रामः हे— वनदेव्यः, मृगाः पक्षिणः, वृक्षाश्च ममप्रियां दर्शयन्तु ।

एवं विचिन्वन् सकलं वनं सलक्ष्मणो रामः भग्नं रथं छत्रचापं पतितं दृष्ट्वा लक्ष्मणं प्राह भो लक्ष्मण केनचित् नीयमानां सीतां जीत्वा तां सीतामन्यो जहार। तत् किञ्चिद्भुवोभागं गत्वा रुधिराक्तवपुर्दृष्ट्वा रामो ब्रूते, एष वै सीतां भक्षयित्वा शेते। चापमानय निशाचरं शीघ्रं हन्मि। रामवचनं श्रुत्वा भीतवत् जटायुरूवाच। मां न मारय, तव कल्याणं भवतु अहं स्वकर्मणा म्रियमाणः जटायुस्ते भार्या हारिणमनुद्रुतः। तेन सह मम युद्धोऽभवत् तस्य वाहान् रथं चापं छित्वाहं तेन घातितः। पतितोऽस्मि प्राणांस्त्यक्ष्यामि, माम् पश्य। ततो रामः हस्ताभ्यां स्पृशन् हे जटायो, ब्रूहि मम भार्या केन नीता। मम कार्यार्थं त्वं हतोऽसि अतः मम बान्धवः असि। तदा जटायुः उवाच भो राम भीमविक्रमः रावणः तव मैथिलीमादाय दक्षिणाभिमुखं ययौ। इत परं न वक्तुं शक्नोमि, प्राणांस्त्यक्ष्यामि तवाग्रतः, हस्ताभ्यां मां स्पृश पुनर्यास्यामि तव पदम्। ततो रामः लक्ष्मणेन सहकाष्ठानि आनीय तं प्रददाह। ततोऽनन्तरमेवासौ दिव्यरूपधरः कृताञ्जलि पुटो भूत्वा रघुनन्दनं तुष्टाव। स्तुतिं चकार च। परंधाम च गतः।

सर्गः ९

ततो रामो लक्ष्मणेनसह विपिनान्तरं जगाम। भ्रमन्तौ तौ शिरः पाद-विहीनः योजनायतभुजद्वयमध्ये रामलक्ष्मणौ तद्बाहोर्मध्ये परिवेष्ठितौ जातौ। अन्योन्यवार्तालापक्रमेण तस्य कबन्धस्य बाहू चिच्छेद। ततः कबन्धः स्वपूर्वरूपस्य गन्धर्वस्य परिचयं दत्तवान् एवम् अष्टावक्रस्य शापात् शिरः पादविहीनवृतान्तं कथयामास। ततः कबन्धेनोक्तं ब्रह्मदत्तवचनानु-सारेणाद्य भवद्गतः पुरुषोत्तमस्य दर्शनं जातम्। इतः परं मा श्वभ्रास्ये निक्षिपाग्निवृत्तेऽग्निनादाह्यमानोऽहं त्वया पूर्वरूपमनुप्राप्य तव भार्यामार्गं कथयामि। तथा कृते रामे असौ कबन्धः कन्दर्पसदृशाकारः सर्वाभरण-भूषितः गन्धर्वोभूत्वा भक्तिगदगदयागिरा रामस्य विराटरूपस्य स्तुतिं चकार।

सर्ग १०

ततः कबन्धो रामेण वरं प्राप्य परमधाम गच्छन् कथितवान्। हेराम, पुरोभागे भक्तिमार्गविशारदा शबरी वसति। सा सीता सम्बन्धे सर्वं कथ-यिष्यति। एवमुक्त्वा कबन्धः विमानमारूह्य विष्णुलोकं ययौ।

ततो रामः शबरीसमीपं गतवान्। तत्र शबर्याः सविधसत्कारं स्वी-कृतवान्। ततस्तया कथितं, यदा आश्रमेऽस्मिन् मम गुरुर्मतङ्गः वसन्ना-

सीत्। तस्य सेवां कुर्वन्ती वर्षसहस्राणि यातानि। असौ महर्षि ब्रह्मलोक-गमनसमये मामुक्तवान् यत् त्वमत्रैव तिष्ठ। अत्रैव राक्षसवधार्थं भगवान् रामो मनुष्यावतारो भूत्वा आगमिष्यति। आगते रामे दग्ध्वादेहं तत्पदं यास्यासि। हेराम, त्वद्ध्यानैक तत्परा तथैवावकरवम्। प्रतीक्षायामद्य गुरुभाषितं सफलं जातम्। तव संदर्शनं गुरूणामपि न जातम्। हीनजाति समुद्भवा योषिन्मूढा तव दासस्याधिकारो नास्ति, पुनः कुतः सेवावसरः। अद्य कथं दर्शनं जातं स्तोतुं न जाने किं करोमि प्रसीद हेराम। ततो राम-चन्द्रेण भक्तिज्ञानस्योपदेशं ददौ। ततः शबरी हुताशनं प्रविवेश च मोक्षपदं प्राप्तवती। 'भक्त्या तुष्यति केवलं न च गुणैः भक्तिप्रियो-माधवः'।

किष्किन्धाकाण्डम्

सर्ग १

तदनन्तरं सलक्ष्मणो रामोऽत्यन्तसुशोभिते पम्पासरोवरतटे जटावल्कल विभूषितः सरोवर-जलं पीत्वा वृक्षच्छायायुक्तमार्गे ऋष्यमूकगिरेः पार्श्वे गच्छन्तौ तौ गिरेर्मूर्ध्नि चतुर्भिर्वानरैः सह सुग्रीवं स्थितं ददर्शतुः। ततो बालीभयात् भीतः सुग्रीवः हनुमन्तं ब्रह्मचारी वेषेण प्रेषितवान्। हनूमान् रामसमीपं गत्वा सविस्तरं परिचयं पृष्टवान्। ततो रामेणापि वनागमन-कारणसहितं स्वपरिचयं दत्तं सीता हरणस्यापि वृतान्तं श्रावितम्।

ततो ब्रह्मचारी हनुमान् सुग्रीवस्य सवृत्तान्तं परिचयं दत्वाकथयत्। अहं वायुपुत्रः हनूमान् नामकः सुग्रीवस्य सचिवोऽस्मि। तेन सुग्रीवेण सह तव सख्यं युक्तं भविष्यति। तव भार्याहारिणं हन्तुं सहायो भविष्यत्येव। यदि रोचते तर्हि इदानीमेवागच्छ, गच्छामस्तदा। ततो रामेणोक्तम् अह-मपि सख्यं कर्तुमागतः, तस्यापि कार्यमवश्यं करिष्यामि। ततो हनूमान् ब्रूते, यत्र वालिनो भयात् सुग्रीवः पर्वतोपरि तिष्ठति तत्र गन्तुं मम स्कन्धौ आरोहता गच्छामः। महाकपिः क्षणादेव तथैव कृत्वा गिरेर्मूर्ध्नि उत्पपात। तौ रामलक्ष्मणौ वृक्षच्छायां समाश्रित्य हनूमान् सुग्रीवमुपगम्याकथयत्, भयं जहि, रामलक्ष्मणावायातौ। अग्नि साक्षिणमारोप्य तेन द्रुतं सख्यं कृतम्। ततः वृक्षच्छायायां सर्वे उपाविशन्। सीताहरणवृत्तान्तं लक्ष्म-णेन श्रुत्वा सुग्रीवो ब्रूते यथा मया दृष्टं तथा श्रावयामि। ततः सीतया पतितोत्तरीयार्धेनाभूषणानि समानीय रामं दर्शयामास। रामचन्द्रः त विमु-च्याभरणानि दृष्ट्वा हा सीतेति मुहुर्मुहुः रुरोद। ततः सुग्रीवोऽप्याह, हे राम, प्रतीज्ञां करवाणि, समरे रावणं हत्वा तव जानकीमानयिष्यामि। ततो हनूमानग्निं प्रज्वाल्य तयोः समीपौ रामसुग्रीवौ भुजौ प्रसार्यालिङ्ग्य च शपथं कारयामासतुः। ततः सुग्रीवोऽपि बाली निष्कासन-वृत्तान्तं स्त्रीहरणं चापि श्रावितवान्। मतङ्ग ऋषि-शापात् ऋष्यमूकं स नायाति। तदा सुग्री-वेण कथितं यत् स तु महाबली बाली यदि अत्रस्थितस्य दुंदुभिराक्षसस्य शिरः उत्थाय प्रक्षिपतु तदाहं जाने त् यत् तेन सह योद्धुं समर्थो भवान्। तदा रामः पादाङ्गुष्ठेन दशयोजनं चाक्षिपत्। पुनश्चैवं कथितं यत् संमुख-स्थितान् सप्ततालवृक्षानेकेन शरेण निपातयतु तदा तेन बालिनासह युद्धस्य

तव बलं ज्ञास्ये । रामोऽपि शीघ्रेण तथाऽकरोत् । ततः सुग्रीवः रामचन्द्रस्य गुणानुवादं कुर्वन् भक्तेः याचनां कृतवान् ।

सर्ग २

एवं रामचन्द्रसंसर्गेण सुग्रीवस्तृप्तो जातस्तथा राज्यादितोऽपि विरतोभवत् । तदा राम ईषद्धास्येनावदत् भो सुग्रीव, त्वं यदुक्तं तत्सत्यं परन्तु लोकाः माम् वदिष्यन्ति यत् अग्निसाक्ष्येणमित्रताकृतेन रामेण सुग्रीवस्य किंकृतमिति लोकापवादो भविष्यति । अतस्त्वं बालिनासह युद्धाय गच्छाहं बाली-बध्येऽलम् । एवं कृतोपदेशेन वालीना सह युद्धाय सुग्रीवो गतः । घोरयुद्धानन्तरमसमर्थो भूत्वा सुग्रीवः परावर्तितः । तदा रामं ब्रूते भो राम! कथं वालिना मम प्राण-घात-तुल्यं युद्धं कृतमिति दृष्ट भवता अतः स्वयमेव स्वशरेण तस्य प्राणान्तं कुरु तात् । तदा रामेणोक्तं भो मित्र, द्वयोः भ्रात्रोः समानस्वरूपं दृष्ट्वाहं स्ववाणं नैव सन्धातम् । पुनः ममप्रदत्तां मालां गले कृत्वा युद्धाय गच्छ । अधुनाऽवश्यमेव वधिष्यामि तम् । द्वितीयवारं गते सुग्रीवे बाली विस्मितोजातः, परन्तु भार्ययावरोधितोऽपि बाली युद्धाय समागतः युद्धस्थितयोस्तयोः रामो वृक्षपार्श्वतः स्ववाणेन बालिनं पातयामास । बाली निःसंज्ञो भूत्वा पतितस्तदाऽभिमुखे रामं विलोक्य कथितवान् । यत् हेराम, वृक्षखण्डे तिरोभूत्वा चौरवत्कृतसङ्गरः किं यशः प्राप्स्यसे । सुग्रीवेण किं कृतं मया किं न कृतम् । लोकविश्रुतं मद्बलं न जानीषे । हेराम, यदि चेच्छामि तदा रावणं सकुलं बद्ध्वा ससीतं मुहूर्त्तार्धे आनेतुं शक्नोमि । भवान् धर्मात्मा व्याधवत् वानरं हत्वा कं धर्मं लप्स्यसेऽभक्ष्यं मासं किं करिष्यसि । ततो बाली रामं नारायणं बुद्ध्वा शरणागतो भूत्वा कथितं यदहं परधामगच्छामि मम तुल्यबलेऽङ्गदे त्वं दयां कुरु, च मम हृदयं च स्पृश, वाणमुद्धृत्स्व तथेति कथयित्वा रामेण वाणे निःसरिते वानरोऽमरेन्द्रोऽभवत् ।

सर्ग-३

रामेण मारिते वालिनि सर्वे वानराः किष्किन्धां गत्वा तारां कथयन्ति यत् वयं नगरस्य रक्षकाः स्मस्त्वमङ्गदाय राज्यं देहि । बालि-मरणं श्रुत्वा तारा रुदित्वा कथयति ममाङ्गेन राज्येन किमहं पत्यासह प्राणान् त्यक्ष्यामि एवं क्रन्दमाना सा मृतपतिसमीपं गतवती पत्यु पादयोरपतत् । ततो रामोपरि दृष्टिपातेनाकथयत् येनवाणेन वालिनं हतस्तेन वाणेन मां जहि यतः त्वरितं पतिलोकं गमिष्यामि । सुगीवमपि अकथयत् मम पतिः तुभ्यं राज्यं दायितवान्, त्वं रूमया सह निष्कण्टकं राज्य कुरू । ततो रामो दया-

पूर्वकं तत्वज्ञानोपदेशतः सान्त्वयामास। एवं देहस्य संसारस्य च निःसारतां कथयित्वा तुतोष। ततो रामाज्ञया सुग्रीवाङ्गदादयः वालिनः यथाशास्त्र-मौर्ध्वदैहिकसंस्कारं कृतवन्तः। ततः सुग्रीवः स्नात्वा रामस्य समीपं गत्वोक्तवान्—हे राजराजेश्वर वानराणां राज्यं त्वं संचालय। अहं लक्ष्मणवत् त्वां सेविष्ये। ततो रामेणोक्तमावयोर्भेदो नास्ति। त्वं ममाज्ञया किष्किन्धां गत्वा राज्यपदे राज्याभिषेकं कारय। ततो रामाज्ञया लक्ष्मणः सुग्रीवस्य राज्याभिषेकं कारितवांश्चाङ्गदं युवराज्पदे स्थापितवान्। तदनन्तरं लक्ष्मणेनसह रामश्चतुर्मासपर्यन्तं प्रवर्षणगिरि शिखरे वासं कृतवान्।

सर्ग—४

ततः प्रवर्षणगिरौ ससीतरामलक्ष्मणौ सुगन्ध-पुष्प-फल-युक्त-गिरिगह्वरे आनन्देन कालं यापयामासुः। एकदा एकान्ते ध्यानावस्थितानन्तरं लक्ष्मणो ब्रूते, हे प्रभो देवर्षिनारदाः येन क्रिया-मार्गेण ध्यायन्ति तं मार्गमुपदिशन्तु। येन गृहस्थाः मुक्तिं, प्राप्नुवन्ति तत्मार्गमुपदिशन्तु। तदा रामः लक्ष्मणं गृहसूत्र-शाखानुसारिक क्रिया-जप-पूजनादिकं मूर्त्ति-पूजनादिकज्ञानं ज्ञापयामास। एवं गुरू-दीक्षानन्तरं गुरौ भक्तिकरणाय ज्ञानं कथयामास। ततो रामः हा सीते, हा सीते, इति वदन् रात्रौ निद्रां न लब्धवान्। तस्मिन्नेवकाले हनूमान् सुग्रीवं कथितवान् यत् रामचन्द्रः कियदुपकारं कृतवान्। कृतघ्नस्त्वं विस्मृतः। वालीवत् त्वमपि कालमुखे यास्यसि। हनुमतो वचनं श्रुत्वा सुग्रीवः हनुमन्तमुवाच। दशदिक् वानरान् प्रेषयतु। तदा सुग्रीवाज्ञया बुद्धिमान् हनूमान् सप्तद्वीप-निवासिनः वानरान् आहूय निर्दिष्टवान् यत् सीतान्वेषणार्थं गच्छन्तु। मे पक्षमनुवर्तन्ते, तेवध्याः भविष्यन्ति नात्र संशयः। ततः सर्वे सुचतुराः वानराः तथादेशानुसारं कार्यं कर्तुं गतवन्तः।

सर्ग—५

एकदा प्रदोषकाले निशामुखे सीताविरहजदुःखं विज्ञायोवाच। हे लक्ष्मण, यः कश्चित् राक्षसेन हृतायाः सीतायाः जीवितस्य समाचारं श्रावयेत्तदातस्योपकारं मानयामि। यत्र-कुत्रापि नीता वा रक्षिता तदा तस्य ससैन्या भस्मसात् करिष्यामि। एवमुक्त्वा हा सीतेति विललाप। सुग्रीवोऽपि कृतघ्नोऽभवत्! यथा वाली मम वाणेन हतस्तथा सुग्रीवोऽपि बन्धु-बान्धवैः सह भविता। एवं ब्रुवन्तं रामं लक्ष्मणो ब्रूते, यद्याज्ञापयसि त्वं तदा इदानीमेव हत्वा आनयिष्यामि, ततो रामेण कथितं, मैवं कुरू। केवलं त्वं भयं

दर्शयित्वात्रागच्छ। तदा तस्मिन् समये यथोचितं करिष्यामि। तदा लक्ष्मणो गत्वा तथाऽकरोत् सर्वे वानराः धृतपाषाणपादपाः किलकिला शब्दं चक्रुः। क्रोधितं लक्ष्मणं दृष्ट्वाङ्गदः वानरमवरुध्य दण्डवत्प्रणनाम। ततो लक्ष्मण श्चाङ्गदमुवाच, ममागमनं स्वपितृव्याय निवेदय। तथा कृते सुग्रीवो हनुमताङ्गदेन च सह लक्ष्मणं समीपं गत्वा तं सान्त्वयन् आनयत्। ततस्तारा लक्ष्मणं प्रणनाम, कथिता च सीतान्वेषणाय प्रेषितार्थवानराः शीघ्रमागमिष्यन्ति। सुग्रीवोऽपि विनयावनतः लक्ष्मणं प्रणनाम। ततो लक्ष्मण सुग्रीवयोः परस्परालापानन्तरं नलनीलाङ्गदादिनासह सलक्ष्मणः सुग्रीवः रामपार्श्वमुपागमत्।

सर्ग—६

ततः सुग्रीवलक्ष्मणौ रथात्समुत्पत्य रामपादयोः पेततुः। रामोऽपि सुग्रीवमालिङ्ग्य यथान्यायमातिथ्यं चकार। तदा सुग्रीवेणोक्तं, इमे सर्वे देवांश-संभूता युद्धविशारदाः भवतां कार्यं साधयिष्यन्ति। त्वदाज्ञाकारिणः फलमूलाशनाः सन्तिः। ऋक्षाणामधिपतिः जाम्बवान्, अतिबुद्धिमान् तथा मन्त्रिप्रवरः हनूमांश्च सर्वत्र विख्यातः पराक्रमी मेधावी वर्तते। तथान्ये च वहवः वानराश्चाज्ञाकारिणः तव वशवर्तिनः सन्ति। पर्वताग्रैश्च शत्रु घातिनं शक्रतुल्यपराक्रमं कार्ये नियोजयन्तु भवन्तः। रामेणोक्तं, हे सुग्रीव मम काठिन्यं त्वं जानासि। अतो जानक्याः मार्गणार्थं यथायोग्यं नियुङ्क्ष्व। ततो रामस्य वचनं श्रुत्वा सुग्रीवः सर्वासु दिक्षु विविधान् वानरान् संप्रेष्य दक्षिणदिशं जाम्बवन्तं हनूमन्तमङ्गदं नलं सुषेणं शरभं मैन्दं द्विविदं च संप्रेष्य कथितं यत् यूयं मासादर्वाक् निवर्तध्वम्। यदि मासादूर्ध्वमेकदिनं भवेत्तदा सर्वान् प्राणदण्डं भविष्यति। तदा तस्मिन्नेव काले रामचन्द्रः गच्छन्तं हनुमन्तं स्वनामाक्षरमङ्कितामेकमङ्गुलीकमभिज्ञानार्थमेकान्ते सीतायै दानार्थं दत्तवान् अस्मिन् कार्ये त्वं बुद्धिवान् तव मार्गे कल्याणं भवतु। ततो वानरा भ्रमन्तो विन्ध्याचलवनेऽनेकान् राक्षसान् हत्वा पिपासाकुलाः जाताः। पुनर्भ्रमन्तो लतागुल्माच्छादितं विशालमन्धकारं गह्वरं ददृशुस्तथा तस्यार्द्रपक्षात् क्रौञ्चान् निःसृतान् दृष्ट्वाग्रे हनुमान् प्रभृति वानराः परस्परं धृत्वा बाहून् वाहुभिः प्रविवेशुः। वहिर्गत्वा सर्वे एकं स्वच्छं सरोवरं तटे च भक्ष्य-भोजादियुक्तसकालान् वृक्षांश्च ददृशुः। तत्र एकस्मिन् भवने एकाकिनीं तपस्यालीनां योगिनीं ददृशुः। योगिनीं दृष्ट्वा सर्वे भीत्या भक्त्या प्रणेमुः। तान् दृष्ट्वा देवी प्राह। कुतो वा

कस्य दूताः वा मत्स्थानं किमर्थमागतवन्तः। ततो हनूमान् रामस्य परिचयं दत्वा सीतान्वेषणहेतोरत्र समागतोऽहम्। त्वम्बा किमर्थमत्रासि, का वात्वमिति कथय। योगिनी ब्रूते, यूयं गच्छथ, स्वेच्छानुसारेण फलं जलं च भुक्त्वा आगच्छ। तदा पूर्णवृत्तान्तं कथयिष्यामि। आदेशानुसारं तथा कृत्वा वानराः तत्रोपस्थिताः। तदा सा ब्रूते, पूर्वकाले हेमानाम्नी एकापुत्री आसीत्। शङ्करः प्रसन्नो भूत्वा तस्यै स्थानं वासाय दत्तवान्। अत्र सा वर्षाणामयुतायुतमतिष्ठत्। अहं तस्याः सख्याः स्वयंप्रभानाम्नी पुत्री अत्र मोक्षकांक्षया विष्णुभक्ति-परायणा तिष्ठामि।

पूर्वकाले सा ब्रह्मलोकगामिनी सा कथितवती। यदा त्रेतायुगे नारायणः रामावतारो भूत्वा भूभारहरणार्थाय कानने विचरिष्यति च तद्भार्यां मार्गन्तो वानरा गह्वरम् आगमिष्यन्ति, तदा त्वं तेषां सत्कारं कृत्वा राम दर्शनार्थं गमिष्यसि। तदा रामं स्तुत्वा विष्णुलोकं गमिष्यसि। इदामीमहं रामदर्शनं कर्तुं इच्छामि यूयरक्षीणि पिदध्वं, वहिर्गुहाम् गमिष्यथ। एवं कृते सर्वे वानरा पूर्वस्थितं वनं वेगाद्गताः। गुहां त्यक्त्वा सा स्वयंप्रभा सलक्ष्मणरामस्य दर्शनं कृत्वा नानाविधां स्तुतिं कुर्वन्ती निश्चलां भक्ति ययाचे। एवं यत्र कुत्रापि जाता मे जिह्वा रामरामेति सर्वदा वदतु। तदा रामः प्रसन्नो भूत्वाऽवदत् एवं भविष्यति। त्वं बदरीवनं गच्छ। तदा स्वयंप्रभा पुण्यक्षेत्रे बदरिकाश्रमे रघुपतिं मनसा स्मरन्ती कलेवरं त्यक्त्वा परं पदमवाप।

सर्ग-७

तत्र वानराश्च सीतान्वेषणक्लान्ता वृक्षखण्डेषु छायामुपविश्य अङ्गदेनोक्तं गह्वरे भ्रमणेन मासमतिक्रान्तो यातः, यदि किष्किन्धां गमिष्यामोवयं तदा सुग्रीवो प्राणान् हरिष्यत्येव। अतः व्रतोपवेशनं कृत्वा मरिष्यामः। अङ्गदस्य निश्चयं श्रुत्वा हनुमान् वर्णनपुरःसरमङ्गदं सान्त्वयामास। तस्मिन्नेव काले महेन्द्राद्रिगुहान्निःसृत्य संपातिनाम गृद्धोऽब्रवीत्। के यूयं प्रायोपवेषणे उपस्थिताः। अङ्गदेनोक्तं वयं सुग्रीवादेशेन रामस्य सीतान्वेषणार्थमत्रागताः जटायोरपि मोक्षवर्णनं श्रावितवान्। तदाङ्गदस्य वचनं श्रुत्वा सम्पातिरुवाच, भो वानराः वहुवर्षसहस्रान्ते प्रियभ्रातुः समाचारं श्रुत्वाहं प्रसन्नोऽस्मि। हे वानराः पूर्वं भ्रात्रे जलाञ्जलिदानार्थं माम् जलान्तिकं नमध्वं यतोऽसमर्थोहं पश्चाद्वाक्साहाय्यं करिष्यामि। एवं कृते जलाञ्जलिदानान्तरं सम्पातिनोक्तं गृद्धावाद दूरदृष्टिरस्ति। रावणः

सीतां नीत्वा अशोकवनिकायां रक्षितवान्। समुद्रं शतयोजनपर्यन्तं यः लङ्घयेत् सः जानकीं दृष्ट्वा पुनरास्यत्येव ! पक्षहीनोऽहम् अन्यथा कार्यमहं कर्तुं समर्थ आसम्।

सर्ग-८

तदनन्तरं सर्वे वानराः सम्पातेः स्वजीवनवृतं कथितुमादिष्टवन्तः। सम्पातिः द्वयो भ्रात्रोः वृत्तान्तं तथा चन्द्रमा नाम मुनीश्वरस्योपदेशमपि सविस्तरं श्रावयामास। ततस्तेन मुनीश्वरेणेदमपि कथितं यत् यदा सीतान्वेषणार्थं वानराः त्रेतायुगे रामावतारे मिलिष्यन्ति तदा तव नवीनपक्षौ पुनरेव भविष्यत एव। भो वानराः पश्यन्तु नूतनावतिकोमलौ पक्षौ मे जातौ। समुद्रस्य लंघने यत्नं कुरूध्वम्। हे वानराः दुर्जनोऽपि यन्नामस्मृति मात्रतः संसारवारांनिधिं तीर्त्वा विष्णोः शाश्वतपदं प्राप्स्यति। यूयं तु रामस्य प्रियभक्ता वानरा कथं न समुद्रमात्रतरणे शक्ताः। सम्पातिरपि गतवान्।

सर्ग-९

सम्पातेःगमनानन्तरं सीता दर्शनार्थमतिव्याकुला जाता हर्षिताश्च। ततो दुर्लङ्घ्यं समुद्रं दृष्टवा परस्परं कथयन्ति यत् कथमेवं तरामहे। भवन्तः प्रमाणं भवन्तः प्रमाणम्। सर्वे सर्वेषां मुखापेक्षिणः जाताः। सर्वे अङ्गद वचनानुसारेण स्वस्य वीरत्वं प्रकाशयामासुः। ततः सर्वेषां बलज्ञापनानन्तरं हनूमन्तं जाम्ववान् प्राह। भो कथं तूष्णी स्थीयते स्वसामर्थ्यं दर्शय। त्वं साक्षाद्वायुतनयो वायुतुल्यपराक्रमः। रामस्य कार्यार्थं त्वमुत्तिष्ठ, रामस्य कार्यं कृत्वा अस्मान् पाहि। ततो हनूमानतिहर्षितः ब्रह्माण्डं स्फोटन्निव सिंहनादं चकार। आज्ञापयतु ससीतां लङ्कां रावणञ्चानेष्यामि वा रावणं वद्ध्वा सीतामानेष्यामि। हनूमतो वचनं श्रुत्वा तदा जाम्बवान् प्राह, तव कल्याणं भवतु जीवन्तीं जानकीं दृष्ट्वागच्छ। पश्चाद्रामेण सहितो दर्शयिष्यसि। ततो हनूमान् महेन्द्राद्रिं गत्वा अद्भुत-दर्शनो जातः। अभूतपूर्वोदर्शनीयः विस्मयकारी सञ्जातः।

सुन्दरकाण्डम्

सर्ग—१

ततो जाम्ववतोऽज्ञानुसारेण हनूमान् वाहू प्रसार्य दक्षिणामुखं समुद्रं लिलङ्घयिषुः वायुवेगेन पुप्लुवे। वायुवेगतो गच्छन्तं हनुमन्तं दृष्ट्वा विशङ्कमाना देवा हनुमत्परीक्षणार्थं नागमातरमग्रे प्रेषयामासुः। सुरसापि देवादेशेन विघ्नकरणार्थं गच्छतो हनुमतोऽग्रे मुखं विदार्य खादितुमैच्छत। ततो द्वयोर्योजनातिक्रमेण मुखं विदार्य सुरसामुखं प्रवर्धमाणां पञ्चाशद्योजनं दृष्ट्वा हनूमानङ्गुष्ठाकारो भूत्वा तन्मुखं प्रविश्याग्रे निःसृत्वा ब्रवीत् हे देवि तुभ्यं नमः। ततः सुरसाऽब्रवीत् बुद्धिमतांवरः रामस्य कार्यार्थं गच्छ। बलं जिज्ञासुभिः दैवैः संप्रेषिताहं सीतां दृष्ट्वा पुनः रामं प्रक्ष्यसि त्वम्।

ततः समुद्रादेशेन मैनाकः समुद्रान्निःसृत्य विश्रामार्थे फलदानार्थमग्रे उपस्थितस्तदा हनूमान् समयाभावात् मानरक्षणार्थं कराग्रेण तं स्पृष्ट्वा शिखरात् अग्रे ययौ। ततश्छायाग्राहिणी सिंहिका राक्षसी तस्य छायां गृहीत्वा तया गृहीतो हनुमान् तां पद्भ्यां चाहनत्। पुनरूत्पुलुत्य समुद्र तटात् त्रिकूटाचलस्थितलङ्कामपश्यत्। ततो रात्रौ सूक्ष्माकारेण (मार्जाराकारेण) लङ्कां प्रविश्यमानं हनुमन्तं दृष्ट्वा लङ्कापुनी नाम्नी राक्षसी व्यतर्जयत् कस्त्वं मामनादृत्य वानररूपेण चौरवत्किं कर्त्तुमिच्छसि। इत्युक्त्वा पादेनादृच्य हनुमानपि तामवज्ञाय तां मुष्टिना जघान। सा रक्तमुद्वमती भूमौ पपात उत्थाय चावदत्। त्वया लङ्का जिता तव कल्याणमस्तु। पूर्वं ब्राह्मणोक्तेन रावणस्यान्तो भविष्यति। त्वं गच्छ तत्राशोकवनिकायां शिंशपावृक्षमूले राक्षसीभिः सुरक्षिता सीता तिष्ठति। तां दृष्ट्वा राघवाय निवेदनीयम्। धन्याहमद्य श्रीरामः सदा मामुपरि प्रसन्नो भवतु।

उल्लङ्घितेऽब्धौ पवनात्मजेन
धरासुतायाश्च दशाननस्य।
पुस्फोर वामाक्षि भुजश्च तीव्रं
रामस्य दक्षाङ्गमतोन्द्रियस्य॥

सु० का० २।५८

सर्ग—२

ततो हनूमान् रात्रौ लङ्कां प्रविश्य प्रतिगृहं भ्रमन् अशोकवाटिकामध्ये

शिंशपातरूमूले राक्षसोमध्यस्थितां मलिनाम्बरधारिणीम् एकवेणीं कृशां दीनां राम रामेति भाषिणीं शोचन्तीं भूमौ शयानां सीतां दृष्ट्वा कृतार्थोऽभवत् ततो वृक्षपत्रेषु संल्लीनो हनूमान् दशास्यं विंशतिभुजं रावणमायान्तं ददर्श। रावणश्च हृदि सदा राममेवाचिन्तयत् सीतार्थमपि रामो नायाति च रामेण मे निधनं कथं शीघ्रं भवेत्। तस्मिन्दिनेऽपररात्रौ रावणः स्वप्नो दृष्टः यत् रामेण सन्दिष्टः कश्चिद्वानरः बृक्षाग्रस्थितोऽनुपश्यति। अतः स्वप्नः कदाचित्सत्यः स्यादेवं चिन्तयन्नेव तत्रागत्य वाक्शरैर्विद्धां जानकीं दृष्ट्वा च वानरः रामाय निवेदयतु तेन सीता समीपं द्रुतमगमत्। (अत्रत्येयं कथा मूल बाल्मीकिरामायणकथातो नवीना भिन्ना च। अनया कथया रावणस्य रावणस्य निर्दोषत्वं प्रदर्शितं व्यासेनास्मिन् रामायणे।) भयदर्शनार्थमागते रावणे भीता सीताऽधोमुखी स्थिता। ततो रावणः रामं निन्दयन् अश्लील वचनैः भयं दर्शयामास। तदा सीतापि तृणमन्तरे कृत्वा रावणं कथितवती मदनुपस्थिते रामे भिक्षुरूपेण मां हृतोसि, शीघ्रमेवत्वं कालमुखे गमिष्य स, त्वां सकुलं हत्वा मामयोध्यां नेष्यति रामः। तदनन्तरं रावणः क्रोधाविष्टः खड्गमुद्यम्य हन्तुं प्रवृतो जातस्तदा मन्दोदरी निवार्य रावणं नीतवती। इतः परं रावणादिष्टेन राक्षसीभिः सीता तर्जिता तदा त्रिजटा स्व-स्वप्न वृतान्तमशुभं श्रावयामास ततः सर्वाः भयसंत्रस्ताः निद्रावशमुपागताः। सीता च दुःखेन परिप्लुता आलम्व्य शाखां चिराय रुदिता आसीत्। सर्वं वृत्तान्तं वृक्षाग्रतः हनुमान् मौनी भूय ददर्श।

सर्ग-३

रुदन्ती सीता वेण्याः उद्बन्धनेन प्राणत्यागो वरं रामं बिना, एवं निश्चितबुद्धिं तां दृष्ट्वा सूक्ष्मरूपधारी हनूमान् रामस्य जन्मवृत्तान्तं ससीतं लक्ष्मणेन सह दण्डकारण्यागमनं पञ्चवट्याः निवासवर्णनम् रावण कृत सीता हरणवृतान्तं जटायुषः वृत्तान्तं ऋष्यमूक पर्वतागमनं सुग्रीवेण सह मैत्रीवर्णनं बालिनं हत्वा सुग्रीवस्य राज्याभिषेकवर्णनं सुग्रीवेण दश-दिक्षु सीतान्वेषणार्थे वानरप्रेषणम्, सर्वं वृतान्तं शनैः-शनैः श्रावितवान्। तत्पश्चात् कथनं यत् तेषु एकोऽहं वानरोऽस्मि। सम्पातिकथनानुसारेण समुद्रं लङ्घयित्वा लङ्कापुरीमागतोऽहम्। लङ्कां सर्वत्र भ्रमणान्तरमिदानीं जनकनन्दिनीं सीतामपश्यम्। अत्रातिशोकार्त्तां दृष्ट्वा ममागमनं सफलं जातम्। इत्युक्त्वा हनूमान् मौनोऽभवत्।

सर्वं वृत्तान्तं श्रुत्वा सीता ब्रूते, येनामृतवचनं श्रावितं स समक्षमा-

यातु। तदा सीताबचनं श्रुत्वा हनूमान् कलविङ्कप्रमाणचटकपक्षीतुल्य-रूपधारी सीताग्रे समागत्य प्राञ्जलि पुरतः प्रणनाम। रामस्य दासोऽहं सुग्रीवस्य मन्त्री एवं पवनदेवस्य पुत्रोऽहम्। तदा सीतयोक्तं वानराणां मनुष्याणां संगति घटने कथम्। तथा हनूमान् ऋष्यमूकस्य सुग्रीवस्य मैत्री वर्णनं दशदिङ्वा नरप्रेषणं एवमागमनकाले रामः प्रत्ययार्थं रामनामाङ्कितमङ्गुलीयकं ददौ। ततो हनुमान् साञ्जलिः प्रणनाम। तदा सीता प्रसन्ना जाता। हनूमन्तं च सीता निवेदितवती यत् अत्रत्य सम्पूर्णं बृत्तान्तं रामं कथयिष्यसि, येन रामो दयार्द्रो भवेत्। यदा रामो न आगमिष्यति तदा मासद्वयाभ्यन्तरे मां दुष्टो रावणः भक्षयिष्यति। तदा हनूमता कथितं यत् सुग्रीवसैन्येनसह सलक्ष्मणः रामः शीघ्रमागमिष्यति, तथा सकुलं रावणं हत्वा त्वाम् अयोध्यां नेष्यति। ततः सीता केशपाशान्ते स्थितं चूड़ामणिं विमुच्य चित्रकूटस्य जयन्तकाकस्य वर्णनञ्च उक्त्वा अभिज्ञानार्थं रामाय ददौ। ततो हनूमान् महारूपं दर्शयित्वा अशोकवाटिकां विध्वसं कृत्वा फलं भुञ्जन् स्थितः। तत्समाचारं राक्षसीभिः रावणाय निवेदितं, ततो रावणः ससैन्यमक्षयकुमारं पुत्रं प्रेषयामास। हनूमान् क्षणार्धेनैव लौहस्तम्भेन सर्वं चूर्णयामास। ततो रावणेन ससैन्यं मेधनादं प्रेषितम्। सैन्यानांतु त्वरितमेव हनुमता विनाशः कृतः। ततो मेघनादः ब्रह्मपाशेन हनूमन्तं बद्धा लङ्कां रावणसमक्षं नीतवान्।

सर्ग ४

धृतपाशबन्धनं हनुमन्तं यान्तं नागरिकाः मुष्टितलैः अताडयन्। रावणसभायां रावणनिर्दिष्टेन प्रहस्तेनापृच्छत्, भो वानर, केनादेशेन—केन कार्येण कुतः समायातः। तदा हनूमता कथितं, यस्य भार्या स्वनाशाय शुनेव सद्धविः त्वया हृता, तस्य दूतोऽहमस्मि। सलक्ष्मणो रामः प्रवर्षणपर्वते विराजमानः अस्ति। सीतान्वेषणार्थं दशदिक्षु वानराः प्रेषिताः। अहं सीतादर्शनार्थं समागतः। सीतां दृष्ट्वा तव पुत्रेण ब्रह्मपाशबन्धनेनानीतः। हे रावण, त्वं राक्षसीबुद्धिमपहाय भगवतः रामस्य शरणं गच्छ। त्वं ब्रह्मणः पौत्रः असि कथमैवं करोषि। हनूमतो वचनं श्रुत्वा क्रोधान्धो रावणः कथयति। भो वानर, रामं ससुग्रीवं जानकीं च हन्मि। तदा हनुमता कथितं रामस्य दूतोऽहं कोटिशा अपि रावणाः मम समो नास्ति तव का चर्चा। तदा रावणः खड्गेन हन्तुमुद्यतः। तस्मिन् काले

विभीषणेन निवारितः। दूताः सदाऽबध्याः अतः किञ्चित् चिह्नम् दत्वा प्रेषय येन रामोऽत्रागमिष्यति। विभीषण-वचः श्रुत्वा रावणोऽवदत्। वानराणां लाङ्गूले महती ममता, अतः लाङ्गूले तैलाक्तवस्त्रैः वेष्टयिता रज्जुभिः दृढं बद्ध्वा, समन्ताद् भ्रामयित्वा तूर्यघोषैर्घोषयन्तः हनुमतापि तत्सर्वं सोढं किञ्चिच्चिकीर्षुणा गत्वा पश्चिमद्वारसमीपं गत्वा सूक्ष्मो बभूव। ततः पर्वताकारस्ततः उत्प्लुत्य गोपुरं स्तम्भामेकं आदाय तान् रक्षिणः क्षणात्हत्वा प्रदीप्तपुच्छेन सम्पूर्ण नगरं केवलं विभीषणगृहं त्यक्त्वा ददाह। ततो हनूमान् समुद्रे उत्प्लुत्य लाङ्गूलं मज्जयित्वान्तः स्वस्थचित्तो बभूव। वायोः प्रियसखित्वाच्च सीतया प्रार्थितोऽनिलः हनुमतः पुच्छं न ददाह। प्रत्युत शीतलो बभूव। रामस्य दूतः प्रकृतानलेन कथं सन्तप्यः ?

सर्गः ५

तदनन्तरं हनूमान् सीतां प्रणम्यादेशं नीत्वा गच्छदेवं कथितञ्च, हे देवि, शीघ्रमेव सलक्ष्मणो रामः सुग्रीवेणसह आगमिष्यति। सीतायाः आदेशं नीत्वा हनूमान् महासागरपारं गन्तुं पर्वताग्रे जगाम। ततः पद्भ्यां गिरिं पीडयन् वायुवेगेन चलितः। गगनान्तःस्थः महाशब्दं च चकार हनूमान्। तं शब्दं श्रुत्वा सर्वे वानराः मारूतिमागतं ज्ञात्वा हर्षेण महताविष्टाः महास्वनम् शब्दं चक्रुः।

ततः शीघ्रमेव हनूमान् गिरिशिखरादवतीर्याब्रवीत्। मया सीता दृष्टा, सकानना लङ्का च धर्षिता, दशग्रीवतः संभाषितस्ततोऽहं पुनरागतः। इदानीमेव रामसुग्रीवसन्निधिं गच्छामि। गच्छतां वानराणां दृष्टिः मधुवने पतिता। अङ्गदाज्ञया सर्वे वानराः अमृत-फलानि भुक्त्वा पीत्वा मधु सुग्रीव समीपमागतवन्तः। हनूमान् रामं सुग्रीवं च प्रणम्योवाच। सीतां शोक मग्नाम् अशोकवनिकामध्ये-स्थितां दृष्ट्वा समागतोऽहम्। सा राक्षसी मध्ये परिवृत्ता रामरामेति, वदन्ती शोकमग्नाऽस्ति। शनैः-शनैः सूक्ष्म-रूपः भवतामनुपस्थितौ रावणादिहरणं वालीसुग्रीव-सम्पाति-जटायुषो वर्णनं सुश्राव तदा समीपं गत्वा प्रलापमकरवम्। ततः तवाभिज्ञानमङ्गुली-यकं दत्तम्। ततः पूर्णपरिप्लवज्ञानेन सा सुप्रसन्ना जाता। अशोक-वनिका ध्वंसनं लङ्कादहनं राक्षसहननं च कृत्वा समागतोऽहम्। अभिज्ञानार्थं च सीतया चूडामणिः प्रदत्तः, जयन्तस्य बृत्तान्तश्च श्रावितः। येन रामः

विश्वसेत। इति कृत्वा समागतोऽहम्। ततो रामचन्द्रः हनुमन्तं देवैरपि दुर्लभं पावनं हृदयेनालिङ्गनं कृतवान्।

सुन्दरकाण्ड—अध्याय ५–श्लोक ६३

यत्पादपद्मयुगलं तुलसीदलाद्यैः
संपूज्य विष्णुपदवीमतुलां प्रयान्ति।
तेनैव किं पुनरसौ परिरब्धमूर्ती
रामेण वायुतनयः कृतपुण्यपुञ्जः॥

युद्धकाण्डम्

सर्ग-१

हनूमता कथितजानकीसमाचारं श्रुत्वा प्रमुदितो रामचन्द्रः हनूमतः प्रशंसामतिशयेन कृतवान् कथितवांश्च यत् कथमहं समुद्रपारं गत्वा सीतां द्रक्ष्यामि। ततः सुग्रीवेणोक्तं त्यजतु चिन्तां सर्वं कार्यं साधयामि। ततो रामस्योक्त्या हनूमान् लङ्कानगरस्य सविस्तरं वर्णनमकारि कथितञ्च अपारसैन्यदलस्य रावणस्याहं चतुर्थांशं तु हत्वा समागतः। हनूमतो वचनं श्रुत्वा रामः सुग्रीवमादिष्टवान् त्वरितमेव विजयमुहूर्त्ते ससैन्यं प्रस्थानं कुरु। सुदुर्धषरावणं नाशयिष्यामि सीतामानेष्यामि च। ततः सुग्रीवेण सह सलक्ष्मणः रामः प्रस्थानमकरोत्। ते सर्वेऽतिवेगेन मलयाचल-सह्याद्रि पर्वतयोः पारं कृत्वा दक्षिणसमुद्र-तटं गतवन्तः। रामाज्ञया सर्वे तत्रैव स्थिताः। तावत्समुद्रस्य तारणाय मन्त्रयामो वयम्। अद्यैव रावणो हन्तव्यः कथं घोरसमुद्रं पारयामः। इति चिन्ताकुलाः सर्वे रामपार्श्वे अवस्थिताः। ततो रामः सीतामनुस्मृत्य दुःखेन महता वृतो जातः। यद्यपि भगवान् रामः पुराणपुरुषपरमात्मा चासीत्तथापि मायाप्रभावेण अज्ञानिनः सुखिनं दुःखाकान्तं भावयन्ति।

सर्ग-२

लङ्कायां हनुमत्कृतस्य चर्चायां समीतो रावणः स्वमन्त्रिणश्चाहूय कथयति यत् यूयं मन्त्रविशारदाः। कथयन्तु अधुनाऽस्माभिः किं कर्त्तव्यम्। एकेन वानरेण सागरं लङ्घयित्वाऽशेषेण लङ्कां दग्ध्वा स्वस्थो जातः। तदा परस्परं सर्वे कथयन्ति यत् आज्ञापयतु तान् सर्वान् वानरान् सुग्रीव-राम-लक्ष्मणान् क्षणात् नाशयामि। असावधानाः वयं तेन वानरेण वञ्चिताः। ततः कुम्भकर्णो रावणं कथयति, यत् भवता यत् कृतं तत्स्वात्मनाशाय। संयोगतः सीताहरणकाले रामेण त्वं न दृष्टः। यदि रामः त्वां पश्यति तदा प्राणान् हरिष्यति। राक्षसानां विनाशाय च त्वया सीता नीता। महामीन : कोऽपि विषपिण्डं निगीर्य नाशमाप्नोति तथा जानकी आनीता त्वया। यद्यपि त्वया जानता अनुचित्कर्म कृतं सर्वं तथापि शीघ्रमहं रामं हनिष्यामि, स्वस्थचित्तो भव। किन्तुजानीहि यत् रामो न मानुषः साक्षान्नारायणः सीता च भगवती अस्ति।

कुम्भकर्णवचः श्रुत्वा मेघनादः अवोचत्। अनुज्ञां देहि सलक्ष्मणं रामं सुग्रीवं वानरांश्च हनिष्यामि। ततो भागवतप्रधानः विभीषणश्चागत्य सभायां कथितवान् यत् रामस्याग्रे न केपि योद्धा स्थास्याति। सहस्र रावणागमनेऽपि रामस्य पारं न प्राप्स्यन्ति। रामः साक्षान्नारायणोऽस्ति। सीताभिधानेन महाग्रहेण ग्रस्तोऽसि। अतः महाधनेनरामं सत्कृत्य तस्मै सीतां दत्वा सुखीभवतु यावन्नायाति सः। रावण यथाम्रियमाणः औषधमिव विभीषणवचः हितं शुभं पवित्रं न जग्राह। प्रमत्तः रावणः विभीषणमकथयत्, यत् ममान्नं भुक्त्वा शत्रोः प्रशंसां करोसि। त्वं कृतघ्नः राक्षसकुलकलङ्कोऽसि। रावणस्य धिक्कारयुक्तवचनं श्रुत्वा विभीषणः चतुर्भिर्मन्त्रिभिः सार्धं श्रीरामचन्द्रस्य सेवार्थं रामसमीपं गतवान्।

सर्ग-३

विभीषणेन राम-समीपमागत्य कथितं यदहं सीताहरणकारिणो रावण स्यानुजोऽहं विभीषणः। भ्रात्रा निष्कासितः शरणागतोऽहम्। वारंवारमहं तं कथितं यत्त्वं सीतां रामाय समर्पय, परन्तु कालवशीभूतः स न श्रृणोति खड्गं नीत्वा मां हन्तुमुद्यतस्ततो भयाच्चतुर्भिर्मन्त्रिभिः सार्धं समागतोऽहम्। ततो रामाज्ञया लक्ष्मणः समुद्रस्य जलमानीय लङ्कायाः तव राज्याभिषेकं करोमि, यावच्चन्द्रदिवाकरौ त्वं राज्यं करिष्यसि। विभीषणो ब्रूते, अहं यथाशक्ति तव साहाय्यं करिष्यामि। तस्मिन्नेव समये रावण प्रेषितः शुकनामा दैत्यः समागत्य सुग्रीवायोक्तवान् त्वं किष्किन्धां गच्छ। वानरेण सह कथं युद्धं करोसि। रावणस्यापकारं न भविष्यति। ततः सर्वे तं हन्तुमुद्यताः परन्तु सुग्रीवेण परावर्त्तितः स रावणाय सनादं निवेदयामास। रामेणसह युद्धं कृत्वा नाशं प्राप्स्यति। शुकः रामस्य सैन्यादिकस्य वर्णनं रावणं कथितवान् तेन भयत्रस्तश्चासीत्।

रामेणोक्तं भो लक्ष्मण! समुद्रतटे आगमनानन्तरं समुद्रो न आयाति, अतः वाणेन शोषयामि। इत्युक्त्वा रामः वाणं सज्जीकृत्य शरं त्यक्तुमैच्छत्तदा दशदिशु अन्धकारो जातस्तदा भूषणसहितः दिव्यरूपधारी समुद्रश्चागतः। रामं कुपितं दृष्ट्वा बहु उपायनानि पुरतः क्षिप्त्वा दण्डवत्पादयोरपतत् वहुविनयं च चकार। ततः समुद्रसंकेतेन अमोघप्रक्षिप्तं स्ववाणं रामश्चोत्तरे द्रुमकुल्यनामकदेशेऽत्यजत्। ततः समुद्रसंकेतेन शतयोजन विस्तृतसेतुं नलनीलहस्तेन निर्मापयत्।

सर्ग ४

सेतु बन्धारम्भे रामेण श्रीरामेश्वरं शिवं संस्थाप्य पूजयित्वा च लोकहिताय तत्फलमुक्तम्। नलः पञ्चदिनाभ्यन्तर एव शतयोजनं सेतुं बबन्ध। तेनैव सेतुना असंख्याताः प्लवगोत्तमाः पारं गत्वा सुमेद्राद्रिं रुरुधुः। ततो लङ्कां दिदृक्षुः रामः लक्ष्मणश्च पर्वतमारुह्य नीलाचलशिखरे रावणं ददर्शतुः। तस्मिन्नेव काले शुको नाम संवादवाहकः रामदलस्य विस्तारवर्णनं च कथितवान्, यत् रामाय सीतां देहि, वा तेन सह युद्धं कुरु। रामस्य सैन्याः सर्वे विशालकायाः युद्धप्रवीराः। एक एव हनूमान् लङ्कां दग्ध्वा गतः, हनुमतोऽधिकाः बलशालिनः योद्धारः तत्र सन्ति। अवर्णनीयाः योद्धारः सन्ति। रामः साक्षान्नारायणः, सीता च भगवती अस्ति। अतः स्वाभिमानं त्यक्त्वा रामस्य शरणं भज। यत्र विभीषणो गतस्तत्रैव गच्छ, भवतां हितं कथयामि। ब्रह्मकुले जन्म, पौलस्त्यस्य पौत्रोऽसिमैवं कुरु।

सर्ग ५

रावणः शुकमुखोद्‌गीतं अज्ञाननाशनं वाक्यं श्रुत्वा दहन्निवाब्रवीत्। भो शुक, त्रैलोक्यशासनकर्त्तारं त्वम् एवं ब्रवीसि। ममान्नं भुक्त्वा एवं ब्रूषे दूरमपसरं श्रुत्वैवं शुकः स्वगृहं गतवान्। शुकः पूर्वजन्मनि वेदज्ञः ब्राह्मणश्चासीन्। आगस्त्यशापेन राक्षसो जातः, पुनः रामदर्शनान्मुक्तोऽभवत्। ततो रावणमातामहः नीतिनिपुणः माल्यवान् कथयति। भो रावण, रामभार्या यदानीता तद्दिनादेव लङ्कायाम् अपशकुनो भवति। रामः साक्षान्नारायणः अस्ति।

माल्यवतो हितं वचनं न रोचितं रावणाय, क्रुद्धो भूत्वा तमपहाय मन्त्रिभिः सहोपविश्य सर्वराक्षसान् युद्धायायोजयत्। इतो रामोऽपि लक्ष्मणानीतधनुरुत्थाय निमिषार्धेन रावणस्य श्वेतच्छत्र-किरीट-दशकञ्च चिच्छेद। अतो रावणो लज्जितो भूत्वा स्वकं गृहं विवेश, तथा प्रहस्तप्रमुखान् राक्षसान् युद्धाय वानरैः सह नोदयामास। इतो रामस्य यूथपाः—

जयत्यतिबलो रामो लक्ष्मणश्च महाबलः।
राजा जयति सुग्रीवो राघवेणानुपालितः॥

इति घोषयन्तः अरिभिः युयुधिरे। परस्परयुद्धेन रावणस्य चतुर्थांशान् राक्षसान् निहतवन्तः। ततो मेघनादेन ब्रह्मास्त्रेण बहवो वानराः नष्टाः तत्

दृष्ट्वा रामो ब्रूते भो लक्ष्मण मम धनुरानय। इति वचनं श्रुत्वा मायावी मेघनादः स्वनगरं ययौ। ततो रामाज्ञया हनूमान् द्रोणाचलगिरिमानीय तस्यौषधिबलात् वानरान् उज्जीवयत्। ततो रावण-रामसैन्ययोः परस्परयुद्धेन सर्वे राक्षसाः निहताः।

सर्ग ६

युद्धेऽतिकायादिप्रमुखे राक्षसे हतेऽतिक्रुद्धो रावणः लङ्का-रक्षार्थमिन्द्रजितं नियोज्य स्वयं रामेण सह युद्धाय प्रस्थितः। रावणेनाहतः लक्ष्मणः मूर्छितः भूमौ पपात। तमादातुँ रावणः शक्तो न वभूव। ततो हनूमान् लक्ष्मणमादाय रामसमीपं ययौ। रावणोऽपि हनुमता मुष्टिप्रहारेण रूधिरं वमन् भूमौ पपात। पुनः रामः तीक्ष्णवाणेन रावणस्य साश्वरथादिकं चिच्छेद, पुनः द्वितीयवाणेन रावणो मूर्च्छितो जातश्च। हस्ताद् धनुश्च पपात। पुनश्चार्धचन्द्राकारेण वाणेन किरीटं चिच्छेद। ततो रामो बूते, भो रावण त्वं, बाणपीडितोऽसि शस्त्ररहितोऽपि, अतएव इदानीं गच्छ पुनः श्वः आगमिष्यसि पुनः मम बलं द्रक्ष्यसि। दर्पंचूर्णानन्तरं रावणः लङ्कां गतः। रामचन्द्रोपि लक्ष्मणं मूर्च्छितं दृष्ट्वा हनुमन्तं द्रोणाचलमानेतुं प्रेषितवान्। रावणोऽपि कालनेमिं विघ्नकरणार्थं नियोजयत्। तदा कालनेमिः रावणं बहुबोधयामास यत् न रामः मानुषः, निरर्थकं वैरं मा कुरू, शरणापन्नो भव रामस्य।

सर्ग ७

अमृततुल्यं कालनेमेर्वचः श्रुत्वा रावणः क्रोधताम्राक्षः जज्वाल, हन्तुं च प्रवृत्तः। तदा रावणभयात् कालनेमिः शीघ्रं तद्विघ्नं कर्तुं गतः। पवननन्दनोऽपि विघ्नकर्त्तुः कालनेमेः मायां बुध्वा तं प्राणान्तं कृत्वा द्रोणाचल पर्वते औषधिमज्ञात्वा द्रोणाचलपर्वतमेवोत्थाप्य रामसमीपमागतः। रामोऽपि तदौषधिबलेन वैद्यसुषेणसंकेतेन लक्ष्मणमुज्जीवयामास। इतो रावणोऽपि रामवाणविद्धः शुशोच, यत् पूर्वकाले ब्रह्मणा कथितं यन्मम मृत्युः नरवानरैः भविष्यतीति, प्रायः स कालः समुपस्थितः। ततो रावणादेशेन कुम्भकर्णमुत्थाप्य रावणसमीपमानयच्चासौ रावणं प्रणम्यासने उपविष्टः। रावणेनोक्तं भ्रातः कुम्भकर्ण, ममोपरि महान् कष्टः आयातः, मम सैन्याः नष्टाः, त्वं तत्परो भूत्वा रक्षां कुरू। ततः कुम्भकर्णः रामस्य विशिष्टपरिचयं दत्वावोचत्, यत् पुरा नारदेनोक्तमेकदा रावणवधार्थं रामावतारो भविष्यति। इति वचनानुसारेण रामः साक्षाद् विष्णुरस्ति।

रामभजनकारिण: संसारपाशबन्धं त्यक्त्वा श्रीसीतापतिरामचरणाम्बुजं प्राप्स्यन्ति ।

सर्ग ८

कुम्भकर्णस्योपदेशतुल्यं वचः श्रुत्वा रावण: भृकुटी-विकटानन: आसनादुत्पतन्निव उवाच। नाहं त्वामुपदेष्टुमाकारयामि। मया कृतं यदि रोचसे तदा युध्यास्वान्यथाऽधुना त्वां निद्राबाधते, तर्हि सुप्त्यर्थं गच्छ। रावणस्य वचः श्रुत्वा कुम्भकर्ण: युद्धक्षेत्रे गत्वा हरिसैनिकान् भीषयन् समुद्रमभिनादयन् महानादं ननाद। एवं कृते वानरान् चूर्णयन्तं दृष्ट्वा विभीषण: ज्येष्ठभ्रातुश्चरणं नत्वा ब्रूते। अहं विभीषणोऽस्मि, मे दयां कुरु। मया रावणः बहुधा बोधित: परन्तु माँ खड्गं नीत्वा हन्तुमुद्यतः। धिक् त्वां गच्छ। तदाहं मन्त्रिभिः सार्धमागतोऽहम्। तदा कुम्भकर्णेनोक्तं वत्स, त्वं राममाश्रयात् राक्षसानां हिताय कुलसंरक्षणाय च जीवस्व। तदा कुम्भकर्णेन सह रामस्य भयंकरयुद्धोऽभवत् तदा रामः कुम्भकर्णस्य हस्तौ पादौ खण्डयित्वा शिरः चिच्छेद। तच्छिरः लङ्काद्वारे एव महोदधौ अपतत्। तदा देवादयः आकाशात् पुष्पमवाकिरन् स्तुतिं च चक्रुः। नारदोऽपि रामदर्शनार्थमागतवान् कथितवांश्च। कुम्भकर्णं हत्वा पृथ्व्याः भारो गतः। श्वः लक्ष्मण: मेघनादं हनिष्यति। परश्वः त्वं दशकन्धरं हनिष्यसि। सिद्धैः सह नभोगतः पश्याम्यहम्। इत्युक्त्वा नारदः सुरालयं गतवान्। महाबलं कुम्भकर्णं निहतं श्रुत्वा रावणः मूर्च्छितः भूमौ पतितः। तदा मेघनादः पितरं कथयति चिन्तां मां कुरु। अहं सर्वं करिष्यामि। शत्रून् हनिष्यामि। अहमिदानीं निकुम्भिलां देवीपूजार्थं गुहां गच्छामि, रथं चानेष्यामि। इत्युक्त्वा स तत्र गत्वा हवनं कर्तुमारेभे। मेघनादबधार्थं रामे प्रस्तुते विभीषणेनावरोधितः। भगवन् लक्ष्मणमाज्ञापय। यो द्वादशवर्षं निद्राहारं बिना स्त्रियं व्यतीतवान् तेन तस्य मरणं भविष्यति। लक्ष्मण: साक्षात् शेषनागः धनुषधारी अस्ति। भवन्तौ पृथ्व्याः भारनिवारणार्थं जातौ।

सर्ग-९

विभीषणवचः श्रुत्वा रामः लक्ष्मणमब्रवीत्, भो लक्ष्मण: हनुमदादि यूथपं नीत्वा रावणपुत्रं मेघनादं जहि तदा लक्ष्मण: रामाज्ञामादाय उत्तमं धनुरुत्थाय सैन्येन जाम्बवता विभीषणेन च सह मेघनादवधार्थं प्रययौ। क्रमेण सर्वे निकुम्भिलास्थानं प्रययुः। गते तत्र परस्परं द्वयोः सैन्ययोः वाणवर्षणं जातम्। एवं क्रमेण घोरयुद्धोऽभूत्। अन्ते रामं स्मृत्वा लक्ष्मणः

स्वबाणेन मेघनादस्य सशिरस्त्राणं शिरः कायात् भूतले पातयामास। हते मेघनादे प्रमुदिताः देवाः मुहुर्मुहुः स्तुवन्तश्च पुष्पवर्षाणि ववर्षुः। गतश्रमः स लक्ष्मणः रणे शङ्खमपूरयत्। तेन नादेन गतश्रमाः वानराः सँहृष्टाः। ततः हनुमद्राक्षसाम्यां सहितः लक्ष्मणः नारायणं रामं निकषा आगत्य ववन्दे रामेणोक्तं इतः परं पुत्रशोकसंतप्तो रावणः मयासह युद्धायागमिष्यति। तदाहं तं हनिष्यामि। ततः पुत्रस्य निधनं श्रुत्वा रावणः मूर्च्छितो भूमौ पतितः, पुनरुत्थाय पुत्रशोके विललाप। व्याकुलश्च सीतां हन्तुमधावत्। ततः सुपार्श्वनामकेन मन्त्रिणा मन्दोदर्या च नीतिमुपदिष्टोऽसौ परावर्तितः। ततो रावणः धर्मानुकूलवाक्यश्रवणेन शोकाकुलस्त्वरितं गृहं जगाम परेद्युश्च सुहृद्युक्तः सभां पुनर्ययौ।

सर्ग–१०

पुनः रावणः मन्त्रिभिः सह विचार्यविशिष्टराक्षसैः सह रामपार्श्वमागतः। रामः सर्वान् राक्षसान् हतवान्। स्वयं रावणोऽपि बाणाहत व्याकुलः लङ्कां गतः। ततो रावणः हतोत्साहः व्याकुलश्च त्वरितं शुक्राचार्यसमीपं वृत्तान्तं श्रावयामास। तदा शुक्राचार्येणोक्तं, त्वं मदुक्तेन मन्त्रेणैकान्ते पातालसदृशगुहायां हवनं कुरु। यदि हवने विघ्नो न चेत्तदा होमाग्निना महान्तो रथाः वाहाश्च चापतूणीरसायकाः संभविष्यन्ति। गुरूपदिष्टेन रावणः स्वगृहे तथैवाऽकरोत्। लङ्काद्वारकपाटादिकं बद्ध्वा होमारम्भं प्रचक्रमे। उत्थितं महान्तं धूममालोक्य विभीषणः रामाय निवेदयामास। अजेयोऽयं होमोऽस्ति, विघ्नं कारय। तदा हनुमानङ्गदविभीषणादयः तत्र गत्वा लङ्काद्वारकपाटादीन् खण्डयित्वा राक्षसान् हत्वा च कोलाहलं चक्रुः। ततो विभीषणोक्तमार्गेण अङ्गदादयः गुहां प्रविश्य सेवकान् हत्वा कोलाहलं चक्रुः। परन्तु रावणः विजिगीषया ध्यानं न जहौ। तदाङ्गदः अन्तःपुरे गत्वा मन्दोदर्याः केशबन्धे धृत्वा तत्रानयत् वस्त्रादिकम् अपहाय नग्नमकारयत्। अनाथवत् मन्दोदर्याः विलापेन रावणः खड्गं नीत्वोत्थितश्च। मन्दोदरी समुपदेशेन पुनः सान्त्वयामास। एवं कथयति च अहं रामं हत्वा आगमिष्यामि वा रामो मां हनिष्यति तदा त्वं सीतायाः शवं नीत्वाग्नौ प्रवेष्यसि। तदा मन्दोदरी रावणाय उपदेशं ददौ, यत् रामो न मानुषः साक्षान्नारायणः। अतः त्वं सीतां नीत्वा रामाय समर्प्य तथा राज्यं विभीषणाय दत्वा आगच्छ। त्वमहं च वने गमिष्यावः। अयि भद्रे, सर्वान् परिवारान् हत्वा कथमहं वनं गमिष्यामि। संग्रामे रामहस्तेन

मृत्वा मोक्षं प्राप्स्यामि। अहं रामं जानामि मधुसूदनं, सीतां च जानामि। अहं जानामि रामहस्तेन मरिष्यामि। तेन हतः हरेः शरणं गमिष्यामि।

सर्ग-११

इत्युक्त्वा प्रेम्णा राज्ञीं मन्दोदरीं सन्तुष्य रावणः रामेण सह योद्धुं प्रतस्थे। भयंकररूपेण लङ्कातः निःसरितः। आगते रावणे हनुमता सह परस्परमुष्टिका-युद्धेन द्वावपिर्मूच्छितौ। ततः रामोपरि वाणान् ववर्ष। रामं विरथं दृष्ट्वा इन्द्रः मातलिमाहूय रामविजयाय तत्र खड्गादिकं च प्रेषितवान् तदा द्वयोः भयंकरः युद्धोऽभवत् तत इन्द्रास्त्रवाणेन रावणस्य शिरांसि चिच्छेद। परन्तु रावणोन मृतस्तेन रामोऽचिन्तयत्। सचिन्तितं रामं दृष्ट्वा विभोषणोऽवदत्। ब्रह्मवरेणास्य नाभिकुण्डेऽमृतमस्ति। अतस्तस्य शोषणायाग्नेस्त्रास्य प्रयोगो विधेयस्तदा मृत्युर्भविष्यति। ततः इन्द्रदत्त-ब्रह्मास्त्र-वाणेन रावणशिरांसि भुजाश्च छिन्ना जाताः। प्राणरहितो रावणः भूमौ पतितः। वानराश्च सुप्रसन्ना जाताः। रावणदेहात् सूर्यसदृशः प्रकाशः श्रीरामे प्रविष्टः। सर्वे देवगणाः विस्मिताः जाताः। तान् दृष्ट्वा नारदः रामचिन्तनस्य महिमानं वर्णितवान्। दुराचारी पापिष्ठोऽपि राममेवाचिन्तयन् मोक्षमवाप। तेन रावणः परंपदं प्राप्तवान्।

(अत्र रावणोक्त राममहिमावर्णनं श्रेयस्करं प्रेयस्करं च)

सर्ग-१२

ततः रामेण विभीषण-हनुमद्-अङ्गद-लक्ष्मण-सुग्रीव-जाम्ववतः तथान्यान् वानरान् परितुष्टेन मनसा कथितं, यत् भवतां वाहुवीर्येण मया रावणो हतः। यावच्चन्द्रदिवाकरौ भवतां कीर्त्तिः स्थास्यति। एवं मयोपेतां त्रैलोक्यपावनीम् कथां कीर्तयिष्यन्ति ये ते परमांगतिं प्राप्स्यन्ति। तस्मिन्समये रावणं भूमौ पतितं दृष्ट्वा मन्दोदर्यादयः सर्वाः स्त्रियः रावणस्याग्रे पतिताः। शोकाकुलञ्च विभीषणं दृष्ट्वा रामाज्ञया लक्ष्मणेन कथितं, यत् व्यर्थं चिन्तया। अधुनास्यौर्ध्वदैहिकं संस्कारं कुरु। एवं बहुविधज्ञानोपदेशं विभीषणाय ददौ। ततो लक्ष्मणस्य यथार्थं वचः श्रुत्वा विभीषणः शोकमोहं त्यक्तौर्ध्वदैहिकसंस्कारं च शास्त्रविधिनाऽकरोत्। शेषान् सर्वान् प्रबोध्य लङ्कां प्रेषितवान्। अथ मातलिः रामं परिक्रम्याज्ञां नीत्वा स्वर्गं गतवान्। ततो रामाज्ञया लक्ष्मणः विभीषणं नीत्वा लङ्कां गत्वा विभीषणस्य यथाविधि राज्याभिषेकं कारितवान्। ततो हनुमन्तमज्ञापयत्। त्वं विभीषणस्याज्ञां प्राप्य लङ्कां प्रविश्य सम्पूर्णसमाचारं सीतां श्रावय। तथैव हनुमान्

सर्वं समाचारं सीतां श्रावयित्वा आगत्य च सीतायाश्चापि समाचारं रामं श्रावितवान्। तदा भगवान् रामः मायासीतात्यागाय, तथाग्निस्थितां-सीतां ग्रहणाय विभीषणमुक्तवान्। विभीषण, त्वं गच्छ सीतां स्नानं कार-यित्वा निर्मल-वस्त्रं संभूष्य च मम समीपमानय। ततो विभीषणः राक्ष-सिभिः सुवृद्धाभिः हनुमता च सह शिविकोत्तमे आरोप्यानयति। ततो दूरत एव सीतां शिविकारूढां दृष्ट्वा कथितं यत् मम सन्निधौ पादचारेणायातु तथैव सीता याता। रामसंकेतमवाप्य लक्ष्मणेन लोकविश्वासार्थमग्निप्रवे-शार्थं काष्ठमेकीकृत्य सीतामग्निप्रवेशाय कथितं, सीतापि यथा मे हृदयं नित्यं नापसर्पति राघवात्, तथा लोकस्य साक्षी मां सर्वतः पातु पावकः, इति कथयित्वा अग्नौ प्रविष्टा। तस्मिन् सर्वे सिद्धगणाः चकिताः।

सर्ग-१३

तस्मिन्समये इन्द्रादयः सर्वे देवा आगत्य श्रीरामं प्रणम्य स्तुतिं चक्रुः। ब्रह्मापि स्तुतिं चकार। ततोऽग्निदेवो ब्रह्मणः स्तुतिं श्रुत्वा प्रकटीभूय सीता-मङ्के निधायोवाच। हे राम, तपोवने मय्यर्पितां जानकीं गृहाण। रावण-वधार्थं मया मायामयीं जनकात्मजां विधाय पृथिव्याः भारः निराकृतः। सा प्रतिबिम्बरूपिणी मायातिरोहिता कार्यं संसाधितवती। तत इन्द्रोऽपि बहु-विधं स्तुतिं चकार! तदनन्तरं भवानीशङ्करः विमानस्थो नभस्थले रामं कथितवान् यदहं भवतो राज्याभिषेकं द्रष्टुमयोध्यामागमिष्यामि। अधुना सदेहं पितरं दशरथं पश्य। ततः रामलक्ष्मणौ प्रसन्नो भूत्वा दशरथं नना-मतुः। तदा दशरथः राममालिङ्ग्य मूर्धानमाघ्राय अब्रूवीत्। वत्स, त्वया संसारोऽयं दुःखसागरात्तारितः। इत्युक्त्वा पुनरालिङ्ग्य रामेणपूजितः तिरोबभूव। ततो रामाज्ञया सर्वान् वानरान् यथेच्छं वस्त्रादिभिः संतोष्या-भिनन्द्य च विससर्ज। ततो रामः सीतामङ्के निधाय विभीषणानीतपुष्पक-विमानमारूह्य सलक्ष्मणः वानरान् यथास्थानं गन्तुं प्रेरयत् तथा विभीषणं लङ्कां स्थातुमकथयत्। अहं पितुः राजधानीमयोध्यां गन्तुमिच्छामि। एवं कथिते रामे सर्वे ऊचुः यद्वयमपि भवतां राज्याभिषेकं द्रष्टुं गच्छामः, आदि-शतु। रामस्य तथास्तु कथनानन्तरं तेष्वारूढेषु सर्वेषु कौवेरं विमानं राघ-वेणाभ्यनुज्ञातं विहायसा उत्पपात। तत् कुबेरयानं च सीतासमेतेन सहानु-जेन नितरां शोभां प्रपेदे।

सर्ग-१४

ततो गगनमार्गे त्रिकूटस्थ लङ्कां तत्र राक्षसानां संहारस्थानं मृतरावण-

पतितस्थानं कुम्भकर्ण-इन्द्रजित्-प्रभृतिराक्षसमृतस्थानं समुद्रसेतुं रामेश्वरं किष्किन्धाऋष्यमूकादि स्थानानि दर्शयन् चतुर्दशबर्षसमाप्ते भरद्वाजाश्रमं दृष्ट्वा सानुजः भरद्वाजं ववन्दे। तेन भरतादिकस्य कुशलं ज्ञातम्। ततो भरद्वाज-स्तुतिं श्रुत्वा मुनिनाग्रहेण तत्र विरामं चकार। तस्मिन् काले अयोध्यायाः गुहस्य कुशलज्ञानार्थं हनुमन्तं प्रेषयामास। हनूमान् सर्ववृत्तान्त मकथमत्। भरतः रामस्य सर्ववनवृत्तान्तमागमनस्य च समाचारं श्रुत्वा शत्रुघ्नेनायोध्यामलंकृतवान् ततो रामे गतेऽयोध्यायां भरतमालिङ्ग्य मातॄन् ननाम। ततः पुष्पकविमानं कुबेरस्यानुसरणार्थं प्रेषितम्।

सर्ग–१५

ततो विनम्रो भरतः ब्रूते। भो तात, भवता मह्यम् राज्यं दत्तमासीत्तत्तुभ्यं समर्पयामि। तद्राज्यं रामचन्द्रः स्वीकारोतिस्म। ततो विभीषणाङ्गदहनुमत्सुग्रीवादयः क्रमशः स्नानादिकक्रियां समाप्य सर्वप्रकारभूषणादिना सुसज्जिता सुबाद्येन सह सर्वे अयोध्याराजभवनं गत्वा रामं कौशल्यादिसर्वान् मातॄन् ननाम। ततः रामाज्ञया भरतः तीर्थजलमानीतम्। ततो वशिष्ठः सीतया सहितं रामचन्द्रं सिंहासनारूढं कारितवान्। तदनन्तरं वशिष्ठ-वामदेव-जावालि-गौतम-वाल्मीक्यादयः, कुश-तुलसी-जलादिना रामचन्द्रस्याभिषेकमकुर्वन्। आकाशस्थितदेवाः गन्धर्वाश्च स्तुतिं कुर्वन्तः सर्वौषधिरसैः अभिषेकमकुर्वन्, आकाशात्पुष्पाणि चापातयन्। ततः ससीतं-रामं सिंहासनारूढं दृष्ट्वा उमासहितः शंकरः रामचन्द्रस्य स्तुतिं चकार। तदनन्तरमिन्द्रदेव-पितर-यक्ष - गन्धर्वाश्च सर्वे कृतकृत्याः भूत्वा स्तुतिं चक्रुः। काले तस्मिन् रामः सीता-लक्ष्मण-हनुमदादयः मुनिजनवानरैरावेष्टिताः सुशोभिरे।

सर्ग १६

रामराज्याभिषिक्ते धराधनधान्यपरिपूर्णा, गन्धहीनानि पुष्पाणि गन्धवन्ति जातानि। रामः सहस्रशतमश्वानां धेनूनां तथा गवां शतवृषान् त्रिंशत्कोटि सुवर्णं च द्विजेभ्यो ददौ। सर्वंरत्नमयं स्रजं सुग्रीवायाङ्गदाय च द्वेऽङ्गदे ददौ। चन्द्रकोटिप्रकाशं मणिरत्नविभूषितं हारं प्रीत्या सीतायै प्रददौ। सीतात्मनः कण्ठात् हारमवमुच्य रामं वानरान् अवैक्षत। रामः सीतासंकेतमवगम्योक्तवान्। हे वैदेहि यस्यै तुष्टासि तस्मै देहि। तदा सीता तद्धारं हनूमते ददौ। तेन हारेण शुशुभे। रामोऽपि कृताञ्जलिमुपस्थितं हनुमन्तं दृष्ट्वा परमया भक्त्या तुष्टः ब्रूते। ते प्रसन्नोऽस्मि परं यद् भुवनत्रये देवैरपि

दुर्लभं तद् दास्यामि। ततो हनूमान् प्राह, त्वन्नामस्मरतो मम मनः न तृप्यति। अतस्त्वन्नाम सततं स्मरन् भूतले स्थास्यामि। संसारे यावत् त्वन्नाम तावत् मम कलेवरं तिष्ठतु। रामस्तथेति उक्त्वा मुक्तस्तिष्ठ यथासुखम्। कल्पान्ते मम सायुज्यं प्राप्स्यसि नात्र संशयः तथा सीतापि प्राह स्थितं त्वां ममाज्ञया सर्वे भोगा अनुयास्यन्ति। ततः वारम्वारं प्रणम्य हनूमान् तपस्तप्तुं हिमवन्तं ययौ। ततो गुहं प्रांजलिस्थितं श्रृङ्गवेरपुरं गच्छ, अन्ते ममैव सारूप्यं त्वं प्राप्स्यसि इति कथयित्वा दिव्याभूषणानि च ददौ।

ततो विभीषणसुग्रीवादीनां च यथोचितसत्कारं कृत्वा प्रेषयामास। अयाचितं युवराजपदं लक्ष्मणाय ददौ। रामः अश्वमेधादियज्ञमकरोत्। रामराज्ये न कोपि विघ्नमासीत्। वृद्धोपस्थिते वालानां मृत्युर्न भवतिस्म। सर्वधर्मपरायणः रामः दसवर्षसहस्राणि राज्यमुपास्त। शम्भुना भाषितमिदं रामायणं रहस्यं च दीर्घायुरारोग्यकरं सुपुण्यदं वर्तते। पठनेन श्रवणेन च सर्वाणि फलानि प्राप्स्यन्ति। तेषु रामः प्रसीदति। यतः शङ्करःवेदराशिमालोड्य राम-तारक-मन्त्रं निष्काष्य श्रीरामस्य निगूढ-तत्वं प्रियायै पार्वत्यै प्राह।

(अत्रत्य शंकरोक्तं निगूढतत्वं महत्वपूर्णम्)
यथा—(युद्धकाण्डे १६ सर्गः—४९ श्लोकः)

उत्तरकाण्डम्

सर्ग—१

पार्वती उवाच, भो स्वामिन् महापराक्रमी रामः रावणादीन् हत्वा राज्याभिषिक्तान्तः मायामानुषरूपेण कतिवर्षं राज्यमकरोत्तथा केन प्रकारेण मर्त्यलोकं त्यक्तवान् सविस्तरेण श्रावय। भगवान् शङ्करो ब्रूते हे पार्वति, रामे राज्याभिषिक्ते विश्वामित्रासित-कण्व-दुर्वासा-भृगु-अङ्गिरा कश्यप-वामदेवात्रिणा सह सप्तर्षयः समागताः। सह शिष्येणागस्त्योऽपि समागतः। अगस्त्यो रामद्वारे समागत्य द्वारपालेनाकथयत् यत् आशीर्वादाभिवादनार्थमगस्त्यप्रमुखाः ऋषयो वहिःस्थिता सन्ति। द्वारपालसूचनानन्तरं रामोऽवदत्, यथासुखं प्रवेशय। तदा रामः तेषां विधिवत् स्वागतानन्तरं शुभासनानि दत्तवान्। कुशलप्रश्नानन्तरं मुनिभिरुक्तं रावणस्य हननं सुगमंमासीत् परन्तु तत्पुत्रस्य वधस्तु कठिनमस्ति। पूर्वमेव त्वयास्मभ्यम् दानं दत्तम्। इदानीं राक्षसान् हत्वा किं कृतकृत्योऽसि? ततो रामः विस्मितो भूत्वा ब्रूते, कुम्भकर्णादीन् राक्षसान् रावणादीनतिक्रम्य मेघनादं किं प्रशंसन्ति? तदागस्त्येनोक्तं, शृणु रावणस्य-तत्पुत्रस्य जन्मकर्मवरदानादि संवृत्तम्। पुरा कृतयुगे ब्रह्मणः सुतः पुलस्त्यः तपस्तप्तुं सुमेरु पर्वते गतः। तत्र तृणविन्द्राश्रमे स्वाध्याये तत्परे गन्धर्ववालिका गायन्त्यो हसन्त्यो वादयन्त्यश्च पुलस्त्यतपो विघ्नं चक्रुः। ततः क्रुद्धो मुनिः वचो व्याजहार यत् या मे दृष्टिपथं गच्छेत्सा गर्भं धारयिष्यति। शापसंविग्ना तं देशं च प्रचक्रमुः परन्तु राजर्षेस्तृणविन्दोः कन्या न तद्वचोऽश्रृणोत्। तदा मुनेरग्रे तं प्रपश्यन्ती निर्भया विचचार। तेन सा मुनेर्दृष्टिपथे पाण्डुरतनुरन्तः शरीरजा वभूव। सा भीता पितरमन्वगात्। तृणविन्दुश्च ध्यात्वा ज्ञातं यत् मुनिकृतमस्ति। ततस्तां कन्यां मुनि-वर्णाय पुलस्त्याय पिता ददौ। मुनिरपि स्वीकृत्य सुश्रूषणपरां दृष्ट्वा ब्रवीति, ते उभयोर्वंशवर्धकमेकं पुत्रं दास्यामि। ततः पुलस्त्यात् विश्रुतमेकं पुत्रं प्रासूताऽसौ ब्रह्मविद्विख्यातः 'विश्रवा' इति जातः। तस्य शीलस्वभावं दृष्ट्वा भरद्वाजः सुप्रसन्नः स्वपुत्र्या सह विवाहमकरोत् तस्याः पितृसदृशः विख्यातः एकः पुत्रः कुबेरो जातः। ततः सुप्रसन्नो ब्रह्मा तपोवलं दृष्ट्वा धनेश्वरतादायकमेकं पुष्पकविमानं ददौ। ततः पितुः विश्रवसः आज्ञया राक्षसवासार्थनिर्मित—

विश्वकर्मण: लङ्कापुरीं स्थातुं गत:। तत्र पितुराज्ञया कुबेरो बहुकालमवसत्।

ततः सुमाली नामा राक्षसः भ्रमन् रसातलान्मर्त्यलोके स्वपुत्रीं केकसीम् अकथयत्। यत्त्वं स्वयमेव विश्रवसं वरय। तदा तव पुत्राः धनदेनसमाः भविष्यन्ति। इति श्रुत्वा सा केकसी मुनीश्वरविश्रवसस्याग्रे उपस्थिता। तथा ध्यानभंगानन्तरं तामपृच्छत्। कस्य कन्यासि त्वम्, किमिच्छसि। तदाध्यानेन मुनिवरः सर्वज्ञानं प्राप्य त्वं पुत्रानभीप्स्यसि ? त्वं दारुणायां वेलायामागतासि तेन दारुणौ राक्षसौ द्वौ पुत्रौ सम्भविष्यतः। साऽब्रवीत्, त्वत्तोप्येवं विधौ पुत्रौ। तामाह पश्चिमः महामतिः महाभागवतः भक्त्यैकपरायणः एकः पुत्रः भविष्यति। ततः सा तथाकाले दशकन्धरं विंशतिभुजं दशशीर्षं रावणं सुषुवे। जातमात्रेणाऽसौ वसुन्धरां चचाल। ततः कुम्भकर्णः महापर्वतसन्निभः ततः रावणसोदरी शूर्पनखा जाता। ततः शान्तात्मा विभीषणो जातः भगवद्भक्तपरायणः। एवं राक्षसाणामुत्पत्तिर्वाता।

एवं कथिते अगस्त्ये रामः प्रहसन् बभाषे। हे मुनिवर, सम्पूर्ण संसारः मायमयोऽस्ति, मत्तः पृथक्किमपि नास्ति, त्वं मम नाम-कीर्तनं जगति पापहरं निबोधय।

सर्ग-२

रामस्य वचनं श्रुत्वानन्दनिमग्नः सभायां पुनर्जगाद। अथैकदा कुबेरः पुष्पकविमानमारुह्य पितुर्दर्शनार्थमुपजगाम। राक्षसीकेकसीं सापत्न्यपुत्रं कुबेरं दृष्ट्वा हर्षेण स्वपुत्रं रावणमाह त्वमपि कुबेरेण समं भव। तदा रावणोऽपि रोषेण प्रतिज्ञामकरोत्। मातः मा शुच अहं कुबेरेण समो वा अधिकोऽचिरेण भविष्यामि। एवमुक्त्वा सहानुजो रावणः दुष्करं तपः कर्त्तुं गोकर्णक्षेत्रे गतः। तेषु कुम्भकर्णः दशसहस्रवर्षाणि, विभीषणः पञ्चसहस्रवर्षाणि, पादेनैकेनतस्थितवान्। दशाननः निराहारः दिव्यं वर्षसहस्रं पूर्णे वर्षसहस्रे स शीर्षमग्नौ जुहाव। एवं नववर्षसहस्राणि तस्यातिचक्रमुः। दशमे वर्षसहस्रे तु दशमं शिरः छेत्तुकामस्य धर्मात्मा प्रजापतिः संप्राप्तः। ब्रह्मा ब्रूते, वत्स दशग्रीव अहं प्रसन्नोऽस्मि। तव कांक्षितं वरं दास्यामि।- तच्छ्रुत्वा दशग्रीवः ब्रूते यदि वरदोऽसि, तदामरत्वं वरं वृणोमि। सुवर्णनागयक्षाणां देवानां तथा सुरैः अवध्यत्वं मे देहि मानुषास्तु तृणभूताः। पुनः प्रजापतिः तथास्तु इति आह। तथा च

हेरावण तेऽग्नौ हुतानि यानि शीर्षाणि याथापूर्वमक्षयाणि ते भविष्यन्ति। विभीषणोऽपि प्रजापतिं नत्वा ब्रूते, हे देव मम बुद्धिः सर्वदा धर्मे तिष्ठतु अधर्मे मम बुद्धिः मा गाः। तदा ब्रह्मा ब्रूते, हे विभीषण त्वं धर्मशीलोऽसि, तथैव भविष्यसि, परन्तु अफलितोऽपि तवामरत्वं दास्यामि। कुम्भकर्णः ब्रूते, हे ब्रह्मन् स्वप्स्यामि षण्मासं च दिनमेकं तु भोजनमिति देहि। तदा तथास्तु इति ब्रह्मा जगाद ततः कुम्भकर्णो विघूर्णितनेत्रः सुष्वाप। ततो रावणः ब्राह्मणान्, ऋषिमुखान् देवदानवकिन्नरान् समहोरगान् च हत्वा राज्यं चकार। अत्याचारनिवारिते कुबेरे क्रुद्धो रावणः तत्पुरमाक्रम्य पुष्पकविमानमपि अपहृत्य यमवरूणावपि विजितस्ततो इन्द्र वधार्थं स्वर्गलोकमगातेन युद्धेनेन्द्रः रावणं बबन्ध। समाचारं श्रुत्वा मेघनादः इन्द्रं बध्वा पितरं च मोचयित्वा गृहीत्वेन्द्रं लङ्कामागतः। ततो ब्रह्मा देवेन्द्रं मोचयामास, मेघनादाय बहून् वरान् च दत्वा स्वभवनं ययौ। विजयी रावणः सर्वान् लोकान् विजित्य क्रमेण परिधोपायैः बाहुभिः कैलाशं तोलयामास। तत्र नन्दीश्वरः शापं दत्तवान् यत् वानरैर्मानुषैश्च तव नाशो भवतु। शापमुपेक्ष्य शीघ्रं सहस्रार्जुन राजधान्यां गतः। तत्र तेन बद्धो रावणः पुलस्त्येन मोचितः। पुनर्वालिनं हन्तुमुद्यतः। बालिना दशकन्धरः स्व कक्षे धृतश्च। चतुरः समुद्रान् भ्रामयित्वा विसर्जयामास। ततोऽसौ तेन सख्यं चकार। भो राम, एवं क्रमेण सरावणः लोकान् स्ववशे कृत्वा वुभुजे। एवम्प्रभावः रावणः इन्द्रजित् त्वया विनिहतः। एवं ब्रुवन् अगस्त्यः श्रीरामस्य महिमानं वर्णयामास।

सर्ग-३

ततो रामजिज्ञासयागस्त्यः बालि-सुग्रीवयोः जन्मवृत्तं कथयति। मेरूपर्वते शतयोजनविस्तीर्णं सभास्थितब्रह्मणः नेत्राभ्यां पतितानन्दाश्रु स्वहस्ते नीत्वा चिन्तयन् भूमावत्यजत्। पतिते भूमौ वानरः एकः उत्पन्नः। तं ब्रह्मा ब्रूते त्वं मम समीपे किञ्चित्कालमत्र तिष्ठ, तव कल्याणं भविष्यति। कियत्कालान्तरमसौ ऋक्षराजः फलमूलाय भ्रमन् एकां वापीं दृष्टवान्। तत्र जले छायां दृष्ट्वा जलान्तरे निपपात। तत्र दृष्ट्वा हरिं शीघ्रं पुनरुत्प्लुत्य वानरः एकां सुन्दरीमपश्यद्विस्मयं ययौ। ततः देवेशः चतुर्मुखं पूजयित्वा मध्याह्नसमये गच्छन् मनोरमां नारीं दृष्ट्वा कामवाणविद्धः उत्तमवीर्यं त्यक्तवान्। तामप्राप्यैवं तद्बीजं बालदेशेऽपतद् भुवि। तदा शक्रतुल्यः पराक्रमस्तत्र बाली समभवत्। तदेन्द्रः स्वर्णमालां दत्वा दिवं गतः। सूर्योऽपि

तत्रागतः कामवशो भूत्वा ग्रीवादेशे महद्वीजमत्यजत् सद्यः ततः तस्याः महाकायो हरिरभवत् ततः। सूर्यः सहायार्थं हनूमन्तं दत्वा गतः। सा स्त्री पुत्रद्वयं नीत्वा कुत्रापि गता। प्रभातेऽन्यस्मिन् दिने आत्मानं वानराकृतिमपश्यत्। पुनः स ऋक्षराजः फलमूलादिना सह पुत्रद्वयं नीत्वा ब्रह्मणः सभामुपस्थितः। ततो ब्रह्मा तं संबोध्य दूतेन सह विश्वकर्मानिर्मितां किष्किन्धानगरीं प्रेषितः। तस्य राज्याभिषेकमपि कारयित्वा तत्स्थानं ददौ। सप्तद्वीपान्तरस्य वानराः तवाधीनाः स्थास्यन्ति। यदा साक्षान्नारायणः भूभारहरणार्थमागमिष्यति तदा साहाय्यं करिष्यसि। हे राम, सैव किष्किन्धानगरी अस्ति। चरित्रं ये श्रृण्वन्ति ते पापात् उद्धरिस्यन्ति।

हेराम, त्वदाश्रितामेकां कथामन्यां संप्रवक्ष्यामि श्रृणु येन कारणेन सीता हृता। पुराकृतयुगे प्रजापतिसुतं सनत्कुमारं रावणः विनयावनतः प्रश्नंकृतः। देवानां कः वलवान् केन सहाय्येन देवाः शत्रून् जयन्ति। द्विजाः योगिनश्च नित्यं कं ध्यायन्ति। तदा सनत्कुमारः हृदिस्थंभावमवगम्याकथयत्। अनेकविधज्ञानेन भवतः महिम्नः वर्णनमकरोत्। तं सर्वे ध्यानं कुर्वन्ति। पूर्वजन्मार्जितपापानुसारेण जायते म्रियते च। सनत्कुमार मुखोद्गीतं श्रुत्वा रावणः प्रसन्नो भूत्वा अचिन्तयत्। अहं हरिणा सह योत्स्ये। तदा सनत्कुमारो ब्रूते तवेच्छा अवश्यं पूरयिस्यति, किञ्चितकालं प्रतीक्षस्व। पुनः भवतः पराक्रमस्य च वर्णनंमकारि। अतएव रावणः शोचयित्वा त्वया सह विरोधः कृतः जानकीं जहार च। इमां कथां यः पठति श्रृणोति वा स सर्व प्राप्स्यत्येव।

सर्ग— ४

अथैकदा रावणः लङ्कामायान्तं नारदं नत्वा पप्रच्छ। त्वं जगत्त्रयं ज्ञातासि अहं बलवद्भिर्योद्धुमिच्छामि, के महावलाः सन्तीति ब्रूहि। शोचयित्वा मुनीश्वरेणोक्तं श्वेतद्वीपे विष्णुपूजारताः विष्णुना निहताश्च संजाता सोऽजेयाः सन्ति वलवन्तश्च अतस्तत्रैव गच्छ। एवं श्रुत्वा रावणः मन्त्रिभिः सह पुष्पकमारुह्य योद्धुकामः श्वेतद्वीपसमीपतः तत्प्रभाहततेजस्कं पुष्पकमग्रे नाचलत्। तदा रावणः मंत्रिणं विमानञ्च त्यक्त्वा स्वयमेव प्रययौ। श्वेतद्वीपप्रविशन्नेव योषिताहस्तेन धृता पृष्टश्च त्वं कुतः कोऽसि वा केन प्रेषितः, वद। एवं बहुभिः स्त्रीभिर्हसन्तीभिः लीलया पुनः पुनः इत्युक्तवान्। तासां स्त्रीणां हस्तात्काठिन्येन रावणः निर्मुक्तः। ततः आश्चर्यं लब्ध्वाऽसौ रावणः चिन्तयामास। यत् विष्णुना निहतः वैकुण्ठं यामि इति

निश्चितः। यथा मयि विष्णुः कुप्येत्तथा कार्यमवश्यं करोमि। इति निश्चित्य रावणः विपिने जानकीं जहार परमात्मानं रामं जानन्नेवावनिसुतां जहार। हेराम, त्वत्तः स्वकं वधं कांक्षन् मातृवत्पालयामास। एवं कथयित्वा स्तुत्वा च अगस्त्यः मुनिभिः सह स्वस्थानं प्रहृष्टमानसः ययौ। ततो रामः हनुमत्प्रमुखैः सेवितः राज्यं कुर्वन्निासीत्।

रामे शासति सर्वे धर्मपराग्रणाः आसन्। अमानुषाणि कर्माणि च बहुशः चकार। अथैकदा ब्राह्मणस्य सुतं बालमकालतः मृतं दृष्ट्वा च शोचन्तं ब्राह्मणं ज्ञात्वा रामः वने तपस्यन्तं शूद्रं कारणं मत्वा तच्छूद्रं हत्वा ब्राह्मणबालकं जीवयामास। लोकानामुपदेशार्थं शूद्रग्य स्वर्ग ददौ। कोटिशः शिवलिङ्गानि च स्थापयामास। एवं क्रमेण मानुषविग्रहः दशवर्षसहस्राणि राज्यं चकार।

सीता कथयति अथैकदा सर्वे देवाः समागत्य वैकुण्ठागमनवृत्तान्तं श्रावयन्ति। च रामः वैकुण्ठं त्यक्त्वा त्वं भूतले तिष्ठसि। हे मातः अग्रतस्त्वं वैकुण्ठं याहि पश्चाद्रामोऽपि गमिष्यति, अस्मान् सनाथं करिष्यति। इति विज्ञापितौ मया यद्युक्तं तत्कुरुष्व। सीतायास्तद्वचः श्रुत्वा क्षणं ध्यात्वा अब्रवीत्। अहं सकलं जानामि तत्रोपायं वदामि। हे देवि त्वदाश्रयं लोकवादं मिषं कल्पयित्वा लोकापवादभीतः त्वां वने त्यजामि। तत्र वाल्मीकेराश्रमान्तिके द्वौ कुमारौ तव भविष्यतः। इदानीं गर्भः दृश्यते। पुनर्ममान्तिकमागत्य लोकानां प्रत्ययार्थं त्वं आदरात्शपथं कृत्वा भूमेर्विवरमात्रेण शीघ्रं वैकुण्ठं यास्यसि, पश्चादहमपि यास्याम्येषः एव सुनिश्चयः। एवमुक्त्वा रामः मन्त्रिभिः संवृतश्चासीत्। ततौ हास्य-कथाप्रसंगानन्तरं रामःविजयनामकं दूतं पप्रच्छ। भो सीतां वा मातरं वा भ्रातृन् वा कैकेयीं पौराः जनपदाः मम शुभाशुभं किं वदन्ति। त्वया न भेतव्यं मम शपथोऽस्ति, सत्यं सत्यं ब्रूहि।

एवं कथिते रामे विजयो ब्रूते सर्वं दुष्करं कृतं रामेण, परन्तु रामः रावणं हत्वा सीतामाहृत्य च अमर्षं पृष्ठतः कृत्वा स्ववेश्म प्रत्यपादयत्। तत् सीतासंभोगजं सुखम् कीदृशम्? या विजनेऽरण्ये दुरात्मना रावणेन हृता। अस्माकमपि योषितं दुष्कर्म मर्षणं भवेत् यतो यादृशः राजा भवति तादृशा एव प्रजाः भवन्ति। एवं श्रुत्वा रामं स्वजनान्पर्यपृच्छत्। तेऽपि तथैवाब्रुवन्। ततः सचिवान् विसृज्य लक्ष्मणेन सीतां वाल्मीकेराश्रमान्तिके प्रेषितवान्। लक्ष्मणोऽपि पुनरागत्य रामसमीपमुपागतः। वाल्मीकिरपि

ध्यानेन सर्वं ज्ञात्वा सीतां स्वाश्रमे पूजयित्वा ररक्ष। इतः रामोऽपि अखिलान्योगान् विसृज्य मुनिव्रतेऽतिष्ठत्।

सर्ग ५

इतः श्रीरामः संसारमङ्गलार्थं दिव्यमङ्गलदेहेन रामायणरूपमत्युत्तमकीर्तेः स्थापनं कृत्वा राजर्षिवज्जीवनं यापयामास। तथैकदा पृष्टे लक्ष्मणे रामः लक्ष्मणाय तत्वज्ञानोपदेशात्मक ६२ श्लोकात्मकं वेदान्तसारं ददौ। वेदान्त-वेद्यचरणेन मयैव गीतं यः श्रद्धया गुरूभक्तियुक्तः परिपठेद्यदि मद्वचनेषु भक्तिर्भवेत्तदामद्रूपमेति।

सर्ग-६

अथैकदा यमुनातटे भृगुपुत्रच्यवनादयः मुनीश्वराः भगवतो रामस्य दर्शनार्थमेवं अभयदानलाभार्थं समागताः। तदा रामः भक्तिभावेन तेषामागमनकारणं पप्रच्छ च कथितं च यथादेशो भविष्यति तथा सेवां करिष्यामि। रामस्य वचनं श्रुत्वा च्यवनोऽब्रवीत्। पुरा सत्ययुगे मधुनामकः देव-ब्राह्मण-भक्तः महादैत्यश्चासीत्। तस्मिन् सन्तुष्टे शङ्करः अत्युत्तमं त्रिशूलं ददौ च कथितं च यत् येषु प्रहारं करिष्यसि ते भस्मीभूता भविष्यन्ति। श्रूयते च रावणस्यानुजा कुम्भीनसी तस्य भार्यासीत्। तस्या महापराक्रमी दुष्टचित्तः देवब्राह्मण-दुःखदायीराक्षसः लवणः उत्पन्नः। तस्मात्पीडिताः वयमत्र समागताः। इति श्रुत्वा रामेणोक्तं गच्छन्तु विगतज्वराः, लवणं नाशयिष्यामि। इत्युक्त्वा रामोऽपि भ्रातॄनाहूय को वा हनिष्यसि इति पृष्टवान्। परस्परं सर्वे तस्य मारणे उद्यता बभूवुः। अन्ते शत्रूघ्न वचनं श्रुत्वाङ्के निधाय प्राह। अत्रैव तेऽभिषेकं करोमि। अनिच्छन्नपि अभिषेकं कारयामास, तस्मै दिव्यं शरं च दत्वा शत्रुघ्नमब्रवीत्। बाणेनानेन लोककण्टकं लवणं जहि। स शङ्करदत्तशूलं गेहे संपूज्य भक्षणार्थं नानाजन्तूनां वधाय च सदनं नायाति यदा वनचरो भवेत्तावदेव त्वं धृतकार्मुकः पुरद्वारि तिष्ठ। आगते क्रुद्धस्तदा योत्स्यते तदा त्वया वद्धो भविष्यति। तं लवणं हत्वा तद्वनं मधुसंज्ञिनं नगरं निवेश्य ममानुशासनात्त्वं तत्र तिष्ठ। ततो रक्षार्थं सैन्यादिकं प्रेषयिष्यामि। इत्युक्त्वा रामः शत्रुघ्नं प्रेषितवान्। शत्रुघ्नेनापि तथा कृतम्। लवणासुरं हत्वा मधुरापुरी राज्यमकरोत्।

मध्येऽस्मिन् सीतापि वाल्मीकेराश्रमे यमलौ कुशलवौ द्वौ पुत्रौ सुषुवे। क्रमेण विद्यासम्पन्नौ उपनीतौ च मुनिना बेदाध्ययन-तत्परौ जातौ। शङ्करेण

पुरा प्रोक्तं पार्वत्यै तद्रामायणं पाठयामास। सुन्दरावश्विनाविवस्वर-सम्पनौ तन्त्रीतालसमायुक्तौ गायन्तौ कुमारौ वने चेरतुः। गायन्ताविमौ सुररूपिणौ मुनयो दृष्ट्वा विस्मिता अभूवन्। इतः श्रीरामचन्द्रः स्वर्णमयीं सीतां निर्मायाश्वमेधादींश्चकार। तस्मिन्यज्ञे ऋषयः राजर्षयः ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैंश्यादयश्च समागताः। वाल्मीकिरपि तौ बालौ नीत्वा यज्ञे समागतः।

एकस्मिन् दिने वाल्मीकिमुनिं कुशः ज्ञानशास्त्रविषयप्रश्नं पप्रच्छ, तथा मुनिना पूर्णरूपेण ज्ञानशास्त्रं श्रावितम्। यत् परमार्थज्ञानेनानन्द प्राप्तये मनश्चित्तवृतो लीनं कृत्वाद्वितीयपदं प्राप्नोति।

सर्ग ७

उपदेशेन कुशः निभ्रमो जातस्तदा मुनिना कथितं यत् युवां यत्र तत्र गायन्तौ भ्रमतम्। परन्तु किञ्चिन्न गृह्णीतम्। अनयोर्गानं यत्र तत्र रामः श्रुत्वा स्वयज्ञे आहूय ऋषिमुनिं पण्डितानांमग्र्ये कुशलवाभ्यां गायनस्यादेशं ददौ। श्रुत्वा सर्वे चकिताश्च कथयन्ति परस्परं यदीमौ बालौ रामस्यैव स्वरूपेण प्रतिभाति। गायनं श्रुत्वा रामस्ताभ्यां सहस्रस्वर्णमुद्रां दातुं भरतायावोचत्तन्मुद्रानस्वीकृतौ तौ बालौ। रामः स्वचरित्रस्य गानं श्रुत्वा विस्मितो जातस्ततो रामेण शत्रुघ्नादिकमादिष्टं यत् सीतासहितौ तौ बालौ वाल्मीकिना सहात्रानीयताम्। समामध्ये सीता प्रत्ययार्थं शपथं करोतु यतः सर्वे गतकलमषां जानन्तु। वाल्मीकिनापि विश्वासितं च कथितं श्वः जनसाधारणमध्ये शपथं करिष्यति। सीतायाः शपथं श्रवणार्थं सर्वे समागताः। सीता मुनिमग्रे कृत्वाधोमुखी यज्ञशालायामुत्तराभिमुखीभूय रामादन्यं मनसापि न चिन्तये यथा तथा मे धरणी देवी विवरं दातुमर्हति। तथा शपन्त्या सीतायाः भूतलान्महदद्भुतं दिव्यं सिंहासनारूढा भूदेवी जानकीं दोर्भ्यां गृहीत्वा सिंहासनं संन्यवेशयत्। ततः सिंहासनस्थां जानकीं रसातलं प्रविशन्तीं निरन्तरा पुष्पवृष्टि सीतामवाकिरत्। मूहुर्तमात्रं सर्वे चेतनाशून्याः जाताः। ततो रामः यज्ञं समाप्य भोगादिकं त्यक्त्वा एकान्ते वसन् तिष्ठतिस्म। ततः कथितेषु मातृषु रामः मातॄन् समुपदेशं ददौ। उप-देशानन्तरं सर्वाः मातरः स्वर्गं गताः।

सर्ग ८

ततो बहुकाले गते रामदर्शनार्थं कालः समागत्य लक्ष्मणमुवाच, भो लक्ष्मण, भगवतो रामस्य दर्शनार्थंसमागतोऽहम् शीघ्रं रामं निवेदयतु।

ततो लक्ष्मणः त्वरितमेव रामपार्श्वं गत्वा तपोधनवृत्तान्तं निवेदितवान्। तदनन्तरं शीघ्रमेव आनयनार्थं कथितं तथा मुनिस्वरूपः कालः दिव्यासने समुपवेश्य कथितवान्। आवयोः प्रलापः न केनापि श्रोतव्यः न वक्तव्यश्चः। शृणुयाद्वा निरीक्षेद्वा यः स त्वया वध्यः भवेत्। इति प्रतिज्ञाय रामः लक्ष्मणमब्रवीत्। "तिष्ठतु त्वं द्वारि सौमित्रे, नायात्वत्र जनो रहः। यथागच्छति को वापि स वध्यो मे न संशयः"। ततो रामः प्राह मुनिं येन वा त्वं विसर्जितः यत्तेमनसीसितं वाक्यं तद्वदस्व। ततो मुनिनोक्तं हे राम ब्रह्मणा प्रेषितोऽहमत्रागतः। तेषां संवादोऽस्ति यत् भूमेर्भारापहरणाय रावणादीन् वधाय चात्रागतो भवान्। मानवावतारस्य भवतः सर्वं कार्यं सम्पन्नं, भवतां मनोरथश्च पूर्णः। तथा ते नृषु आयुषि भूयः भवेत्तदा ते कल्याणमिति-प्रजापतिः प्राह। यदि वैकुण्ठगमनस्येहा वर्त्तते तदा चलतु, कालमुखाद्ब्रह्मणः संवादं श्रुत्वा रामस्तत्परो जातः गन्तुम्। एवं तयोर्वार्त्ताकाले रामस्य दर्शनार्थं दुर्वासामुनिरभ्यगात्। दुर्वासा लक्ष्मणमासाद्य ब्रूते यत् शीघ्रं रामं दर्शय। आवश्यकं कार्यंमस्ति। लक्ष्मणेनोक्तं यदिदानीं रामोऽन्य कार्यासक्तः किं कार्यं वो वर्त्तते कथय अहमेवसाधयामि वा किंचित्कालं प्रतीक्ष्यताम्। लक्ष्मणस्य वचः श्रुत्वा क्रोधाभिभूतो दुर्वासा ब्रूते, यत् शीघ्रमेव रामं न दर्शयिष्यसि तदा त्वां सवंशं भस्मी करिष्यामि। एवं कथिते दुर्वाससि एकस्य कारणात् सर्वनाशात् वरं मे नाशो भवेदिति विचार्य लक्ष्मणः रामपार्श्वं गत्वा सर्वं वृत्तान्तं श्रावयामास।

लक्ष्मणवाक्यं श्रुत्वा रामः कालं व्यसर्जयत्। तथा शीघ्रमेव वर्हिर्निगत्य दुर्वाससं ददर्श। रामं दृष्ट्वा दुर्वासा ब्रूतेऽहमद्य तव गृहे भोजनमिच्छामि यतो वर्षसहस्राणामुपवाससमापनमस्ति। तदा रामः सिद्धमन्नं यथावन्मुनये समुपाहरत्। मुनिरपि तृप्तः यथा स्थानं पुनरगात्। ततो रामः लक्ष्मणं मृतवत् बुद्ध्वा मौनी स्थितः सचिन्तितः। परिस्थितिं विज्ञाय लक्ष्मणः ब्रूते, भो राम, संतापं त्यज मां शीघ्रं जहि कालस्येदृशीगतिः। त्वयि हीनप्रतिज्ञे मे नरको भवेत्। धर्मं मां त्यज। तदा रामो ब्रूते, भो लक्ष्मणः, सतां परित्यागः वा वधतुल्यः यथेष्टं गच्छ। ततो लक्ष्मणः सरयूतीरं गत्वा नवद्वारं संयम्य हृदि भगवन्तं ध्यात्वा विष्णुलोकं गतवान्।

सर्ग ९

लक्ष्मणत्यागानन्तरं श्रीरामचन्द्रः अवधराज्ये कुशाय उत्तरे च लवाय राज्यसिंहासनं दत्वा, गुरूवशिष्ठपरामर्शेन भरतशत्रुघ्नेन सह

सकलायोध्यावासिना नरवानरैः सह महाप्रयाणोपचक्रमे। केवलं विभीषणं हनूमन्तं जाम्बवन्तं च त्यक्त्वा आकाशमार्गेण सर्वे वैकुण्ठं ययुः। तस्मिन् काले सर्वे देवा गन्धर्वाः ऋषयः ब्रह्मापि उपस्थिता बभूवः। ये ये देवांशाः रामचन्द्रस्य सहायार्थं वानररूपेणावतरिता जातास्ते पुनः देवाः बभूवुः। भगवान् रामचन्द्रः विष्णुरूपो जातः। बैकुण्ठस्थिताः देवाः सनाथाः बभूवुः। सरयूजलं स्पृष्ट्वा सर्वे स्वर्गमापुः। एतावदेव पार्वत्यै रामकथावशेषः जातः। यो भक्त्या रामायणकथां पठेद्वा शृणुयात् स जन्मशतोद्भवैः पापैः प्रमुच्यते। अध्यात्मरामायणं नित्यं पठन् शृवन् गायन् च सीतारामयोः प्रियपात्रतामाप्नोति।

पार्वत्यै परमेश्वरेण गदितेह्याध्यात्मरामाणये
काण्डैः सप्तभिरन्वितेऽतिशुभदे सर्गाश्चतुःषष्टिकाः।
श्लोकानां तु शतद्वयेन सहितान्युक्तानि चत्वारि वै
साहस्राणि समाप्तितः श्रुतिशतान्युक्तानि तत्त्वार्थतः॥

(अध्यात्मरामायणे ६४ सर्गाश्च ४२०० श्लोकाः सन्ति।)

•

भारतीयवाङ्मयेषु रामकथा-वर्णनम्

प्रथमं खण्डम्

(५)

बाल-रामायणम्

"बालरामायणम्"

पुरोवाक्

कविशेखरेण राजशेखरेण निर्मितमिदं वालरामायणं रूपकं नाटकम्। नवमशताब्द्यां विरचितमिदं रामायणं राजशेखरस्य विशालवैंदुष्येण रूपकतां विहाय श्रव्यकाव्यात्मकतामेव विभर्ति।

यद्यपि नाटकेऽभिनेयता प्रमुखा। पाश्चात्यालोचकैः चार्ल्सल्योव प्रभृतिभिः प्रतिपादितं यत् नाटकस्याभिनेयत्वं मुख्यं किन्तु विशिष्टनाटके- ऽभिनेयताया एव प्राधान्यं नापेक्षितम्। प्रख्यातसमालोचकेन 'अरस्तू' महोदयेन कथितं यत् महाकाव्य-खण्डकाव्य-दूतकाव्यादि सदृशमेव विशिष्टं नाटकं पठनेनापि तथैव रसमुद्भावयति तादात्म्यतां च सम्पादयति।

फलतः रामायणमिदं नाटकं सदपि महाकाव्यरूपतां धत्ते वर्णननैपुण्येन, अभिनवकथानकेन, समग्ररसपरिपाकेन च।

संस्कृतवाङ्मये प्रायः रामकथात्मकमिदं काव्यमन्तिमम्। प्रायः एतत् समकालीनमेव दिङ्नागाचार्यस्य करुणरसपरिपाकेन कुन्दनभूतं 'कुम्माला- नाटकम्'। तदनन्तरं तु भारतीय विभिन्नभाषासु एव रामकाव्यवर्णन- प्रधानता संजाता। येषु कम्वन-तोरबै-कृतिवासादि रामायणेन सहितं गोस्वामितुलसीदासस्य मानसरोवरतुल्यं 'रामचरितमानसम्'। ततः परं च शतशः महाकाव्यानि काव्यानि च विराजन्ते।

राजशेखरस्तु स्वकीयसर्वतोमुख-प्रतिभा-प्रभया व्याकरणदर्शनज्यौ- तिषकाव्यालङ्कारशास्त्रादीनां वैंदुष्येणाशेषशास्त्रनिष्णाततत्वेनमूर्धन्यभूतो- जातः।

अस्य कर्पूर-मञ्जरी–विद्धशलाका मञ्जिका—बालभारत--काव्य- मीमांसाप्रभृतिपाण्डित्यपूर्णरचनाभिः साकमिदं बालरामायणमिदं सर्वथाऽ- भिनवशैल्यां रामचरितामृतमिति मन्यन्ते मनीषिणः।

यद्यपि राजशेखरेणान्तः साक्ष्यरूपे बाल्मीकिप्रभृति पूर्वविदुषां राम- कथोद्गातॄणां सादरं सबहुमानं नामानि गृहीतानि किन्तु अङ्काध्यायादीनां नूतननामानिप्रदाय विषयवस्तूनामुपस्यापनं च पूर्वऋषिभ्यो विद्वद्भ्यो निम्नरुपेण कृतम्।

अत्र पौलस्त्यस्य रावणस्य प्रतिज्ञामारभ्य कथा विनिवेशिता विद्यते। (१) प्रथमोऽङ्कस्य प्रतिज्ञापौलस्त्यम् (२) द्वितीयस्य रामरावणीयम् (३) तृतीयस्य 'विलक्ष्य लङ्केश्वरः' (४) चतुर्थस्य 'भार्गवगङ्गः' (५) पञ्चमस्य 'उन्मत्तदशाननः' (६) षष्ठस्य 'निर्दोष दशरथः' (७) सप्तमस्य 'असम पराक्रमः' (८) अष्टमस्य 'वीरविलासः' (९) नवमस्य 'रावणवधः' (१०) दशमस्य च 'राघवानन्दः' एभिर्नामभिरङ्कानां विभाजनं विद्यते।

समीक्षाक्रमे स्पष्टमनुभूयते समीक्षकैः मनीषिभिः यत् यदि राजशेखरेण एवं प्रकारेण कथाभिन्नता नापि कृता स्यात् मूलकथायुक्तेन सामान्य परिवर्तनेनापि रचना विहिता स्यात् तथापि काव्यस्य वैशिष्ट्यं महत्त्वं च नैवापहृतं स्यात्। न जाने कथमनेन विद्वन्मूर्धन्येन एवं महत् परिवर्तनं कृतम्। अत्र तु काव्यमेतत् समीक्षणीयम्। काव्यं तु सर्वथाऽद्भुत्पाण्डित्य पूर्णमिति पूर्वमेवोक्तम्। प्रत्येकप्रमुखपात्रस्य पृथग्रूपेणातिसंक्षिप्तं चरित्र चित्रणं चित्रणं चित्रीयते।

(क) रामचन्द्रः—'धीरोदात्तं जयति चरितं रामनाम्नश्च विष्णोः' राक्षसरक्षौषधं रामभद्रमानेन्' एभिरुक्तीभिः रामं ब्रह्मरूपं मत्वा लोके धीरोदात्त' नायकरूपेण वर्णितवान्। रामोऽयं विनम्रतायाः प्रतिमूर्तिः, परशुरामस्य कटूक्तवचनेऽपि स्वमूर्धानं तदग्रे समर्पयति यथा—'स्वायत्तेन कुठारेण स्वाधीने राममूर्धनि (४।६२) शत्रुं रावणं प्राप्यपि विनम्रो रामचन्द्रः। यथा—

'भो लङ्केश्वर दीयतां जनकजा रामः स्वयं याचते।
कोऽयं ते मतिविभ्रमः स्मर नयं नाद्यापि किंचित् जगत्॥

फलतः रामे विनम्रता धीरता कष्टसहिष्णुता परदुःखकातरतामर्यादा प्रभृतयो गुणाः विद्यन्ते।

(ख) सीताः—आदर्शपतिपरायणा समस्तकष्टक्लेशसह्यकारिणी अलौकिकसुन्दरी आसीत्। यथाः—

'संसारसारनिचयेन विधाय बेधाः।१।४३
कालुष्यहेतुर्वैदेह्याः न राक्षसगृहस्थितिः
ध्वान्त वन्दीकृतापीन्दोर्न कला जातु नीलनि।
फलतः सर्वंथा लोकोत्तर साध्वी सुन्दरीं सीता। १०।४३

(ग) रावणः—महान् पराक्रमो दर्पयुक्तः देवादीनामवमन्ता परोत्कर्षे ऽसहिष्णुतायुक्तोऽयं रावणः। व्यङ्ग्यकूटोक्तिदर्पोनिभप्रभृतयो दुर्गुणाः रावणे

विराजन्ते। अत्र रामायणे सीतायामनुरक्ततैवास्य दुर्वृत्तौ प्रवृत्तिकारणं वर्णितम्। कुत्सितचरित्रवानयं रावणः।

(४) **परशुरामः**—वेदविद्याविशारदः महान् पराक्रमी क्षत्रियनाशकर्ता विद्वानयं जामदग्न्यः। इतिहास-पुराणेषु वर्णितास्योत्कर्षः प्रतिपादितः कविना। चरित्रमस्य प्रकरणद्वये वर्णितम्। रावणेन साकमेकत्र रामेण साकमन्यत्र। उभयत्रायमुग्रोऽसहिष्णुश्च।

(५) **दशरथः**—दशरथस्य चरित्रमुत्कृष्टरूपेण चित्रितं राजशेखरेण। रामवनवासजन्यं लाञ्छनं परिमार्जितम्। पुरन्दरसभायां गते दशरथे राक्षसाः कैकेय्याः दशरथस्य च छद्मरूपं धृत्वा रामस्य वनवासं याचितवन्तः। रामश्च तामेवाज्ञां शिरसि निधाय सीतालक्ष्मणाभ्यां सहितः वनं प्रतस्थे।

पुरन्दरसभातः परावर्तितो दशरथः समाचारमिमं ज्ञात्वा चकितोऽभूत्। वने च सीताहरणस्य वृत्तान्तं विज्ञाय दशरथो महति शोकार्णवे निमग्नः सन् दिवंगतः।

परिणामतोऽत्रत्या कथा नूतनकल्पनायुक्ता लिखिता बालरामायणकारेण।

पूर्वमेवोक्तं यदयं विविधविद्यानिष्णातः महाकविरासीत्। श्रृङ्गार रसवर्णने प्रवीणः। विभिन्नराज्यजनपदानां सुन्दरीणां नखशिखवर्णनं विविधदृश्यवर्णनादिकं च राजशेखरस्य वैशिष्ट्यम्। दीर्घसमासादियुक्तं काव्यकाठिन्यं च यत्र तत्र रसप्रवाहभङ्गतां च करोति।

रामायणमिदं नूतनतां मनोहारितां च विधत्ते, काव्यरसास्वादनं च वितरति।

"बाल-रामायणम्"

रामायणमिदं वृहदाकारनाटकम्। विदर्भदेशीय यायावरब्राह्मण कुलोद्भवमहाकविराजशेखरस्य कृतिरस्ति। समालोचकानां समीक्षयाऽस्य महाकवेः समयः नवमशताब्द्याः उत्तरार्धभागः। अशेषशास्त्रनिष्णातोऽयं राजशेखरः शब्दशास्त्र-रसशास्त्रपारंगतः। स्वयं च प्रतिपादयति यत् "काव्यकाव्याङ्गविद्यातु कृताभ्यासस्य धीमतः, मन्त्रानुष्ठाननिष्ठस्य नेदिष्ठा कविराजता।"

फलतोऽयं तन्त्रमन्त्रानुष्ठानपरोऽपि। कथितमनेन यत् "अहं महाकवि-भवभूतेरवतारोऽस्मि।" यथा—

बभूव बल्मीकभुवः पुरा ततः प्रपेदे भुवि भर्तृमेष्ठताम्,
स्थितः पुनर्योमवभूतिरेखया स वर्तते संप्रति राजशेखरः।

१-१६

एतेन रामकाव्यवर्णने स्वं भवभूतिश्रेण्यां मनुते।

बालरामायणेऽत्र पात्राधिक्येन सह छन्दसां सन्दोहः श्लोकानां बहुत्वं सर्वत्र पाण्डित्यप्रदर्शनं दृश्यते। अन्यैश्छन्दोभिः साकं 'शार्दूलविक्रीडित' छन्दसः संख्या सर्वतोऽधिका अष्टोत्तरंद्विशतं (२०८) विद्यते। यथा केनापि विदुषा प्रोक्तम् "शार्दूलविक्रीडितैरेव प्रख्यातो राजशेखरः, शिखरीव परं वक्त्रैः सौल्लेखैरुच्चशेखरः।"

सर्वत्रादिकाव्यवाल्मीकिरामायणतः कथाऽत्रभिन्ना नूतनशैल्यामस्ति।

काव्यमीमांसा-विद्धशलाकामञ्जिका-कर्पूरमञ्जरी प्रभृति विशाल पाण्डित्यपूर्णाः विविधभाषागुम्फिताः वहवो ग्रन्थाः विराजन्ते। येष्वेकतमो-ऽयं ग्रन्थः बालरामायण"—नामकः।

"अत्रेयं समीक्षा"

१. रामकाव्यमिदं संयोगात्मकम्, विविधवर्णननैपुण्ययुक्तम्' बालमीकि-रामायणमाधारीकृत्य निर्मितमिदं नाटकं मूलकथाभिन्नात्मकं कवि-कल्पितमभिनवकथागुम्फितम् ।

२. सर्वेषां रसानां क्रमशः सन्निवेशोऽस्ति किन्तु काव्येऽस्मिन् शृंगार-रसस्य यथापरिपाकस्तथा च विभिन्ना प्रान्तीयललनासौन्दर्यवैशिष्ट्य-वर्णनं चमत्कारपूर्णम् ।

३. मौलिकरूपेण संस्कृतगिरारचितेषु विविधरामकाव्येषु प्रायोऽन्ति-मिमदं काव्य-नाटकम्, यत्र सर्वत्राभिनवचमत्कारशैली विद्यते ।

४. एतस्य समकालीनमेव प्रायः दिङ्नागाचार्य विरचितं "कुन्दमाला नाटकम् ।" यच्च करुणरसपरिपूर्णं सीतामिलनसंयोगात्मकम् ।

५. ततः पूर्वं बालमीकिरचितमेव विस्तृतमानन्दरामायणं विद्योतते यस्मिन्नपि सीतासंयोगान्तमेव वर्णनं विभाति ।

६. केवलं महति 'बालमीकिरामायणे' सीतापरित्यागादिवियोगान्त कथा दृश्यते ।

७. भवभूतिरचिते विश्वविश्रुते करुणरसात्मके 'उत्तररामचरितेऽपि' छायारूपेणापि सीतारामयोः संयोगस्य प्रतीकात्मकताऽवलोक्यते ।

८. षोडशशताब्द्यां तुलसीकृतरामचरितमानसे सीतापरित्यागादि कथा-वर्णनं नैवास्ति ।

९. फलतः संस्कृतकाव्यनिर्माणपरिणामे सर्वत्र संयोगात्मकरचना-शैली समपेक्षिताऽस्ति, नात्र मतद्वयम् । परिपाटीयं शैली वा भारतीयभव्य भावनाऽनुकूलेति मम विचारः । तत्र बालमीकिरामायणमादिकाव्यं यत्र काव्यनिर्माणपरम्परानुसरणं नानुसृतमस्ति यच्च स्वाभाविकम् ।

१०. बालमीकिरामायणेऽतिपाण्डित्यप्रदर्शनं मूलकथातो महत्परिवर्तनं विद्यते । यद्येवमतिविशालपरिमाणे कथापरिवर्तनं नाभविष्यत् तदापि बालरामायणस्य महत्त्वं न किमपि न्यूनमभविष्यत् । इत्यालोचकैरस्मा-भिश्च मन्यते ।

११. विभिन्नपात्रचरित्रचित्रणेऽपि राजशेखरः सीमोल्लङ्घनं चकार नात्रमतद्वयम्। रावणे परशुरामे नारदे च ये विशिष्टगुणाश्चाप्यासन् तेषा मुपेक्षां कृतवान्। दशरथस्य चरित्रचित्रणे तदुपरि समागतलाञ्छनस्य परिहारः कृतः कविना। राक्षसेषु "माल्यवान्" इत्यस्योत्कृष्टचरित्रं चित्रितमनेन।

१२. नाटकेऽस्मिन् नाटकीयगतिशीलतायाश्चाभावो विद्यते। अभिनेय-तोपेक्षिताऽत्रजाता तथाऽभिनयद्रष्टा सर्वथा श्रोता भवति। इदं तु काव्यं-महाकाव्यमेव, नाटकं नाम तु नामैवेति स्पष्टम्।

१३. सारांशतो रामायणमिदं संस्कृतवाङ्मये विविधरामायणमध्ये विशाल वैदुष्यपूर्णवर्णनेन सर्वमान्यं प्रशंसनीयं रामकथा-पथि नूतनसरणि-प्रदर्शकमित्यत्र न कश्चन सन्देहलवः।

"कथा-सारांश:"

"प्रथमोऽङ्कः"

विश्वामित्रः यज्ञोपद्रवरक्षार्थमयोध्यातः रामचन्द्रमानीय विराधादि राक्षसानां नाशं रामेण कारितवान् । ततः "शुनःशेप" नामानमेकं दूतं प्रेषितवान् । तत्र रावणस्य गुप्तचरः राक्षसनामा तत्रैवोपस्थित आसीत् । तेनैव ज्ञातं यत् सीतास्वयम्बरे धनुर्यज्ञे पौलस्त्यो रावणोऽपि समागतः । परशुरामसमीपमेकं मायामयराक्षसदूतं च पूर्वमेव प्रेषितं तेन चरेण ।

पुष्पकविमानेन प्रहस्तेन साकं रावणो मिथिलामागतवान् । यथाः—

"सेवागतामरविमानसहस्रसेनाः सीमन्तयन् मम मनोजयिना जवेन,
तां मैथिलस्यनृपतेर्व्रज राजधानीं यत्राद्भुतं हरधनुर्धरणीसुता च" ॥१-३२॥

एवं वेगेन समागतस्य रावणस्य यथोचितसत्कारं कृतवान् । ततश्च रावणो ब्रवीति यत् येन लीलया कैलाशपर्वतमुत्थापितं तत्कृते शिवधनोरुत्थापनं तु पुष्पवत् किन्तु निमिवंशेन सह सम्बन्धो नोचितस्तेन चिन्तयामि । यथाः—

"गिरिशधनुरधिज्यं रावणः कर्तुमीष्टे
करतुलितहराद्रेर्दुष्करं किं हि तस्य ।
किमुत स निमीनां यौनसम्बन्धयोग्यः
तदिति मम चित्तं चिन्तया मूर्च्छतीव ॥१-३७॥

ततो रावणः शतानन्दं कथयति, ब्रह्मर्षे अयोनिसंभवया सीतया सह शिवधनुः समक्षीक्रियताम्, पितुर्जनकस्याज्ञया तथैव कृतम् । तदा रावणश्चिन्तयति ।

अगर्भसंभवां कन्यां दशकण्ठो जगज्जयी ।
आरोप्य हरकोदण्डं कथं न परिणेष्यति ॥१।२९॥

ततश्च रावणो धनुः स्पृशति । सीता च तं रावणं दृष्ट्वा प्रार्थयति बसुन्धरां यत् प्रथमं मह्यं विवरं (स्थानं) देहि ततो रावणः धनुः क्षिपतु ।

रावणश्च चिन्तयति, अविमृश्यकारिता पुंसामापदस्थानम् । प्राकृतजनवदप्राकृतो महाबलशाली रावणः पणेन (क्रयेन) परितुकामः ? इति विचिन्त्य सावज्ञं धनुः क्षिपति । शिवधनोरपमानेन क्रुद्धो जनकः रावणं शस्त्रेण शापेन दण्डं कर्तुमुद्यतोऽभूत् । ततः शतानन्दः शान्तं करोति जनकम् ।

तदारावणः कथयति—

शृणुत भो पौलस्त्यप्रतिज्ञां यत् पृथिव्यां त्रिभुवनेषु वा शम्भोः कोदण्डं खण्डयित्वा यः सीतां वरिष्यति तस्य कण्ठं मम चन्द्रहासोऽयमसिः खण्डयिष्यति। यथाः—

"कुर्वन् मौर्वीनिवेशक्रमनवमवटनि स्पष्टं टङ्कारटङ्क
शम्भोः कोदण्डदण्डं बधिरितभुवनं भूर्भुवस्वस्त्रयेऽपि।
यस्तामेनां वरीता रसयति तदसृक् चन्द्रहासो ममासिः,
कण्ठास्थिग्रन्थिशकलीकरणमवरणत् कास्वाचालधारः।

ततो निसर्गरमणीयेषु मिथिलापुरी परिसरेषु क्रीडाभिः द्वित्राणि दिनानि विनोदेन व्यतीत्य परावर्तितो भविष्यामि इत्युक्त्वा रावणः धनुर्यज्ञ स्थलान्निष्क्रान्तः।

इति 'प्रतिज्ञापौलस्त्य' नाम प्रथमोऽङ्कः

'द्वितीयोङ्कः'

अङ्केऽस्मिन् परशुरामरावणयोर्विवादवर्णनमतीवचमत्कारजनकम्। नारदशिवगणभृङ्ग-रिटिप्रभृतिवार्तालापक्रमे ज्ञायते यत् रावणेन परशुयाचना कृता। परशुरामेण न प्रदत्तः परशुरिति रावणानुचरः मायामयनामको राक्षसः सूचितवान्। तेन क्रुद्धो रावणः परशुरामेण सह योद्धमुद्यतस्तत्र। परशुरामश्च स्वशिष्येण सह तत्रोपस्थितः।

उभावपि स्व-स्व प्रशंसाक्रमेऽन्योन्यमाक्षिपतः। युद्धाय समुद्यतौ द्वौ शिवादेशेन भृङ्गि-रिटी निवारितवान्। रावणेनोक्तं किमिदं धनघोरवर्षाकालेऽनायासस्तुषारपातो जातः।

परस्परात्मप्रशंसापरौ परशुरामरावणौ सगर्वं वीररसमयं वागादानप्रदानं कुर्वाते। तच्च सुमनोहारि। द्वित्राण्युदाहरणानि पश्यतु। रावणेनोक्तम्—

देवीविलासमुकुरः परशर्य आसीत्,
स्तम्बेरमासुरशिरोमणि शातधाराः।
तं रेणुकारुधिरपङ्कक्तांकमेनं,
द्रष्टुं न कस्य हृदयं करुणा रुणद्धि॥

२।३५

हं हो, नूतनः खल्वेष क्षत्रियधर्मः, यत् जननीजनेऽपि शौर्यपर्यवासायः?

एतच्छ्रुत्वा परशुरामेणोक्तम्—

रेवाम्भोगर्भमज्जद्विविधवरबधूहस्तयन्त्रोज्झिताभिः,
क्रीडन् वारां लताभिः स्मरसि यदकरोदर्जुनः कार्तवीर्यः।
तद्घोषणां यत्तु रामो रणभुवि विदधे वेगवल्गत् कुठारः,
प्रायः पौलस्त्य सा ते श्रवणपरिणतिं नो गता किम्वदन्ती।

२।३८

इत्येवंरूपेणोभयोर्वार्तालापः नूतनकथामनुसरति।
अन्तेचोभयोर्मैत्री सञ्जाता स्व-स्वस्थानं गतवन्तौ।

इति राक्षरावणीयनाम्ना द्वितीयोऽङ्कः

अथ तृतीयोऽङ्कः

अस्मिन्नङ्के सर्वथानूतनकथाशैल्यां नाटकरूपेण सीता-स्वयम्वर' वर्णनं विद्यते। किन्तु कथानकादादितः सीतापरिणयपर्यन्तां कथां यथावत् वर्णितवान्।

विश्वामित्राज्ञया सलक्ष्मणो रामः ताडकादि राक्षसान् विनिहत्य धनुर्यज्ञ-भूमौ ऋषिणा सहितो मिथिलामागतवान्। तत्र विदेहं जनकं दृष्ट्वा राम लक्ष्मणाबूचतुः, भगवन्, किमयः विदेहो जनकः याज्ञवल्कतो वेदांश्चतुरोऽधीत्यापि कथं न वनाय प्रतस्थे।

विश्वामित्रेणोक्तं वत्स, जनकस्य कृते गेहमरण्यं च सममेव। यतो हि विदेहमते स्थितिरियमस्ति।

स्थितिः पुण्येऽरण्ये सह परिचयो हन्त हरिणैः
फलैर्मेध्याबृत्तिः प्रतिदिनं च तल्पानि हृषदः।
इतीयं सामग्री फलति हि विरक्त्यै स्पृहयतां,
वनं वा गेहं वा सदृशमुपशान्तस्य मनसः॥

३।१७

रामोब्रूते, सत्यमिदं भगवन्।

अतथाविधो न तथाविधरहस्यवेदी। अर्थात् यस्यैवं व्यवहारो नास्ति न स तद्रहस्यवेत्ता भवितुमर्हति। ततश्च रावणःविनोदार्थमेव सीतास्वयम्बरनाटकमारभते यत्र विश्वामित्रेण साकं रामलक्ष्मणावपि सम्मिलितौ।

स्वयंवरे च नानादिग्देशेभ्यो भूपतयः समागतवन्त आसन्। तत्र धात्री घोषणां कृतवती यत् यश्चेदं शिवधनुर्भङ्गं करिष्यति स एव सीता-

पाणिग्रहणं कर्तुं शक्ष्यति। अत्रत्य विभिन्नदेशीयराज्ञां परिचयक्रमे विचित्रा रम्या सूक्ष्मा च वर्णन शैली विद्यते। ये च राजानः शिवधनुर्भङ्गे विफलतां यान्ति तान् उपहसति रावणः।

समेषां नरपतीनामसफलताऽनन्तरं रामो हसन् लीलाकौतुकेन धनुर्भङ्गं चकार।

यथाः—

यथा यथा धूर्जटिचापकोटिं रामानुबन्धादधिरोहति ज्या,
तथा तथा सर्वनरेश्वराणां मुखानि मूलान् मलिनी भवन्ति॥

३।७५

तथा च

ओङ्कारोविश्वरक्षाक्रमनिगमविधेरन्तकस्याट्टहासः,
संहर्ताशात्रवाणां पटुपटहरवः कीर्तिनिर्वासनस्य।
दोर्यन्त्रासञ्जिसिञ्जानमदटनि रटन् सर्वपर्वप्रसूत
ष्टीत्कारः शम्भुचापे जयति विजयिनो राघवस्यादिवन्दी— ३।७९

एवं च शिवधनुर्भङ्गोपरान्तं जनकः नीललोहितं शिवं प्रणनाम— "ॐ नमो भगवते नीललोहिताय"।

ततश्च जनकः रामहस्ते सीतापाणिं निधाय—

रुग्णचण्डीशकोदण्ड निजदोर्दण्ड निर्जितां—
गृहाण पाणौ वैदेहीं पद्मा पद्मे निषीदतु। ३।८४

एवं संक्षिप्तविधिनैवात्र सीतापाणिग्रहणवर्णनं विद्यते।

शिवधनुर्भङ्गसमाचारं श्रुत्वा रावणः क्रुद्धो रोषाविष्टोजातः। ततः प्रहस्तेनोक्तं यत् महाराज, नाटकमिदं सम्पूर्णतामगात्। अधुना नर्तकनर्तकीनां नर्तनमभिनयं च पश्यन्तु तत्रभवन्तो भवन्तः। अभिनयं च दृष्ट्वा रावणो लङ्कां ययौ।

जनकश्च रामेण सीतां विविधवैवाहिकविधानपूर्त्यर्थं पुरबधूसमीपं प्रेषितवान्।

इत्थं च विलक्षलङ्केश्वरोनाम—तृतीयोऽङ्कः।

चतुर्थोऽङ्कः

अङ्केऽस्मिन् उपाध्यायवटुसम्वादेन ज्ञायते यत् धनुर्भङ्गस्य समाचारं विज्ञाय क्रुद्धो जामदग्न्यः परशुरामः रामेण सह युद्धाय मिथिलामागच्छति।

एतन्मध्ये एव दशरथः रामविवाहसमाचारेण हर्षितः मिथिलां प्रतस्थे। ततश्च रामोऽयोध्यां सीतया सह प्रस्थानोपक्रमेऽस्ति इत्यपि दशरथेन ज्ञातम् ।

एतस्मिन्मध्ये परशुरामः समुपस्थितः। क्रुद्धः सन् राममाक्षिपति। रामस्तु अतिविनीतभावेन शिष्टतया च परशुरामं सत्करोति। विश्वामित्रोऽपि तं सान्त्वनाय प्रयासं कृतवान् किन्तु क्रोधी स परशुरामः विश्वामित्रमपि उपालम्भते। रामं च कथयति—

यथाः—अपि कालस्य यः कालः कण्ठे कालो महेश्वरः।
भार्गवस्तस्य शिष्योऽहं निसर्ग निरवग्रहः ॥ ४।५८

तथा च

मध्ये नरेश्वरसभं रभसेन येन भुक्तं धनुस्तडिति च त्रुटितं गुरोर्मे,
रामेऽपि नाम भजतां भुजदण्डयुग्ममुद्दामधामनि तदेतर काण्डचण्डम्।
४।५९

अर्थात् महाकालकालेश्वरस्य शिष्यः रामेणसह युद्धार्थमुद्यतः यो रामः सभा मध्ये मम गुरोर्महेश्वरस्य धनुरुत्थाय खण्डितं कृतवान्। रामेण नतशिरसा निवेदितम् यत्—

'स्वायत्तेन कुठारेण स्वाधीने राम मूर्धनि,
यथेष्टं चेष्टतामार्यसर्वदाज्ञां को निषेधति।' ४।६२

अर्थात् कुठारहस्तो भवान् यथेच्छति तथा करोतु रामस्य मस्तकं तवाग्रेऽस्ति।

ततश्च पुनः विश्वामित्रो मध्ये समुपस्थाय ब्रवीति—

'रामः शिष्यो भृगुभव भवान् भागिनेयी सुतो मे,
वामे वाहावुत तदितरे कार्यतो को विशेषः।
दिव्यास्त्राणां तव पशुपतेरस्य मत्तस्तु लाभः,
तत्त्वां याचे विरम कलहाकर्मारभस्व ॥ ४।६९

रामो मम शिष्यः भवान् तु मम भागिनेयीपुत्रः। उभौ मम वामदक्षिण बाहू। अतएव शङ्करेणाप्तं दिव्यास्त्रं भवान् परित्यजतु, रामोऽपि मत्तः प्राप्तमस्त्रं त्यजेत्। आर्यचरितोचितकार्यमारभताम्।

एवं श्रुत्वा परशुरामः शान्तो जातः, रामश्च विवाहप्रकरणविधौ संलग्नः।

तत्र मिथिलायां समागतो दशरथः पुत्रविवाहविषये जिज्ञासां कृत-

वान्। ज्ञातं यन्न केवलं विवाहबिधिः सम्पूर्णः अपितु रामस्य प्रस्थान बेलापि जाता। एतदर्थं जनकविश्वामित्रादिसहितौ रामलक्ष्मणौ समायातौ, हेमप्रभया सह सीताऽपि समायाता। तत्र शतानन्दः समुपदिशति—

यस्यास्ते जननी स्वयं क्षितिरियं योगीश्वरोऽयं पिता
मातर्मैथिलि शिक्ष्यते कथय किं तस्याः सुजातेस्तव।
स्नेहात्केवलमुच्यते पुनरिदं स्त्रीणां पतिर्दैवतं
यद्भूयास्त्वमपास्य धर्ममपरं छायेव रामानुगा। ४।४२

तथा च

निर्व्याजा दयिते ननान्दृषु नता श्वश्रूषु भक्ता भव
स्निग्धा बन्धुषु वत्सला परिजने स्मेरा सपत्नीष्वपि।
पत्युर्मित्रजने सनर्मवचना खिन्ना च तद्द्वेषिषु
स्त्रीणां संवननं नतभ्रु तदिदं वीतौषधं भर्तृषु। ४।४४

अर्थात्—यस्याः माता स्वयं वसुन्धरा पिता च योगीश्वरो जनकः तस्यै किं कथनं कश्चोपदेशः स्नेहेन केवलमित्येव कथयामि यत् स्त्रीणां पतिरेव देवः। अतएव रामवशानुवर्तिनी भूयाः। तथा च प्रियननान्दृषु निर्व्याज विनम्राश्वश्रु सुश्रूषणे रता, परिजनेवत्सला, बन्धुषु कोमला, सपत्नीषु अपि स्मितमुखी, पत्युर्मित्रेण सह परिहासवती भूत्वा पतिं स्ववशे कुरुष्व। इदमेव पत्युर्वशीकरणमन्त्रम्।

(पद्यमिदमभिज्ञानशाकुन्तलस्य चतुर्थोऽङ्कस्थ शकुन्तला-प्रस्थान समये शकुन्तलां प्रति कण्वस्योपदेशं स्मारयति 'सुश्रूषष्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तं सपत्नीजने' इति।)

ततश्च दशरथं प्रति जनको निवेदयति यत् हे राजन् दशरथ, मनस्येवं न कदापि ध्येयं यन्माम् विना पुत्रस्य कथं विवाहो जातः। यतो हि स्वयं कुशिकनन्दनः विश्वामित्रः समुपस्थित आसीत्। यथाः—

मया विना विवाहोऽभूदिति चेतसि मा कृथाः।
यदासीत् सन्निधौ तत्र स्वयं कुशिकनन्दनः॥ ४।४८

सीता रुदती प्राह यन्मया सह उर्मिला माण्डवी श्रुतिकीर्तिरपि गमिष्यति। तत्र विश्वामित्रो ब्रूते, ताः अपि यास्यन्ति।

(अत्रेयमेव संक्षिप्तोक्तिः—यतो मध्ये एव परशुरामः समागतः, पुनर्गतश्च)

एवं क्रमेण सीताविवाहः सुसम्पन्नः। अत्र श्लोकबाहुल्यं विद्यते, विस्तारभिया नोद्धृताः ते श्लोकाः।

इति भार्गवभङ्गनामकः
चतुर्थोऽङ्कः।

पञ्चमोऽङ्कः

अस्मिन्नङ्के मायामयमाल्यवतोर्वार्तालापेन ज्ञायते यत् रामपरशुरामयोर्विवादे रामो विजयी बभूव। इदमपि ज्ञायते यत् रावणः सीताया मासक्तः सन् तां हर्तुमीहते। मायामयो राक्षसः यन्त्रजानकीं निर्मापयित्वा सिन्दूरिका नाम्नी सखी तां यन्त्रजानकीमादाय रावणसमीपं गतवती। जानकीं प्रतिमोहितो रावणः यन्त्रजानक्या सह प्रणयालापेमग्नो जातः। पश्चात् आलिङ्गनकाले यन्त्ररूपां सीतां तत्कण्ठे स्थितामेकां सारिकां च ज्ञात्वा लज्जितः सन् स्व प्रमोदवनं गतवान्। तत्र तस्य कामाग्निशान्त्यर्थं षड्ऋतूनामवतारो जातः तथा चाप्सरसः, नद्यः, गिरिकन्यकादयस्तस्य सस्नेहमुपचारं चक्रुः। तथापि अशान्त एवासीत् रावणः।

एतन्मध्ये नासिकाच्छिन्ना शूर्पणखा समायाति। रावणः क्रोधान्धो जातः।

अङ्कादस्मात् केवलं पद्यद्वयमेवोद्धृतं यतोहि समस्तेऽङ्के रावणस्योन्मत्ततैव दृश्यते।

सुखिनः परसौख्येन परदुःखेन दुःखितः।
जायन्ते कवयः काव्ये नयतन्त्रे च मन्त्रिणः॥ ५।२

शम्भोः शिष्यं कुशिकमुनितः प्राप्तविद्योपविद्यः
क्षुण्णक्षत्रं दशरथभुवामग्रणीः क्षत्रियाणाम्।
वृद्धं बालं च्यवनकुलजं भास्वतो वंशजन्मा
रामं रामो व्यजयतगतिच्छेदिना सायकेन॥ ५।५

माल्यवतोऽस्मिन् कथने कवीनां मन्त्रिणां रामचन्द्रस्य च महत्वं प्रतिपादितम्।

इति उन्मत्तदशानननामा पञ्चमोऽङ्कः

षष्ठोऽङ्कः

अस्मिन्नङ्के क्रुद्धो रावणः शूर्पणखानासिकाच्छेदनप्रतिशोधं नेतुमुद्यतोजातः, किन्तु मिथ्या-आश्वासनेन शमितसीता उक्तवती यत् प्रेमपरीक्ष-

णार्थमेव सा यन्त्रजानकीं प्रेषितवती। स्वयमेव सीता शीघ्रमत्रागमिष्यति।

एतन्माध्ये शूर्पणखामायामयश्चागत्य सूचयति यन्माल्यवतः आदेशेन मायारूपेण दशरथस्य कैकेय्याश्च रूपं धृत्वाऽयोध्यामागत्य छद्मना रामचन्द्रस्य वनवासं ययाचतुः। तदा कैकेय्या सहितो दशरथः इन्द्रलोकं गतवानासीत्।

रामश्च छद्मवेशधारिणो दशरथस्याज्ञां गृहीत्वा सीतालक्ष्मणाभ्यां सहितः वनं प्रतस्थे। ततः, परावर्तितो दशरथो घटनामिमां ज्ञात्वा स्तब्धोजातः। अत्र सुमन्त्रः सारथिः रामं नर्मदातटपर्यन्तं प्रापयित्वा परावर्तितः। ततश्च चित्रशिखण्डनामा जटायुसखा दशरथसमीपमागत्य सूचितवान् यत् रावणेन सीताऽपहृता। भवत् सख्येन मया पक्षिणा जटायुना यथासम्भवं प्रयासो विहितः।

समाचारमिमं श्रुत्वा दशरथः पावने प्रयागे त्रिवेणीसङ्गमे प्राणत्याग-मैच्छत्।

अत्रत्यं पद्यद्वयमुद्धृतं येन रामस्योदात्तता दशरथस्य च धर्मप्रियता प्रतीयमाना स्यात्।

मया मूर्ध्निप्रह्वै पितुरितिधृतं शासनमिदं,
स यक्षो रक्षोवा भवतु भगवान् वा रघुपतिः।
निर्वतिष्ये सोऽहं भरतकृतरक्षां निजपुरीं,
समाः सम्यङ्नीत्वा वनभुविचतस्त्रश्च दश च। ६।११

यस्मिन्नापः सह परिणता सूर्यपुत्रीपयोभिः.
मन्दाकिन्याः कुमुदरूचयो मेचकेन्दीवराभैः।
तीर्थे तस्मिन् मम विशदितं देवताभूयभूयः,
स्वाङ्गत्यागात् स्पृहयति मनो दासवार्धासनाय॥६।७२

इत्थं हि सर्गेऽत्र दशरथस्य कैकेय्याश्च निर्दोषतां प्रतिपाद्य रामचन्द्र-स्योत्कृष्टाचरणं च प्रदर्शितं राजशेखरेण।

फलतोऽस्याङ्कस्यनाम **"निर्दोषदशरथः"**

इति निर्दोषदशरथनाम षष्ठोऽङ्कः

सप्तमोऽङ्कः

अस्मिन् खण्डे वैतालिकेन रामयशोगासमये दशरथस्य मृत्युसमाचारं ज्ञात्वा रामेण विरुदावलीवर्णनं तावत्पर्यन्तं प्रतिषिद्धं यावत् पर्यन्तं रावण-वधो न जायते।

अत्र सागरतटमासाद्य ससैन्यं रामः प्रथमं सागरं निवेदितवान् सेतु-निर्माणार्थम्। यदा समुद्रः उपेक्षां कृतवान् तदाऽग्निवाणैर्दग्धः सागरः प्रगटो भूत्वा क्षमायाचनापूर्वकं सेतुपथनिर्माणविधिं कथितवान्। समुद्रे सेतु निर्माणं च जातम्।

एतत्प्रसङ्गे रामेणोक्तं यत् मम पूर्वजेन भगीरथेन गङ्गासमानीता पृथिव्यां तथा च सागरश्च परिपूरितः य सगरेण खातः कृतः स प्रतिकूला-चारी सागरो मामुपेक्षते। अस्तु, मया वाणाः विस्तारिताः, क्षमस्व माम्, ममकृतेऽधुना नान्यः पन्थाः। यथा—

"यत्खातः सगरेण मर्त्यसरितं मन्दाकिनीं कुर्वता,
पूर्वो यच्च भगीरथेन तदयं नः कीर्तनं सागरः।
अस्मिन् प्रतिकूलवर्तिनि मया कीर्णाः शरश्रेणयो,
हे वृद्धाः प्रणतोऽस्मि मुञ्चत रुषं रामस्य कान्या गतिः॥ ७३१

ततश्च हनुमान् ब्रवीति—

सेयं देव भृकुटिरचना मुञ्चतु त्वल्ललाटं,
ज्योतिश्चक्रस्तवकितशिखरश्चापदण्डं च वाणः।
वारां मध्यादयमुदयते पन्नगी गीतकीर्तिः,
सार्धं वीरैर्नद परिवृतः साञ्जलिः यत् समुद्रः॥ ७३४

भगवन्, भवान् भृकुटिवक्रतां कृपया त्यजतु, वाणम् च त्यजेत्, यतो हि समुद्रः साञ्जलिः मध्ये सागरात् समुत्थितः समायाति।

एवं क्रमेण समुद्रपारं ससैन्यं रामः आजगाम। तत्र सिंहनादनामानं राक्षसं रावणः प्रेषितवान्। यश्च महाबली पराक्रमी चासीत्। रामं प्रति तेनोक्तम्:—

रे रे कृत्स्नाः प्लवगपशवः किं भवद्भिर्भवद्भिः,
संग्रामाग्रे मम रणरसो लम्भितः सर्वभावम्।
यस्मिन् कस्मिन् न खलु समरे रोचदी सिंहनाद—
स्तन्मे रामं कथयत स हि श्रूयते वीरसिंह॥७८३

रे रे वानरपशवः, युद्धे मम सर्वोरणरसः पूरितः। केवलं वीरसिंह-रामं दर्शयत, नान्यैः सामान्यसैन्यैः सह युद्धमीहते सिंहनादः।

ततो रामः विहस्य निम्नोक्त व्यङ्ग्यवचनमुक्त्वा तं महाराक्षसं सिंहनादं जघान। यथा—

"बाली वलीमुख इति ब्रुवता त्वयैव,
लङ्कापतेर्मलिनतो यशसां प्ररोहः।
न्यूनाज्जयो यदिह लक्ष्म स चापि तेन,
दोर्मूलपञ्जरशुको विहितः पिता ते॥

अर्थात्, बालिनं वानरं कथयता त्वया लङ्कापतेः रावणस्य यशोमलिनी कृतं यतोहि बालिना तव पितरं रावणं निजवाहुपिञ्जरे शुकीकृतः।

इत्थमसमपराक्रमोनामसप्तमाङ्कः समाप्तः

(अङ्केऽस्मिन्नपि सेतुबन्धकथां विहायान्यत्सर्वकथानकं मूलकथातो-नूतनमेव कविकल्पितम्)

अष्टमोऽङ्कः

अस्मिन्नङ्के दुर्मुख-सुमुख-राक्षसयोः संवादेन रावणपुत्रस्य सिंहनादस्य युद्धे निहतसमाचारो ज्ञायते। ततश्च रावण प्रतिनिधिरूपेण नरान्तक-रामप्रतिनिधिरूपेऽङ्गदयोर्मध्ये युद्धो जातः। घोरयुद्धोपरान्तं नरान्तको मृतः। पुनश्च रावणो युद्धार्थं कुम्भकर्णं मेघनादं च प्रेषितं युद्धे चोभयोर्मरणं जातम्। एवंरूपेण भीषणयुद्धवर्णनमेवात्र मुख्यम्। श्लोकवाहुल्यं च।

वीराणां पराक्रमवर्णनेन-**वीरविलासो** नामायमष्टमोऽङ्कः समाप्तः।

नवमोऽङ्कः

अङ्कोऽयं महत्वपूर्णः। यतोहि रावणबधोऽत्र सविस्तरं वर्णितः। आरम्भे एव यमदूतः समागत्य रावणासंख्यसेनाविनाशेन श्रान्तश्चिन्तितश्च लङ्कालेखपट्टमानेतुं यमराजं दर्शयितुं च चित्रगुप्तसमीपमागतवान्। चित्रगुप्तोऽपि रात्रिन्दिवं रावणसैन्यनिधनप्रपञ्चलेखनेन परिश्रान्तो जातः।

ततो यमदूतो यमराजसन्देशं लङ्कालेखपट्टं च चित्रगुप्तं श्रावयति। तदित्थं (१) त्रेतायुगस्य प्रथमवर्षे कार्तिककृष्णपक्षस्य प्रतिपत्तिथौ वानरसैन्यैः चतुर्दिक्षु लङ्का आबद्धा। हनूमताऽकम्पनो धूम्राक्षश्च हतः, नीलेन प्रहस्तश्च (२) द्वितीयदिने अङ्गदेन नरान्तकः, हनूमता देवान्तकः महापार्श्वेन, ऋषभः, रामेण कुम्भकर्णश्च हतः। (३) तृतीयदिने लक्ष्मणेनातिकायः, सुग्रीवेण हनूमता च कुम्भकर्णपुत्रौ कुम्भनिकुम्भौ घातितौ। मकराक्षश्च रामेण हतः। (४) चतुर्थदिने च सुग्रीवेण महोदर-विरूपाक्षौ निपातितौ।

(५) पञ्चमेदिने महता प्रयासेन रामेण रावणो निहतः। यत्र च घोरयुद्धेऽन्ते विश्वामित्रेण संप्राप्तेन मायाहरनामकेनास्त्रेण रावणशिरांसि छिन्नानि रामचन्द्रेण। आकाशात् पुष्पवृष्टिः पपात। (पञ्चदिनान्येव लङ्कायुद्धोजातः, इति सर्वथा नूतन-कविकल्पना)

निम्नाङ्किताः केचनश्लोकाश्चात्र महनीयाः।

(क) कदा केषां च केभ्यश्च क्षयो लङ्कानिवासिनाम्
रामस्तु दशकण्ठस्य किं विधो भविता वधः ॥१०२॥

(ख) यद्वक्त्राणां दशानामिव दशककुभः शासितुं सृष्टिरासीत्
विंशत्या यश्चदोर्भिर्दशगुणितामेव प्राप्तवान वीरधर्मम्।
लङ्केन्द्रः संयतेन्द्रो रणभुवि दशभिर्मैथिलीवल्लभेन
ज्योतिर्दीप्तैः क्षुरप्रैः स खलु विरचितो निर्बिविन्धः कबन्धः ॥९५३॥

एवं हि दशमुखैर्दशादिशां शास्ता विंशितिर्भुजाभिश्च दसगुणबलप्राप्त रावणः इन्द्रं जितवान् सोऽयं रावणः मैथिलीबल्लभेन तीव्रवाणेन निःशिरांसि कृतानि, शिरोरहितकबन्धाश्च पातितः।

इत्थं च रावणबधोनाम नवमोऽङ्कः समाप्तः

दशमोऽङ्कः

अन्तिमेऽस्मिन्नङ्के सीतया सह वानरसैन्यैश्च सह पुष्पकविमानेनायोध्यां प्रतस्थे रामचन्द्रः। मार्गे च लङ्कायुद्धस्थलं चन्द्रलोकमलयादि-वर्णनं कुर्वन् रामः भरद्वाजाश्रमे अवतीर्य अगस्त्यादिदर्शनं कृत्वा आशीर्वचनं चादाय पुनः मार्गे द्रविड-आन्ध्र-काबेरी-महाराष्ट्र-नर्मदा-लाट-मालव-उज्जयिनी-पांचाल-कान्यकुब्ज-प्रयाग-वाराणसी-मिथिलाप्रभृति विशाल भव्यनगरनगरीणां शोभामवलोकयन् तत्रत्यानां कामिनीनां सौन्दर्यशोभां वर्णयन् आयोध्यां समागतः।

वर्णनमिदं काव्यछटा-वर्णनेन विविध-रसपरिपाकेन मुख्यतः शृंगार-रसाभिव्यंजकवर्णनेन चमत्कृतोऽयमङ्कः।

अन्ते च द्वित्राणि पद्यान्येवात्रोद्धृतानि यानि द्रष्टव्यानि पठितव्यानि च।

अन्ते च भरतशत्रुघ्नादिसहितमातॄणां दर्शनाशीर्वचसा संवर्धिताः सीतारामलक्ष्मणाः। ततश्च ऋषिवसिष्ठाशीर्वचसा रामराज्याभिषेको जातः। प्रजाश्च ननन्दुः परिजनाश्च-मुमुदिरे। सर्वे सुखिनो बभूवुः।

एवं हि महन्नाटक-महाकाव्यात्मकमिदं बालरामायणं परिपूर्णम् ।

(अ) खेलं संचरितुं तरंगतरलभ्रूलेखमालोकितुं
रम्यं स्थातुमनादरार्पितमनोमुग्धं च संभाषितुम्
संत्यज्योज्जयिनीजनोर्विददितुं हृद्यं च हे जानकि
प्रत्यङ्गार्पण सुन्दरं च न जनो जानाति रन्तुं परः ।
१०।८१

अर्थात्, उज्जयिनीं विहायान्यत्रोत्पन्नाः जनाः कामिन्यश्च क्रीडाविहारं भ्रूभङ्गप्रक्षेपणं, मन्दस्मितहास्यं सहजमनोमुग्धकरणं सर्वांगसमर्पणपूर्वकं सुखदसंभोगं च न जानन्ति । केवलमुज्जयिनीनागरिकै रमणीभिरेवं जानन्ति ।

(आ) न्यग्रोधोऽयं वन्द्यतां श्यामनामा शम्भोर्भ्रष्टा शेखराज्जाह्नवीयम्,
कालिन्दी च प्लाविता तत्पयोभिस्तीर्थं ह्येतत् स्वर्गमार्गः **'प्रयागः'**
१०।९१

सीते, अयमेव पावनप्रयागः यत्रत्यः पावनः न्यग्रोध (अश्वत्थ) पादपः, गंगा-यमुना-सरस्वती-जल प्रवाहमयो त्रिवेणीसंगमः । तान् प्रणमतु ।

(इ) अन्तेवासी यदधिवसति स्वर्मणेर्याज्ञवल्को
यत्रायन्ते निमिकुलभुवः प्रत्यहं भूमिपालाः ।
तत्ते चक्षुर्विशतु **मिथिलामण्डलं जन्मभूमिं**
यत्रोयासि त्रिनयनधनुः खण्डनाडम्बरेण । १०।९३

हे मैथिलि, स्वजन्मभूमिं पावनीं मिथिलां पश्य, यत्र सूर्यशिष्योमहर्षिः याज्ञवल्कः निवसति निमिवंशोद्भवाः राजानः यां रक्षन्ति, यत्र चाहं शिवधनुर्भङ्गं कृत्वा त्वयासह विवाहं कृतवान् ।

•

भारतीयवाङ्मयेषु रामकथा-वर्णनम्

प्रथमं खण्डम्

(६)

हनुमन्नाटकम्

हनुमन्नाटकम्--संक्षिप्त विवरणम्
(समीक्षा-सहितम्)
समीक्षा

(i) शब्दब्रह्मसाक्षात्कारिणाऽशेषपदवाक्य-प्रमाण-पारावारीणेन काव्य-कलामर्मज्ञेन श्रीमताहनूमता विरचितं 'हनुमन्नाटकम्' काव्यशास्त्रमूर्धन्य-तामासाद्य विद्योतते।

(ii) 'हनुमन्नाटक'—प्रसङ्गे निर्माणकालस्य नाटकोपलब्धेश्च सुनिश्चितं किमपि प्रमाणं नाद्यापि प्राप्तम्। पारम्परिक जनश्रुत्यनुसारं प्राप्तसंस्कर-णेषु समुपलब्धश्लोकप्रमाणेन चेदं विनिश्चतं यत् हनुमता निर्मितमिदं काव्यम्, यत् प्रस्तरखण्डेष्वङ्कितमासीत्। येन केनापि प्रकारेण बाल्मीकिना हनुमद्द्वारैव समुद्रे निःक्षिप्तम्।

(iii) राजा भोजकाले, विक्रमादित्यशासनकाले वा तेषामादेशेन समुद्रा दुद्धृतेभ्यः प्रस्तरखण्डेभ्यः श्लोकान् गद्यांश्च यथासंभवं समेकीकृत्य प्रका-शितं तदानीन्तनशासकैः।

एतस्य समुद्धारकर्त्तारौ दामोदरमिश्रो मधुसूदनमिश्रश्चास्ताम्। उभयोः प्राच्यविदुषोः पृथक्-पृथक् मुद्रितं संस्करणमुपलभ्यते।

(iv) तत्र पण्डित दामोदरमिश्रसंस्करणे चतुर्दशसर्गस्यान्तिमश्लोके-नावगम्यते यदनेन विदुषा समुद्रादुद्धृतेभ्यः पाषाणखण्डेभ्यः काव्यमिदं यथा स्थानं क्रमशः सज्जीकृतम्। यथाः—

रचितमनिलपुत्रेणाथ बाल्मीकिनाऽब्धौ
निहितममृतबुद्ध्या प्राङ्महानाटकं यत्।
सुमतिनृपति भोजेनोद्धृतं तत् क्रमेण
ग्रथितमवतुविश्वं मिश्रदामोदरेण॥ १४।९६

एतेन निश्चितं यत् भोजशासनकाले नाटकमिदं 'हनुमन्नाटक' नाम्ना प्रथितं चतुर्दशाङ्कात्मकम् (१४)। यद्यपि श्लोकेऽत्र **'महानाटक'** शब्द नोल्लेखो वर्तते।

---

१. 'हनुमान्'-'हनूमान्'—इति ह्रस्वदीर्घोकाररूपेण शब्दद्वयं व्याकरणसम्मतम्।

(v) अन्यत्र पण्डितमधुसूदनमिश्रसम्पादितसंस्करणेन ज्ञायते यत् विक्रमेणोद्धृतमिदन्नवाङ्कात्मकनाटकं **'महानाटक' नाम्ना प्रथितम्** । यथा—

एष श्रील हनूमता विरचिते श्रीमन्महानाटके,
वीर श्रीयुत् रामचन्द्रचरिते प्रत्युद्धृते विक्रमैः ।
मिश्रश्रीमधुसूदनेन कविना सन्दर्भसज्जीकृते,
स्वर्गारोहणनामकोऽत्र नवमोऽङ्कपूर्ण एवेत्यसौ ॥ ९।१४९

(vi) उभे संस्करणेऽतिप्राचीनतमे नात्र सन्देहः । **उभयत्र हनुमद्रचितमेवेदमित्यपि सिद्धम् ।**

यत्र दामोदरमिश्रसंस्करणेऽस्य नाम **'हनूमन्नाटकम्'** अङ्काश्च चतुर्दश (१४) तत्र मधुसूदन मिश्र संस्करणे— **'महानाटकम्'** नाम अङ्कारच नवैव ।

(vii) उभयोः नाम, अङ्क, श्लोक, शासकेषु मतं वैभिन्नम् । दामोदर मिश्रसंस्करणे ५७९ श्लोकास्तत्र मधुसूदनमिश्रसंस्करणे ७९१ श्लोकाः सन्ति । परन्तूभयोः संस्करणयोः प्रायः त्रिशतं ३०० श्लोकाः समानाः । अन्ये च विभिन्नाः । अतएव समानश्लोकान् विहाय विभिन्नश्लोकाः पल्लवितपरिवर्तितादिरूपे समुपलब्धाः इत्यनुमीयते ।

(viii) अत्र भारतीयवैदेशिकालोचकैःविभिन्नग्रन्थैश्च 'हनुमन्नाटक' नाम्ना प्रथितमिदं काव्यं प्राचीनतमं प्रामाण्यपूर्णमिति ज्ञायते । भवतु नाम किञ्चितम् । किन्तु मयाऽत्र **'हनुमन्नाटक' काव्यस्य समीक्षा क्रियते** । एतन्नाम्ना प्रसिद्धमेव काव्यं मूर्धन्यभूतमित्यत्र न मदभेदः ।

(ix) वर्ततां नाम मधुसूदनमिश्रसंस्करणात्मकं 'महानाटकम्' । यद्यपि हनुमत्कृतमेव श्लोकाः वहवः समानाः, घटना-वर्णनं च समानम् । फलतः गम्भीरानुसन्धानविषयोऽयं पक्षः, नात्रापि मतद्वयम् ।

(x) इदंतु दृश्यते यत् ध्वन्यालोककारेण आनन्दवर्धनाचार्येण, काव्य मीमांसादिसहितबालरामायणकारेण राजशेखरेण, अन्यैश्च विद्वद्भिर्बहुभिः नवम-दशमशताब्द्या तदनन्तरञ्च निजनिर्मितेषु मूर्धन्यालङ्कारशास्त्र ग्रन्थेषु हनुमन्नाटकस्य पद्यानि उदाहरणरूपे प्रदत्तानि । अतएव प्राचीनतमोऽयं ग्रन्थः, नात्र काचित् विचिकित्सा ।

(xi) बाल्मीकि-रामायणे हनुमन्नाटके च कतिपयानि पद्यानि समानानि । अत्रेदं निश्चितरूपेण किमपि कथनमसम्भवम् यत् हनुमता

बाल्मीकि-रामायणतः पद्यानि नीतानि अथवा बाल्मीकिना हनुमन्नाटकतः श्लोकाः गृहीताः। हनुमन्नाटकं तु बालमीकिरामायणनिर्माणात् पूर्वरचितमिति तु पारम्परिककथातो निश्चितम्। फलतोऽत्र सूक्ष्मेक्षकैः गवेषकैः सविशेषं चिन्तनीयम्।

(xii) अत्रेदं चिन्तनीयम्; यत् बालब्रह्मचारिणा समर्पितेन भक्तेन हनूमता कथमेतवान् संभोग-शृङ्गाररसो वर्णितः द्वितीयाङ्के। कथञ्चैवं नवरसानां वर्णनं विहितम्। यद्यपि शब्दशास्त्रीयचमत्कारस्तु नास्वामिकः, किन्तु रसशास्त्रस्येयतीचर्चा विचारणीया।

(xiii) **मम मतमित्थम्**—यया भक्तिरसात्मके श्रीमद्भागवत्-दशम स्कन्धे '**महारास**' वर्णनं '**भ्रमरगीत**' वर्णनं, गोपिकाभिः सह क्रीडा वर्णानादिकं सर्वं प्रकृतिपुरुषात्मकसृष्टेर्गम्भीर विवरणं काव्यरसस्रोतश्च, भावपक्ष-कलापक्षोभयदृष्ट्यैव च विभाव्यम्। यथा-बालब्रह्मचारिणो भगवतः आद्यशङ्कराचार्यस्य '**सौन्दर्यलहरी-'आनन्दलहरी'**' नामके विश्वविश्रुतस्तोत्रे यादृशं शृङ्गाररसवर्णनं दृश्यते तथैवात्र हनुमन्नाटकेऽपि विद्यते। परिणामतः काव्य-कला निर्मितौ न किमपि बन्धनं जायते। तत्सर्वं तु कला सर्जनार्थमेव।

(xiv) सत्यामेवं स्थितौ वयमत्र प्रकृतिपुरुषात्मकस्वरूपयोः सीता रामयोर्वर्णने सकलं वस्तुजातं श्रद्धा-भक्ति-पूर्णपरमानन्दसन्दोहजनकमिति चिन्तयेम।

(xv) नाटकं नामाभिनेयं मञ्चोपयोगिदृश्यपूर्णम्। मञ्चे च कीदृशं दृश्यं दर्शनीयमित्यस्यापि नियमो नाट्यशास्त्रेऽलङ्कारग्रन्थे च। एतत् सन्दर्भेऽस्मिन् नाटके नाटकीय-वस्तुनः सर्वथाऽभावोस्ति। नटी-सूत्रधार-पारिपार्श्विक-पूर्वरङ्गादि चर्चाऽपि नास्ति। प्राकृतभाषा लेशोपि न।

(xvi) प्रवहमाना विस्तृतकाव्यधारा पाण्डित्यपूर्णा रसालङ्कार-गुण रीतियुक्ता विद्यते। फलतः नाटकनाम्नाऽभिनेयदृश्यकाव्यस्थाने महत्व पूर्णं श्रव्यकाव्यमेवेदमिति स्पष्टं तथ्यम्। इत्यपि दृश्यते यत् प्राचीननाटककाराः रूपकनिर्माणबन्धनान्मुक्ताः स्वकीयविद्यावैदुष्येण भक्ति-प्रेम, प्रवाहे प्रवहमानाः समबभूवन्।

(xvii) अभिज्ञानशाकुन्तलं विहाय, कानिचित्-भास-नाटकानि च विहाय, उत्तररामचरितं, प्रसन्नराघवं. कुन्दमाला नाटकम्, अनर्घराघवम् राघवपाण्डवीयं, बालरामायणनाटकम् , सर्वमत्र अभिनेयप्रतिकूलम्।

प्रायः प्राच्याः पाश्चात्यनाटककारवत् रङ्गमञ्चानुरूपरचनामहत्त्वं नैवाङ्गीकृतवन्तः। यदि कोऽपि तेषामभिनयं कर्तुमिच्छति तर्हि तदनुरूपमेव 'रेडियोरूपान्तरवत्' विषयवस्तु संयोजयेत्।

xviii. अतएवास्मिन् पावने नाटके-काव्ये ग्रन्थे वा केवलं नवरसानां कथं परिपाकः कथं च कथा-शैली, घटनाचक्रं चेति दर्शनीयमस्माभिः।

कथासारांशः

१. **प्रथमाङ्के**—अत्र सीतास्वयम्वरादेव कथाप्रारब्धा, यत्र जनकस्य धनुर्भङ्गः प्रतिज्ञा, रावणपुरोहितागमनं, परशुरामसम्वादादयश्च प्रथमेऽङ्के विद्यते। अत्र साक्षात् विष्णुरेव स्वयं चतुर्धा—राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न रूपेण-विभज्य दशरथपुत्रत्वमवाप।

२. **द्वितीयाङ्के**-सीतारामयोः विस्तृतं शृङ्गारादिवर्णनं कालिदासस्य कुमारसंभवे पार्वती-संभोगवर्णनतुल्यमेव। वर्णनेऽस्मिन् सीमोल्लङ्घनं दृश्यते।

३. **तृतीयाङ्के**—कैकेयाः वरदानं, रामवनगमनं भरतगमनादिकं च विद्यते।

४. **चतुर्थाङ्के**—स्वर्णमृगमृगयावर्णनं, सीताहरणवर्णनं, जटायु मरणवर्णनं चास्ति।

५. **पञ्चमाङ्के**—रामविलापः, हनूमता साक्षात्कारसुग्रीव-मैत्री, बालिबध-प्रभृति-वर्णनं च विद्यते।

६. **षष्ठाङ्के**—वानरसेनाप्रस्थानं, हनुमता-समुद्र-लङ्घनं, लङ्काप्रवेशः, लङ्कादहनं, सीतासाक्षात्कारादिवर्णनं, ततः परावर्तनवर्णनं च विद्यते।

अथ विजयदशम्यामाश्विनशुक्लपक्षे,
दशमुखनिधनाय प्रस्थितो रामचन्द्रः
"द्विरदविधुमहाब्जैर्यूथनाथैस्तथान्यैः"
कपिभिरपरिणामैर्व्याप्तभूदिक्खचक्रः। -७२

अत्राष्टादश १८ **महासंख्य**—संख्याकसैन्योल्लेखेनकथमेतेसैन्याश्चासन् इति समीक्षाऽनुसंधानविषयः।

७. **सप्तमाङ्के**—विजयदशम्यां तिथौ अष्टादशमहासंख्याकैः वानर सैन्यैः सह प्रस्थानं, विभीषणशरणागमनं, समुद्रे सेतुबन्धनादिवर्णनं वर्तते।

८. **अष्टमाङ्के**—अङ्गदस्य दौत्यं महत्त्वपूर्णं वीररसपरिपूर्णं रावणाङ्गद-सम्वादादिवर्णनं देदीप्तमस्ति।

९. नवमाङ्के—रावणाय मन्त्रिणामुपदेशः, रावणमन्दोदरी-सम्बादः, तत्र-तत्र काव्यप्रवाहवरोधिकठिनं वर्णनं च विद्यते ।

१०. दशमाङ्के रावणमायावर्णनं मुख्यमभिनेयता चात्र महनीया ।

११. एकादशाङ्के—रामस्य युद्धाय प्रस्थानं, कुम्भकर्णवधवर्णनमस्ति ।

१२. द्वादशाङ्के—मेघनादयुद्धवर्णणं, रामलक्ष्मणयोः नागपाशबन्धनं गरुडद्वारा तद्विखण्डनं, मेघनादयज्ञवर्णनं लक्ष्मणेन मेघनादबधवर्णनं च मनोहारि ।

१३. त्रयोदशाङ्के—ब्रह्मप्रदत्त-शक्तिद्वारा लक्ष्मणोपरि रावणस्यशक्ति प्रहारवर्णनं, मूर्च्छा-वर्णनं, हनुमता सञ्जीवनीलताऽनयनवर्णनं, युद्धवर्णनं चोत्कृष्टम् ।

अत्र रावणद्वारा शक्तिप्रहारवर्णनं नूतनम् ।

१४. चतुर्दशाङ्के—राम-रावणयोर्युद्ध-वर्णनं, रावणमरणवर्णनं, सीतायाः अग्निपरीक्षणवर्णनं, विभीषणस्य राज्याभिषेकवर्णनम्, अयोध्या परावर्तनवर्णनं, सीता निर्वासन-वर्णनं चमत्कारपूर्णम् ।

xix. **अत्र** पितुर्मरणवैरशोधनार्थमङ्गद-क्रोधवर्णनं, **रामेणसह-युद्धार्थसमुद्यतवर्णनं आकाशवाण्याऽग्रिम जन्मनि बालिना एव एतत्करणार्थं संकेतवर्णनमपि प्रचलितकथातो सर्वथानूतनमिति विशेषः ।**

अन्तेऽपि अस्मिन्नाटके भरतवाक्यादिकं नाटकीयं तत्वं नैव विद्यते ।

xx. गोस्वामिना तुलसीदासेन स्वकीय 'रामचरितमानसे' नाटकस्यास्य कतिपयपद्यानां यथावदनुवादं तथैव कृतं दृश्यते ।

अन्येऽपि महाकवयः काव्यादस्मात् शतशः पद्यानि नीत्वा स्वग्रंथे निवेशितवन्तः । (एतेषामतिसंक्षिप्तसूची चात्र प्रदीयते ।)

xxi. कियन्ति महत्त्वपूर्णपद्यानि चोद्धृत्यात्र प्रदीयन्ते ।

एतत् समग्रसन्दर्भ-परिप्रेक्ष्ये महानाटकं, नाटकं, काव्यमिदं **श्रद्धा-भक्ति युताः सन्तः पठनीयं मननीयं च । कियन्ति प्रमुखपद्यानि :—**

प्रथमोऽङ्कः

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य ।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥१॥

पृथ्वी स्थिरा भव भुजंगम धारयैनां
त्वं कूर्मराज तदिदं द्वितयं दधीथाः ।
दिक्कुञ्जराः कुरुत तत्त्रितये दिधीर्षां
रामः करोति हरकार्मुकमाततज्यम् ॥२१॥

भो ब्रह्मन्भवता समं न घटते संग्रामवार्तापि नो
सर्वे हीनबला वयं बलवतां यूयं स्थिता मूर्धनि ।
यस्मादेकगुणं शरासनमिदं सुव्यक्तमुर्वीभुजाम-
स्माकं भवतो यतो नवगुणं यज्ञोपवीतं बलम् ॥४०॥

द्वितीयोऽङ्कः

अङ्के कृत्वा जनकतनयां द्वारकोटेस्तलान्तात्
पर्यङ्काङ्के विपुलपुलकां राघवो नम्रवक्त्राम् ।
बाणान्यच्च प्रवदति जनः पञ्चबाणोऽप्रमाणै-
र्बाणैः किं मां प्रहरति शनैर्व्याहरन्ती जगाम ॥१०॥

पृथुलजघनभारं मन्दमान्दोलयन्ती
मृदुचलदलकाग्रा प्रस्फुरत्कर्णपूरा ।
प्रकटितभूजमूला वर्शितस्तस्यलीला
प्रमदयति पतिं द्राग्जानकी व्याजनिद्रा ॥१७॥

स्पृहयति च बिभेति प्रेमतो बालभावा-
न्मिलति सुरतसङ्गेऽप्यङ्गमाकुञ्चयन्ती ।
अहह नहि नहीति व्याजमप्यालपन्ती
स्मित मधुरकटाक्षैर्भावमाविष्करोति ॥२०॥

तृतीयोऽअङ्कः

मूर्ध्ना बद्धजटेन बल्कलभृता देहेन पादानतिं
कुर्वाणे भरते तथा प्ररुदितं तारस्वरैः सीतया ।
येनोद्विग्नविहंगनिर्गततरूर्निःसंमदश्वापदः
शैलेन्द्रोऽपि किलैष भूरिभिरभूत्साश्रुः पयः प्रस्रवैः ॥१७॥

रामादपि च मर्तव्यं रावणादपि ।
उभयोर्यदि मर्तव्यं वरं रामो न रावणः ॥२४॥

चतुर्थोऽङ्कः

ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम् ।

दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा
पश्योद्विग्नप्लुतत्त्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति ॥३॥

पञ्चमोऽङ्कः

रे वृक्षाः पर्वतस्था गिरिगहनलता वायुना बीज्यमाना
रामोऽहं व्याकुलात्मा दशरथतनयः शोकशुक्रेण दग्धः ।
बिम्बोष्ठी चारुनेत्री सुविपुलजघना बद्धनागेन्द्रकाञ्ची
हा सीता केन नीता मम हृदयगता को भवान्केन दृष्टा ॥१०॥
के यूयं वद नाथनाथ किमिदं दासोऽस्मि ते लक्ष्मणः
कोऽहं वत्स स आर्य एव भगवानार्यः स को राघवः ।
किं कुर्मो विजने वने तत इतो देवी समुद्वीक्ष्यते
का देवी जनकाधिराजतनया हा हा प्रिये जानकि ॥१५॥
हारो नारोपितः कण्ठे मया विश्लेषणभीरुणा ।
इदानीमन्तरे जाताः पर्वताः सरितो द्रुमाः ॥२५॥

षष्ठोऽङ्कः

सुवर्णस्य सुवर्णस्य सुवर्णस्य च मैथिलि ।
प्रेषितं रामचन्द्रेण सुवर्णस्यांगुलीयकम् ॥१५॥
रे रे वानर को भवानहमरे त्वत्सूनुहन्ताहवे
दूतोऽहं खरखण्डनस्य जगतां कोदण्डदीक्षागुरोः ।
मद्दोर्दण्डकठोरताडनविधौ को वा त्रिकूटाचलः
को मेरुः क्व च रावणस्य गणना कोटिस्तु कीटायते ॥२२॥

सप्तमोऽङ्कः

अथ विजयदशम्यामाश्विने शुक्लपक्षे
दशमुखनिधनाय प्रस्थितो रामचन्द्रः ।
द्विरदविधुमहाब्जैर्यूथनाथैस्तथान्यैः
कपिभिरपरिमाणैर्व्याप्तभूदिक्खचक्रः ॥२॥
जानामि सीतां जनकप्रसूतां जानामि रामं मधुसूदनं च ।
वधं च जानामि निजं दशास्यस्तथापि सीतां न समर्पयामि ॥११॥

अष्टमोऽङ्कः

यो युष्माकमदीदहत्पुरमिदं योऽदीदलत्काननं
सोऽक्षं वीरममीमरद्गिरिदरीर्योऽलीभरद्राक्षसैः ।

सोऽस्माकं कटके कदाचिदपि नो वीरेषु संभाव्यते
दूतत्वेन इतस्ततः प्रतिदिनं संप्रेष्यते सांप्रतम् ॥।।७॥
रे रे रावण हीन दीन कुमते रामोऽपि किं मानुषः
किं गङ्गापि नदी गजः सुरगजोऽप्युच्चैःश्रवा किं हयः।
किं रम्भाप्यबला कृतं किमु युगं कामोऽपि धन्वी नु किं
त्रैलोक्यप्रकटप्रतापविभवः किं रे हनूमान्कपिः ॥२४॥
कस्त्वं कस्यासि पुत्रः क्व पुनरिह गतः किं नु कृत्यं च कस्माद्
विस्पष्टं विष्टपानां विजयिनमपि मां मन्यसे त्वं तृणाय।
हं हो पौलस्त्यपुत्रस्तव बलमथनस्याङ्गदोऽहं सुवेलात्
संप्राप्तो रामदूतो विसृज जडमते जानकीं वा शिरो वा ॥२५॥
रे रे रावण रावणाः कति बहूनेतान्वयं शुश्रुमः
प्रागेकं किल कार्त्तवीर्यनृपतेर्दोर्दण्डपिण्डीकृतम्।

एकं नर्तनदार्पितान्नकवलं दैत्येन्द्रदासीगणै
रन्यं वक्तुमपि त्रपामह इति त्वं तेषु कोऽन्योऽथवा ॥३२॥
भ्राता मे कुम्भकर्णः सकलरिपुकुलव्रातसंहारमूर्त्तिः
पुत्रो मे मेघनादप्रहसितवदनो येन बद्धः सुरेन्द्रः।
खड्गो मे चन्द्रहासोरणमुखचपलो राक्षसा मे सहायाः
सोऽहं वै देवशत्रुर्भुवनविजयी रावणो नाम राजा ॥३३॥

नवमोऽङ्कः

उत्खातान्प्रतिरोपयन्कुसुमिताँश्चिन्वंल्लघून्वर्धयन्
क्षुद्राकण्टकिनो वहिर्निरसयन्विश्लेषयन्संहतान्।
अत्युच्चान्नमयन्नताँश्च शनकैरुन्नाभयन्भूतले
मालाकार इव प्रयोगचतुरो राजा चिरं नन्दते ॥३५॥

त्रयोदशोऽङ्कः

भुक्तेमयि प्रथममत्सि फलानि वत्स
सुप्ते करोषि शयनं मयि जीवति त्वम्।
प्राणाञ्जहासि सुरलोकसुखाय किं वा
सापत्नभावमिह प्रकटीकरोषि ॥१०॥
प्रोवाच कोसलसुतापुरतोद्भुतं सा
स्वप्नं च सा मुनिवसिष्ठपुरोहितस्य।

पार्श्वं नियोज्य सशरं धनुरादधानं
शान्तिं चकार भरतं मुनिराज्यहोमैः ॥२२॥

चतुर्दशोऽङ्कः

अधाक्षीन्नो लङ्कामयमयमुदन्वन्तमतर
द्विशल्यां सौमित्रेरयमुपनिनायौषधिवराम्
इतिस्मारंस्मारं त्वदरिनगरीभित्तिलिखितं
हनूमन्तं दन्तैर्दशति कुपितो राक्षसगणः ॥१॥

मनसि वचसि काये जागरे स्वप्नमार्गे
यदि मम पतिभावो राघवादन्यपुंसि।
तदिह दह ममाङ्गं पावकं पावक त्वं
सुललितफलभाजा त्वं हि कर्मैकसाक्षी ॥५४॥

वने विमोक्तुं जनकस्य कन्यां
श्रोतुं च तस्याः परिदेवितानि।
सुखेन लंकासमरे हतं माम-
जीवयन्मारुतिरात्तवरैः ॥९१॥

●

विभिन्ने काव्य-महाकाव्य-नाटकेषु हनुमन्नाटकाद्धृतश्लोकानां संक्षिप्तविवरणम् :—

१. प्रसन्नराघवे— ४।२३, २५. ७।१२, ६०, ५९; ५।१८, १९, ४५; ६।३०.
२. अनर्घराघवे— ३।२१, ३९, ४४, ४९, ५०, ५४, ६१; ४।३३, ४६, ४९,-५२. ५।३, १७; ६।१७, २७, २९, ३८, ४०, ४१, ४३, ५०, ५८, ६३, ७८, ८० ८२.
३. बाल रामायणे— १।२०, ४२, ४४, ४८; ३।२७; ४।५४, ६१; ६।३४, ३६; ७।८८; ८।८३.
४. साहित्यदर्पणे— ७।८, ३०, १०।६३.
५. महावीरचरिते— ३।२४, ३६.
६. उत्तररामचरिते— ४।२०.

७. रघुवंशे— ११।६४.
८. दशरूपके— १।४५; ४।२०, ३४.
९. भोजप्रबन्धे— २।२०.
१०. अभिज्ञानशाकुन्तले १।७.
११. ध्वन्यालोके— २।४२; ३।७२.
१२. बालमीकि सुन्दरकाण्डे—५९।३१.

एभिर्विवरणैरस्य ग्रन्थस्य नाटकस्य काव्यस्य वा महत्ता-प्राचीनता उदात्तता च प्रतीयते।

"संस्कृतगद्यमयी संक्षिप्तेयं कथा भवतां भूतये भवतात्"

परिशिष्टम्

"श्रीरामविग्रह वर्णनम्"

रामः कमलपत्राक्षः सर्वभूतमनोहरः।
तेजसादित्यसंकाशः क्षमया पृथिवी समः॥

वृहस्पति समोबुद्धया यशसा वासवोपमः।
रक्षिता जीवलोकस्य स्वजनस्य च रक्षिता॥

रक्षिता स्वस्यवृत्तस्य धर्मस्य च परन्तपः।
रामो भामिनिलोकस्य चातुर्वर्ण्यस्य रक्षिता॥

मर्यादानां च लोकस्य कर्ता कारयिता च सः।
अर्चिष्मानर्चितोऽन्यर्थं ब्रह्मचर्यव्रते स्थितः॥

साधूनामुपकारज्ञः प्रचारज्ञश्च कर्मणाम्।
राजविद्याविनीतश्च ब्राह्मणानामुपासिता॥

श्रुतवान् शीलसम्पन्नो विनीतश्च परन्तपः।
यजुर्वेदविनीतश्च वेदविद्भिः सुपूजितः॥

धनुर्वेदे च वेदे च वेदाङ्गेषु च निष्ठितः।
विपुलांसो मघवाहुः कम्बुग्रीवः शुभाननः॥

गूढ़जत्रुः सुताम्राक्षो रामो देविजनैः श्रुतः।
दुन्दुभिस्वन निर्घोषः स्निग्धवर्णः प्रतापवान्॥

समश्च सुविभक्ताङ्गो वर्णंश्यामं समाश्रितः।
त्रिस्थिरस्त्रिप्रलम्बश्च त्रिसमः त्रिषुचोन्नतः॥

त्रिताम्रस्त्रिषु च स्निग्धो गम्भीरस्त्रिषु नित्यशः ।
त्रिवलीवान् त्र्यवनतः चतुर्थऽन्यः त्रिशीर्षवान् ॥
चतुः फलः चतुर्लेखः चतुष्किष्कुः चतु. समः ।
चतुर्दश समद्वन्द्वः चतुर्दंष्ट्रः चतुर्भुजः ॥
महोष्ठ हनुनासश्च पञ्च स्निग्धोऽष्ट केशवान् ।
दशपद्मो दशवृहत् त्रिभिर्व्याप्तोद्वि शुक्लवान् ॥
षडुन्नतो नवतनुस्त्रिभिर्व्याप्नोति राघवः ।
सत्यधर्मपरः श्रीमान् संग्रहानुग्रहे रतः ।
देशकाल विभागज्ञः सर्वलोक प्रियंवदः ॥

बाल्मीकि-सुन्दरकाण्डम्,
(३५ अध्यायः श्लोकाः ८–२१)

त्रिस्थिरः—"ऊरुश्च मणिबन्धश्च मुष्टिश्च नृपतेः स्थिराः"।
त्रिप्रलम्बः—"दीर्घभ्रूवाहु मुष्कश्च चिरजीवी धनीनरः"
(मुष्कः-अण्डकोशः)

त्रिसमः—"केशाग्रं वृषणं जानु समं यस्य स भूपतिः"
त्रिषुचोन्नतः—"नाभ्यन्तः कुक्षिबक्षोभिरुन्नतैः क्षिति यो भयेत्"
त्रिताम्रः—"नेत्रान्त नख पाण्यङ्घ्रि तलै स्ताम्रैः त्रिभिः सुखी"
त्रिषुस्निग्धः—"स्निग्धाः भवन्ति वै येषां पादरेखाः शिरोरुहाः
तथा लिङ्गमणिर्येषां महाभाग्यं विनिर्दिशेत्"

गंभीरस्त्रिपुः—"स्वरे गतौ च नाभौ च गम्भीरत्रिषु शस्यते"
त्रिवलीवान्—"उदरे कण्ठे च शिरसि बलित्रय सुशोभितः"
त्र्यवनतः—"पादतल पादरेखा चुचूकाख्यस्तनाग्रभाग निम्नः"
चतुर्थऽन्यः—"ग्रीवा प्रजननं पृष्ठ हस्ते जङ्घे च पूजिते"
त्रिशीर्षवान्ः—"आवर्त त्रय विशिष्ट शीर्षः (मस्तकः)"
चतुष्फलः—"वेद चतुष्टय प्राप्तिसूचक रेखाचतुष्टययुतः"

चतुर्लेखः—"ललाटे यस्य दृश्यन्ते चतुस्त्रिद्वयेक रेखिकः शतद्वयं शतं षष्ठिः तस्यायुर्विंशतिकुमात्"

चतुष्किष्कः—"हस्तचतुष्टयोत्सेधः"

चतुः समः—"बाहु जानूरुगण्डानि समानि सुखिनां वदेत्"

चतुर्दशसमद्वन्द्वः—"भ्रुवौनासापुटे नेत्रे कर्णावोष्ठी च चूचुकौ कर्पूरे मणिबन्धौ च जानुनी वृषणौ कटी करौ पादौ स्फिजौयस्य समाज्ञेयाः स भूपतिः"

चतुर्दंष्ट्रः—"स्निग्धाः घनाश्चदशनाः सुतीक्ष्ण दंष्ट्राः-शुभाश्चतस्त्रः"

चतुर्गतिः—"सिंह शार्दूल गज वृषभतुल्यगतिः"

महोष्ठहनुनासश्च—"ओष्ठौ हनुः नासा चः = ओष्ठहनुनासं महत्-प्रशस्त्रं ओष्ठहनु नासं यस्यास्तै महोष्ठहनुनासः"

पञ्चस्निग्धः—"वाक्वक्त्र नखलोम त्वचं स्निग्धं यस्य सः"

अष्टवीशनान्—"बाहू च नलका वूरू जङ्घे चेष्टवीशङ्का (नलकौः = पिण्डिकाग्रास्थिति)

दशपद्मो—"मुख नेत्रास्य जिह्वोष्ठ तालुस्तन नखं कराः, पादौ च दश पद्मानि"

दशवृहत्—"उरः शिशे ललाटश्च ग्रीवा बाह्वंस नाभयः पादौ पृष्ठं श्रुतो चैव विशालास्ते···"

षडुन्नतः—"कक्षः कुक्षिश्च वक्षश्च घ्राणः स्कन्धः ललाटिका, सर्व भूतेषु निर्दिष्टा उन्नतास्यु सुखप्रदाः"

नवतनुः—"सूक्ष्माण्यङ्गुलि पर्वाणि केश रोमनख त्वचः शेफश्च येषां सूक्ष्माणि ते नरादीर्घ जीविनः"

त्रिभिर्व्याप्नोति—"धर्मार्थकामै र्व्याप्तः"

उपर्युक्तरामविग्रहवर्णनं यथार्थतश्चमत्कारजनकं सामुद्रिक-शास्त्र-गम्भीर गवेषणापूर्ण मद्भुतंमनोग्राहि निरन्तरं ध्येयम् ।

श्रीरामसहस्रनाम स्तोत्रम्

श्रीमहादेव उवाच

अथ वक्ष्यामि भो देवि रामनामसहस्रकम् ।
शृणुष्वैकमनाः स्तोत्रं गुह्याद्गुह्यतरं महत् ॥

ऋषिर्विनायकश्चास्य ह्यनुष्टुपछन्द उच्यते ।
परब्रह्मात्मको रामो देवता शुभदर्शने ॥

विनियोग

ॐ अस्य श्रीरामसहस्रनाममालामन्त्रस्य विनायक ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीरामो देवता महाविष्णुरिति बीजं गुणभृन्निर्गुणो महानिति शक्तिः सच्चिदानन्दविग्रह इति कीलकं श्रीरामप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ध्यानम्

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं
पीतं वासो वसानं नवकमलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् ।
वामाङ्कारूढसीतामुखकमलमिल्लोचनं नीरदाभं
नानालङ्कारदीप्तं दधतमुरूजटामण्डलं रामचन्द्रम् ॥

वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमे महामण्डपे
मध्ये पुष्पमहासने मणिमये वीरासने संस्थितम् ।
अग्रेवाचयति प्रभञ्जनसुते तत्त्वं मुनिभ्यः परं
व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतं रामं भजेच्छ्यामलम् ॥

स्तोत्रम्

सौवर्णमण्डपे दिव्ये पुष्पके सुविराजिते ।
मूलेकल्पतरोः स्वर्णपीठे सिंहाष्टसंयुते ॥ १ ॥

मृदुश्लक्ष्णान्तरे तत्र जानक्या सह संस्थितम् ।
रामं नीलोत्पलश्यामं द्विभुजं पीतवाससम् ॥ २ ॥

स्मितवक्त्रं सुखासीनं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ।
किरीटहारकेयूरकुण्डलैः कटकादिभिः ॥ ३ ॥

भ्राजमानं ज्ञानमुद्राधरं वीरासनस्थितम् ।
स्पृशन्तं स्तनयोरग्रे जानक्याः सव्यपाणिना ॥ ४ ॥

वसिष्ठवामदेवाद्यैः सेवितं लक्ष्मणादिभिः ।
अयोध्यानगरे रम्ये ह्यभिषिक्त रघूद्वहम् ॥ ५ ॥

एवं ध्यात्वा जपेन्नित्यं रामनामसहस्रकम् ।
हत्याकोटियुतो वाऽपि मुच्यते नात्र संशयः ॥ ६ ॥

ॐ रामः श्रीमान्महाविष्णुर्जिष्णुर्देवहितावहः ।
तत्त्वात्मा तारकं ब्रह्म शाश्वतः सर्वसिद्धिदः ॥ ७ ॥

राजीवलोचनः श्रीमाँश्छ्रीरामो रघुपुङ्गवः ।
रामभद्रः सदाचारो राजेन्द्रो जानकीपतिः ॥ ८ ॥

अग्रगण्यो वरेण्यश्च वरदः परमेश्वरः ।
जनार्दनो जितामित्रः परार्थैकप्रयोजनः ॥ ९ ॥

विश्वामित्रप्रियो दाता शत्रुजिच्छत्रुतापनः ।
सर्वज्ञः सर्ववेदादिः शरण्यो वालिमर्दनः ॥ १० ॥

ज्ञानभव्योऽपरिच्छेद्यो वाग्मी सत्यव्रतशुचिः ।
ज्ञानगम्यो दृढप्रज्ञःखरध्वंसी प्रतापवान् ॥ ११ ॥

द्युतिमानात्मवान् वीरो जितक्रोधोऽरिस्मर्दनः ।
विश्वरूपो विशालाक्षः प्रभुः परिवृढोदृढः ॥ १२ ॥

ईशः खड्गधरः श्रीमान् कौसल्येयोऽनसूयकः ।
विपुलांसो महोरस्कः परमेष्ठी परायणः ॥ १३ ॥

सत्यव्रतः सत्यसन्धो गुरूः परमधार्मिकः ।
लोकेशो लोकवन्द्यश्च लोकात्मा लोककृद्विभुः ॥१४॥

अनादिर्भगवान् सेव्यो जितमायो रघूद्वहः ।
रामो दयाकरो दक्षः सर्वज्ञः सर्वपावनः ॥ १५ ॥

ब्रह्मण्यो नीतिमान् गोप्ता सर्वदेवमयो हरिः ।
सुन्दरः पीतवासाश्च सूत्रकारः पुरातनः ॥ १६ ॥

सौम्यो महर्षिः कोदण्डः सर्वज्ञः सर्वकोविदः ।
कविः सुग्रीववरदः सर्वपुण्याधिकप्रदः ॥ १७ ॥

भव्यो जितारिषड्वर्गो महोदारोऽघनाशनः ।
सुकीर्त्तिरादिपुरुषः कान्तः पुण्यकृतागमः ॥ १८ ॥

अकल्मषश्चतुर्बाहुः सर्वावासो दुरासदः ।
स्मितभाषी निवृत्तात्मा स्मृतिमान्वीर्यवान्प्रभुः ॥१९॥

धीरो दान्तो घनश्यामः सर्वायुधविशारदः ।
अध्यात्मयोगनिलयः सुमना लक्ष्मणाग्रजः ॥ २० ॥

सर्वतीर्थमयः शूरः सर्वयज्ञफलप्रदः ।
यज्ञस्वरूपो यज्ञेशो जरामरणवर्जितः ॥ २१ ॥

वर्णाश्रमगुरूर्वाणी शत्रुजित्पुरूषोत्तमः ।
शिवलिङ्गप्रतिष्ठाता परमात्मा परात्परः ॥ २२ ॥

प्रमाणभूतो दुर्ज्ञेयः पूर्णः परपुरञ्जयः ।
अनन्तदृष्टिरानन्दो धनुर्वेदो धनुर्धरः ॥ २३ ॥

गुणाकरो गुणश्रेष्ठः सच्चिदानन्दविग्रहः ।
अभिवाद्यो महाकायो विश्वकर्मा विशारदः ॥ २४ ॥

विनीतात्मा वीतरागस्तपस्वीशो जनेश्वरः ।
कल्याणः प्रह्वतिः कल्पः सर्वेशः सर्वकामदः ॥ २५ ॥

अक्षयः पुरूषः साक्षी केशवः पुरूषोत्तमः ।
लोकाध्यक्षो महाकार्यो विभीषणवरप्रदः ॥ २६ ॥

आनन्दविग्रहो ज्योतिर्हनुमत्प्रभुरयः ।
भ्राजिष्णु सहनो भोक्ता सत्यवादी बहुश्रुतः ॥ २७ ॥

सुखदः कारणं कर्ता भवबन्धविमोचनः ।
देवचूडामणिर्नेता ब्रह्मण्यो ब्रह्मवर्धनः ॥ २८ ॥

संसारतारको रामः सर्वदुःखविमोक्षकृत् ।
विद्वत्तमो विश्वकर्ता विश्वकृद्विश्वकर्म च ॥ २९ ॥

नित्यो नियतकल्याणःसीताशोकविनाशकृत् ।
काकुत्स्थःपुण्डरीकाक्षो विश्वामित्रभयापहः ॥ ३० ॥

मारीचमथनो रामो विराधवधपण्डितः ।
दुःस्वप्ननाशनो रम्यःकिरीटी त्रिदशाधिपः ॥ ३१ ॥

महाधनुर्महाकायो भीमो भीमपराक्रमः ।
तत्त्वस्वरूपस्तत्वज्ञस्तत्त्ववादी सुविक्रमः ॥ ३२ ॥

भूतात्मा भूतकृत्स्वामी कालज्ञानी महावपुः ।
अनिर्विण्णो गुणग्रामो निष्कलंकः कलंकहा ॥ ३३ ॥

स्वभावभद्रः शत्रुघ्नः केशवः स्थाणुरीश्वरः ।
भूतादिःशंभूरादित्यःस्थविष्टः शाश्वतोध्रुवः ॥ ३४ ॥

कवची कुण्डली चक्री खड्गी भक्तजनप्रियः ।
अमृत्युर्जन्मरहितः सर्वजित्सर्वगोचरः ॥ ३५ ॥

अनुत्तमोऽप्रमेयात्मा सर्वात्मा गुणसागरः ।
समः समात्मा समगो जटामुकुटमण्डितः ॥ ३६ ॥

अजेयः सर्वभूतात्मा विष्वक्सेनो महातपाः ।
लोकाध्यक्षो महाबाहुरमृतो वेदवित्तमः ॥ ३७ ॥

सहिष्णुःसदगतिःशास्ताविश्वयोनिर्महाद्युतिः ।
अतीन्द्र ऊर्जितः प्रांशुरूपेन्द्रो वामनो बलिः ॥ ३८ ॥

धनुर्वेदो विधाता च ब्रह्मा विष्णुश्च शङ्करः ।
हंसो मारीचिर्गोविन्दो रत्नगर्भो महद्द्युतिः ॥ ३९ ॥

व्यासो वाचस्पतिः सर्वदर्पितासुरमर्दनः ।
जानकीवल्लभः श्रीमान् प्रकटः प्रीतिवर्धनः ॥ ४० ॥

सभवोऽतीन्द्रियो वेद्यो निर्देशो जाम्बवत्प्रभुः ।
मदनो मन्मथो व्यापी विश्वरूपो निरञ्जनः ॥ ४१ ॥

नारायणोऽग्रणी साधुर्जटायुप्रीतिवर्द्धनः ।
नैकरूपो जगन्नाथः सुरकार्यहितः प्रभुः ॥ ४२ ॥

जितक्रोधो जितारातिः प्लवगाधिपराज्यदः ।
वसुदः सुभुजो नैकमायो भव्यः प्रमोदनः ॥ ४३ ॥

चण्डांशुः सिद्धिदः कल्पः शरणागतवत्सलः ।
अगदो रोगहर्ता च मन्त्रज्ञो मन्त्रभावनः ॥ ४४ ॥

सौमित्रिवत्सलो धुर्यो व्यक्ताव्यक्तस्वरूपधृक् ।
वसिष्ठोग्रामणीः श्रीमाननुकूलः प्रियंवदः ॥ ४५ ॥

अतुलः सात्त्विकोः धीरः शरासनविशारदः ।
ज्येष्ठ सर्वगुणोपेतः शक्तिमांस्ताटकान्तकः ॥ ४६ ॥

वैकुण्ठः प्राणिनां प्राणः कमलः कमलाधिपः ।
गोवर्धनधरो मत्स्यरूपः कारूण्यसागरः ॥ ४७ ॥

कुम्भकर्णप्रभेत्ता च गोपिगोपालसंवृतः ।
मायावी व्यापको व्यापी रेणुकेयबलापहः ॥ ४८ ॥

पिनाकमथनो वन्द्यः समर्थो गरुडध्वजः ।
लोकत्रयाश्रयो लोकभरितो भरताग्रजः ॥ ४९ ॥

श्रीधरा संगतिर्लोकसाक्षी नारायणो विभुः ।
मनोरूपी मनोवेगी पूर्णः पुरूषपुङ्गवः ॥ ५० ॥

यदुश्रेष्ठो यदुपतिर्भूतावासः सुविक्रमः ।
तेजोधरो धराधरश्चतुर्मूर्तिर्महानिधिः ॥ ५१ ॥

चाणूरमथनो वंद्यः शान्तो भरतवन्दितः ।
शब्दातिगो गभीरात्मा कोमलाङ्ग प्रजागरः ॥ ५२ ॥

लोकोर्ध्वगः शेषशायी क्षीराब्धिनिलयोऽमलः ।
आत्मज्योतिरदीनात्मा सहस्रार्चिः सहस्रपात् ॥ ५३ ॥

अमृतांशुर्महीगर्तो निवृत्तविषयस्पृहः ।
त्रिकालजो मुनिः साक्षीविहायसगतिः कृतो ॥ ५४ ॥

पर्जन्या कुमुदो भूतावासः कमललोचनः ।
श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासो वीरहा लक्ष्मणाग्रजः ॥ ५५ ॥

लोकाभिरामो लोकारिमर्दनः सेवकप्रियः ।
सनातनतमो मेघश्यामलो राक्षसान्तकः ॥ ५६ ॥

दिव्यायुधधरः श्रीमानप्रमेयो जितेन्द्रियः ।
भूदेववन्द्यो जनकप्रियकृत्प्रपितामहः ॥ ५७ ॥

उत्तमः सात्त्विकःसत्यसःत्यसन्धस्त्रिविक्रमः ।
सुवृतः सुगमः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ॥ ५८ ॥

दामोदरोऽच्युतः शार्ङ्गी वामनो मथुराधिपः।
देवकीनन्दनः शौरिः शूरः कैटभमर्दनः ॥ ५९ ॥

सप्ततालप्रभेत्ता च पित्रवंशवर्धनः।
कालस्वरूपी कालात्मा कालः कल्याणदः कलिः ॥६०॥

संवत्सरोऽऋतुः पक्षो ह्ययनं दिवसो युगः।
स्तव्योविविक्तो निर्लेप. सर्वव्यापी निराकुलः ॥६१॥

अनादिनिधनः सर्वलोकपूज्यो निरामयः।
रसो रसज्ञः सारज्ञो लोकसारो रसात्मकः ॥ ६२ ॥

सर्वदुःखातिगो विद्याराशिः परमगोचरः।
शेषो विशेषो विगतकल्मषो रघुपुङ्गवः ॥ ६३ ॥

वर्णश्रेष्ठो वर्णभाव्यो वर्णो वर्णगुणोज्जवलः।
कर्मसाक्षी गुणश्रेष्ठो देवः सुखरप्रदः ॥ ६४ ॥

देवाधिदेवो देवर्षिदेवासुरनमस्कृतः।
सर्वदेवमयश्चक्री शार्ङ्गपाणी रघूत्तमः ॥ ६५ ॥

मनोगुप्तिरहंकारः प्रकृतिः पुरूषोऽव्ययः।
न्यायो न्यायी नयी श्रीमान् नयो नगधरो ध्रुवः ॥६६॥

लक्ष्मीविश्वम्भरो भर्ता देवेन्द्रो बलिमर्दनः।
वाणारिमर्दनो यज्वानुत्तमो मुनिसेवितः ॥ ६७ ॥

देवाग्रणीः शिवध्यानतत्परः परमः परः।
सामगेयः प्रियः शूरः पूर्णकीर्त्तिः सुलोचनः ॥ ६८ ॥

अव्यक्तलक्षणो व्यक्तो दशास्यद्विपकेसरी।
कलानिधिः कलानाथः कमलानन्दवर्द्धनः ॥ ६९ ॥

पुण्यः पुण्याधिकः पूर्णः पूर्वः पूरयिता रविः।
जटिलः कल्मषध्वांतप्रभजनविभावसुः ॥ ७० ॥

जयी जितारिः सर्वादिः शमनो भवभञ्जनः।
अलकरिष्णुरचलो रोचिष्णुर्विक्रमोत्तमः ॥ ७१ ॥

आशुः शब्दपतिः शब्दागोचरोरञ्जनो लघुः।
निःशब्दपुरूषो मायीस्थूलः सूक्ष्मोविलक्षणः ॥ ७२ ॥

आत्मयोनिरयोनिश्च सप्तजिह्वः सहस्रपात् ।
सनातनतमः स्रग्वी पेशलो विजिताम्बरः ॥ ७३ ॥

शक्तिमान् शङ्खभृन्नाथो गदाधररथाङ्गभृत् ।
निरीहो निर्विकल्पश्च चिद्रूपो वीतसाध्वसः ॥ ७४ ॥

सनातनः सहस्राक्षः शतमूर्त्तिर्घनप्रभः ।
हृत्पुण्डरीकशयनः कठिनो द्रव एव च ॥ ७५ ॥

सूर्यो ग्रहपतिः श्रीमान् समर्थोऽनर्थनाशनः ।
अधर्मशत्रु रक्षोघ्नः पुरूहूतः पुरस्तुतः ॥ ७६ ॥

ब्रह्मगर्भो बृहदगर्भो धर्मधेनुर्धनागमः ।
हिरण्यगर्भो ज्योतिष्मान् सुललाटः सुविक्रमः ॥ ७७ ॥

शिवपूजारतः श्रीमान् भवानीप्रियकृद्वशी ।
नरो नारायणः श्यामः कपर्दी नीललोहितः ॥ ७८ ॥

रूद्रा पशुपतिः स्थाणुर्विश्वामित्रोद्विजेश्वरः ।
मातामहो मातरिश्वा विरिञ्चिर्विष्टरश्रवाः ॥ ७९ ॥

अक्षोभ्यः सर्वभूतानां चण्डः सत्यपराक्रमः ।
बालखिल्यो महाकल्पः कल्पवृक्षः कलाधरः ॥ ८० ॥

निदाघस्तपनो मेघः शुक्रः परबलापहृत् ।
वसुश्रवाः कव्यवाहः प्रतप्तो विश्वभोजनः ॥ ८१ ॥

रामो नीलोत्पलश्यामो ज्ञानस्कन्दो महाद्युतिः ।
कबन्धमथनो दिव्यः कम्बुग्रीवः शिवप्रियः ॥ ८२ ॥

सुखो नीलः सुनिष्पन्नः सुलभः शिशिरात्मकः ।
असंसृष्टोऽतिथिः शूरः प्रमाथी पापनाशकृत् ॥८३॥

पवित्रपादः पापारिर्मणिपूरो नभोगतिः ।
उत्तारणो दुष्कृतिहा दुर्धर्षो दुःसहो बलः ॥ ८४ ॥

अमृतेशोऽमृतवपुर्धर्मी धर्मः कृपाकरः ।
भगो विवस्वानादित्यो योगाचार्यो दिवस्पतिः ॥ ८५ ॥

उदारकीर्तिरूद्योगी वाङ्मयः सदसन्मयः ।
नक्षत्रमानी नाकेशः स्वाधिष्ठानः षडाश्रयः ॥ ८६ ॥

चतुर्वर्गफलं वर्णशक्तित्रयफलं निधिः।
निधानगर्भो निर्व्याजो निरीशो व्यालमर्दनः॥ ८७॥

श्रीवल्लभः शिवारम्भःशान्तो भद्रःसमञ्जसः।
भूशायी भूतकृद्भूतिर्भूषणो भूतवाहनः॥ ८८॥

अकायो भक्तकायस्थः कालज्ञानी महापटुः।
परार्धवृत्तिश्चलो विविक्तः श्रुतिसागरः॥ ८९॥

स्वभावभद्रो मध्यस्थः संसारभयनाशनः।
वेद्यो वैद्यो वियद्गोप्ता सर्वामरमुनीश्वरः॥ ९०॥

सुरेन्द्रः कारणं कर्मकरः कर्मी ह्यधोक्षजः।
धैर्योऽग्रधुर्यो धात्रीशः संकल्पः शर्बरीपतिः॥ ९१॥

परमार्थगुरूर्दृष्टिः सुचिराश्रितवत्सलः।
विष्णुर्जिष्णुर्विभुर्यज्ञो यज्ञेशो यज्ञपालकः॥ ९२॥

प्रमुविष्णुर्ग्रसिष्णुश्च लोकात्मा लोकपालकः।
केशवः केशिहा काव्यः कविः कारणकारणम्॥ ९३॥

कालकर्ता कालशेषो वासुदेवः पुरूष्टुतः।
आदिकर्ता वराहश्च वामनो मधुसूदनः॥ ९४॥

नारायणो नरो हंसो विष्वक्सेनो जनार्दनः।
विश्वकर्ता महायज्ञो ज्योतिष्मान्पुरूषोत्तमः॥ ९५॥

वैकुण्ठः पुण्डरीकाक्षः कृष्णः सूर्यः सुरार्चितः।
नारसिंहो महाभीमो वज्रदंष्ट्रो नखायुधः॥ ९६॥

आदिदेवो जगत्कर्ता योगीशो गरुडध्वजः।
गोविन्दो गोपतिर्गोप्ता भूपतिर्भुवनेश्वरः॥ ९७॥

पद्मनाभो हृषीकेशो धाता दामोदरः प्रभुः।
त्रिविक्रमस्त्रिलोकेशो ब्रह्मेशः प्रीतिवर्धनः॥ ९८॥

संन्यासी शास्त्रतत्त्वज्ञो मंदिरो गिरिशो नतः।
वामनो दुष्टदमनो गोविन्दो गोपवल्लभः॥ ९९॥

भक्तप्रियोऽच्युतः सत्यः सत्यकीर्त्तिर्धृतिःस्मृतिः।
कारूण्यः करूणो व्यासः पापहा शान्तिवर्धनः॥१००॥

बदरीनिलयः शान्तस्तपस्वी वैद्युतः प्रभुः ।
भूतावासो महावासा श्रीनिवासः श्रियःपतिः ॥ १०१ ॥

तपोवासो मुदावासः सत्यवासः सनातनः ।
पुरूषः पुष्करः पुण्यः पुष्कराक्षो महेश्वरः ॥ १०२ ॥

पूर्णमूर्त्तिः पुराणज्ञः पुण्यदः प्रीतिवर्धनः ।
पूर्णरूपः कालचक्रप्रवर्तनसमाहितः ॥ १०३ ॥

नारायणःपरं ज्योतिः परमात्मा सदाशिवः ।
शङ्खी चक्री गदी शार्ङ्गी लाङ्गूलोमुसलीहली ॥ १०४ ॥

किरीटी कुण्डली हारी मेखली कवची ध्वजी ।
योधाजेता महावीर्यः शत्रुघ्नः शत्रुतापनः ॥ १०५ ॥

शास्त्रा शास्त्रकरः शास्त्रंशङ्करः शङ्करस्तुतः ।
सारथी सात्त्विकःस्वामी सामवेदप्रियःसमः ॥ १०६ ॥

पवनः संहितः शक्तिः सम्पूर्णाङ्गः समृद्धिमान् ।
स्वर्गदः कामदः श्रीदः कीर्तिदः कीर्तिदायकः ॥ १०७ ॥

मोक्षदः पुण्डरीकाक्षः क्षीराब्धिकृतकेतनः ।
सर्वात्मा सर्वलोकेशः प्रेरकः पापनाशनः ॥ १०८ ॥

वैकुण्ठः पुण्डरीकाक्षः सर्वदेवनमस्कृतः ।
सर्वव्यापी जगन्नाथः सर्वलोकमहेश्वरः ॥ १०९ ॥

सर्गस्थित्यन्तकृद्देवः सर्वलोकसुखावहः ।
अक्षयः शाश्वतोऽनन्तः क्षयवृद्धिविवर्जितः ॥ ११० ॥

निर्लेपो निर्गुणः सूक्ष्मो निर्विकारो निरञ्जनः ।
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तः सत्तामात्रव्यवस्थितः ॥ १११ ॥

अविकारी विभुर्नित्यः परमात्मा सनातनः ।
अचलो निश्चलो व्यापीनित्यतृप्तोनिराश्रयः ॥ ११२ ॥

श्यामी युवा लोहिताक्षो दीप्त्या शोभितभाषणः ।
आजानुबाहुः सुमुखः सिंहस्कन्धो महाभुजः ॥ ११३ ॥

सत्त्ववान् गुणसम्पन्नो दीप्यमानः स्वतेजसा ।
कालात्मा भगवान् कालः कालचक्रप्रवर्तकः ॥ ११४ ॥

नारायणः परं ज्योतिः परमात्मा सनातनः ।
विश्वकृद्विश्वभोक्ता च विश्वगोप्ता च शाश्वतः ।। ११५ ।।

विश्वेश्वरो विश्वमूर्तिविश्वात्मा विश्वभावनः ।
सर्वभूतसुहृच्छांतः सर्वभूतानुकम्पनः ।। ११६ ।।

सर्वेश्वरः सर्वशर्वः सर्वदाऽऽश्रितवत्सलः ।
सर्वगः सर्वभूतेशः सर्वभूताशयस्थितः ।। ११७ ।।

अभ्यन्तरस्थस्तमसश्छेत्ता नारायणः परः ।
अनादिनिधनः स्रष्टा प्रजापतिपतिर्हरिः ।। ११८ ।।

नरसिंहो हृषीकेशः सर्वात्मा सर्वदृग्वशी ।
जगतस्तस्थुषश्चैव प्रभुर्नेता सनातनः ।। ११९ ।।

कर्ता धाता विधाता च सर्वेषां पतिरीश्वरः ।
सहस्रमूर्धा विश्वात्मा विष्णुर्विश्वदृगव्ययः ।। १२० ।।

पुराणपुरूषः श्रेष्ठः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
तत्त्वनारायणो विष्णुर्वासुदेवः सनातनः ।। १२१ ।।

परमात्मा परं ब्रह्म सच्चिदानन्दविग्रहः ।
परं ज्योतिःपरं धाम पराकाशः परात्परः ।। १२२ ।।

अच्युतः पुरूषः कृष्णः शाश्वतः शिवः ईश्वरः ।
नित्यः सर्वगतः स्थाणू रूद्रः साक्षी प्रजापतिः ।। १२३ ।।

हिरण्यगर्भः सविता लोककृल्लोकभुग्विभुः ।
ॐकारवाच्यो भगवान् श्रीभूलीलापतिः प्रभुः ।। १२४ ।।

सर्वलोकेश्वरः श्रीमान् सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ।
स्वामी सुशीलः सुलभः सर्वगः सर्वशक्तिमान् ।। १२५ ।।

नित्यः सम्पूर्णकामश्च नैसर्गिकसुहृत्सुखी ।
कृपापीयूषजलधिः शरण्यः सर्वशक्तिमान् ।। १२६ ।।

श्रीमान्नारायणः स्वामी जगतां प्रभुरीश्वरः ।
मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नारसिंहोऽथ वामनः ।। १२७ ।।

रामो रामश्च कृष्णश्च बौद्धः कल्की परात्परः ।
अयोध्येशो नृपश्रेष्ठः कुशबालः परंतपः ।। १२८ ।।

लवबालः कञ्जनेत्रः कञ्जाङ्घ्रिः पंकजाननः ।
सीताकान्तः सौम्यरूपः शिशुजीवनतत्परः ॥ १२९ ॥

सेतुकृच्चित्रकूटस्थः शबरीसंस्तुतः प्रभुः ।
योगिध्येयः शिवध्येयः सारता रावणदर्पहा ॥ १३० ॥

श्रीशः शरण्यो भूतानां संश्रिताभीष्टदयकः ।
अनन्तः श्रीपतो रामो गुणभृन्निर्गुणो महान् ॥ १३१ ॥

एवमादीनि नामानि ह्यसंख्यान्यपराणि च ।
एकैकं नाम रामस्य सर्वपापप्रणाशनम् ॥ १३२ ॥

सहस्रनामफलदं सर्वैश्वर्यप्रदायकम् ।
सर्वसिद्धिकरं पुण्यं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ १३३ ॥

मन्त्रात्मकमिदं सर्वव्याख्यातं सर्वमङ्गलम् ।
उक्तानि तव पुत्रेण विघ्नराजेन धीमता ॥ १३४ ॥

सनत्कुमाराय पुरा तानयुक्तानि मया तव ।
यः पठेच्छृणुयाद्वापि स तु ब्रह्मपदं लभेत् ॥ १३५ ॥

तावदेवबलं तेषां मह्यापातकदन्तिनाम् ।
यावन्न ॰ श्रूयते रामनामपञ्चाननध्वनिः ॥ १३६ ॥

ब्रह्मघ्नश्च सुरापश्च स्तेयी च गुरुतल्पगः ।
शरणागतघाती च मित्रविश्वासघातकः ॥ १३७ ॥

मातृहा पितृहा चैव भ्रूणहा वीरहा तथा ।
कोटिकोटिसहस्राणि ह्युपपापानि यान्यपि ॥ १३८ ॥

संवत्सरं क्रमाज्जप्त्वा प्रत्यहं रामसन्निधौ ।
निष्कण्टकंसुखं भुक्त्वा ततो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ १३९ ॥

"आनन्द रामायणम्"
(आ० रा० ७।१।१९।१७७)

श्रीसीतासहस्रनामस्तोत्रम्

ब्रह्मणो वचनं श्रुत्वा रामः कमललोचनः।
प्रोन्मील्य शनकैरक्षि वेपमानो महाभुजः॥ १॥

प्रणम्य शिरसा भूमौ तेजसा चापि विह्वलः।
भीतः कृताञ्जलिपुटः प्रोवाच परमेश्वरीम्॥ २॥

का त्वं देवि विशालाक्षि शशाङ्कावयवाङ्किते।
न जाने त्वां महादेवि यथावद् ब्रूहि पृच्छते॥ ३॥

रामस्य वचनं श्रुत्वा ततः सा परमेश्वरी।
व्याजहार रघुव्याघ्रं योगिनामभयप्रदा॥ ४॥

मां विद्धि परमां शक्तिं महेश्वरसमाश्रयाम्।
अनन्यामव्ययामेकां यां पश्यन्ति मुमुक्षवः॥ ५॥

अहं वै सर्वभावानामात्मा सर्वांतरा शिवा।
शाश्वती सर्वविज्ञाना सर्वमूर्तिप्रवर्तिका॥ ६॥

अनन्तानन्तमहिमा संसारार्णवतारिणी।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे पदमैश्वरम्॥ ७॥

इत्युक्त्वा विररामैषा रामोऽपश्यच्च तत्पदम्।
कोटिसूर्यप्रतीकाशं विश्वक्तेजोनिराकुलम्॥ ८॥

ज्वालावलीसहस्राढ्यं कालानलशतोपमम्।
दंष्ट्राकरालं दुर्धर्षं जटामण्डलमण्डितम्॥ ९॥

त्रिशूलवरहस्तं च घोररूपं भयावहम्।
प्रशाम्यत्सौम्यवदनमनन्तैश्वर्यसंयुतम्॥ १०॥

चन्द्रावयवलक्ष्माढ्यं चन्द्रकोटिसमप्रभम्।
किरीटिनं गदाहस्तं नूपुरैरुपशोभितम्॥ ११॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
शङ्खचक्रकरं काम्यं त्रिनेत्रं कृत्तिवाससम्॥ १२॥

अन्तःस्थं चाण्डबाह्यस्थं बाह्याभ्यंतरतःपरम् ।
सर्वशक्तिमयं शान्तं सर्वाकारं सनातनम् ॥ १३ ॥

ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रयोगीन्द्रैरीड्यमानपदाम्बुजम् ।
सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोक्षिशिरोमुखम् ॥ १४ ॥

सर्वमावृत्य तिष्ठन्तं ददर्श पदमैश्वरम् ।
दृष्ट्वा च तादृशं रूपं दिव्यं माहेश्वरंपदम् ॥ १५ ॥

तथैव च समाविष्टः स रामो हृतमानसः ।
आत्मन्याधाय चात्मानमोंकारं समनुस्मरन् ॥ १६ ॥

नाम्नामष्टसहस्रेण तुष्टाव परमेश्वरम् ।
ॐ सीतोमा परमा शक्तिरनन्ता निष्कलामला ॥ १७ ॥

शान्ता माहेश्वरी नित्या शाश्वती परमाक्षरा ।
अचिन्त्या केवलानन्ता शिवात्मा परमात्मिका ॥ १८ ॥

अनादिरव्यया शुद्धा देवात्मा सर्वगोचरा ।
एकानेकविभागस्था मायातीता सुनिर्मला ॥ १९ ॥

महामाहेश्वरी शक्ता महादेवी निरञ्जना ।
काष्ठा सर्वान्तरस्था च चिच्छक्तिरतिलालसा ॥ २० ॥

जानकी मिथिलानन्दा राक्षसान्तविधायिनी ।
रावणान्तकरी रम्या रामवक्षःस्थलालया ॥ २१ ॥

उमा सर्वात्मिका विद्या ज्योतिरूपाऽयुताक्षरी ।
शान्तिः प्रतिष्ठा सर्वेषां निवृत्तिरमृतप्रदा ॥ २२ ॥

व्योममूर्त्तिर्व्योममयी व्योमधाराऽच्युतालता ।
अनादिनिधना योषा कारणात्मा कलाकुला ॥ २३ ॥

नन्दप्रथमजा नाभिरमृतस्यान्तसंश्रया ।
प्राणेश्वरप्रिया मातामही महिषवाहना ॥ २४ ॥

प्राणेश्वरी प्राणरूपा प्रधानपुरुषेश्वरी ।
सर्वशक्तिःकला काष्ठा ज्योत्स्नेन्दोर्महिमास्पदा ॥ २५ ॥

सर्वकार्यनियन्त्री च सर्वभूतेश्वरेश्वरी ।
अनादिरव्यक्तगुणा महानन्दा सनातनी ॥ २६ ॥

आकाशयोनिर्योनिस्था सर्वयोगेश्वरेश्वरी ।
शवासनाचितान्तःस्थामहेशी वृषवाहना ॥ २७ ॥

बालिकातरुणी वृद्धा वृद्धमाता जरातुरा ।
महामाया सुदुष्पूरा मूलप्रकृतिरीश्वरी ॥ २८ ॥

संसार योनिः सकला सर्वशक्तिसमुद्भवा ।
संसारसारा दुर्वारा दुर्निरीक्ष्यादुरासदा ॥ २९ ॥

प्राणशक्तिः प्राणविद्यायोगिनी परमा कला ।
महाविभूतिर्दुर्धर्षा मूलप्रकृतिसम्भवा ॥ ३० ॥

अनाद्यनन्तविभवा परमात्मा पुरुषो बली ।
सर्गस्थित्यन्तकारिणी सुदुर्वाच्या दुरत्यया ॥ ३१ ॥

शब्दयोनिश्शब्दमयी नादाख्यानादविग्रहा ।
प्रधानपुरूषातीता प्रधानपुरूषात्मिका ॥ ३२ ॥

पुराणी चिन्मयी पुंसामादिः पुरूषरूपिणी ।
भूतान्तरात्मा कूटस्था महापुरूषसंज्ञिता ॥ ३३ ॥

जन्ममृत्युजरातीता सर्वशक्तिसमन्विता ।
व्यापिनी चानवच्छिन्ना प्रधाना सुप्रवेशिनी ॥ ३४ ॥

क्षेत्रज्ञा शक्तिरव्यक्तलक्षणा मलवर्जिता ।
आनादिमायासंभिन्ना त्रितत्त्वा प्रकृतिर्गुणा ॥ ३५ ॥

महामाया समुत्पन्ना तामसी पौरूषं ध्रुवा ।
व्यक्ताव्यक्तात्मिका कृष्णा रक्तशुक्लाप्रसूतिका ॥ ३६ ॥

स्वकार्या कार्यजननी ब्रह्मास्या ब्रह्मसंश्रया ।
व्यक्ता प्रथमजा ब्राह्मी महती ज्ञानरूपिणी ॥ ३७ ॥

वैराग्येश्वर्यधर्मात्मा ब्रह्ममूर्त्तिर्हृदिस्थिता ।
जयदा जित्वरी जैत्री जयश्रीर्जयशालिनी ॥ ३८ ॥

सुखदा शुभदा सत्या शुभा संक्षोभकारिणी ।
अपां योनिः स्वयंभूतिर्मानसी तत्त्वसंभवा ॥ ३९ ॥

ईश्वरीचापि शर्वाणी शङ्करार्द्धशरीरिणी ।
भवानी चैव रूद्राणी महालक्ष्मीरथाम्बिका ॥ ४० ॥

माहेश्वरी समुत्पन्ना भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
सर्वेश्वरी सर्ववर्णा नित्यामुदितमानसा ॥ ४१ ॥

ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रनमिता शङ्करेच्छानुवर्त्तिनी ।
ईश्वरार्द्धासनगता रघूत्तमपतिव्रता ॥ ४२ ॥

सकृद्विभाविता सर्वा समुद्रपरिशोषिणी ।
पार्वती हिमवत्पुत्री परमानन्ददायिनी ॥ ४३ ॥

गुणाढ्या योगदा योग्या ज्ञानमूर्त्तिर्विकाशिनी ।
सावित्री कमला लक्ष्मीश्रीरनंतोरसि स्थिता ॥ ४४ ॥

सरोजनिलया शुभ्रा योगनिद्रा सुदर्शना ।
सरस्वती सर्वविद्या जगज्ज्येष्ठा सुमङ्गला ॥ ४५ ॥

वासवी वरदा वाच्या कीर्त्तिः सर्वार्थसाधिका ।
वागीश्वरी सर्वविद्या महाविद्या सुशोभना ॥ ४६ ॥

गुह्यविद्यात्मविद्या च सर्वविद्यात्मभाविता ।
स्वाहा विश्वम्भरी सिद्धिः स्वधा मेधा धृतिः श्रुतिः ॥

नाभिः सुनाभिः सुकृतिर्माधवी नरवाहिनी ।
पूजाविभावरी सौम्या भगिनी भोगदायिनी ॥ ४८ ॥

शोभा वंशकरी लीला मानिनी परमेष्ठिनी ।
त्रैलोक्यसुन्दरी रम्या सुन्दरी कामचारिणी ॥ ४९ ॥

महानुभावमध्यस्था महामहिषमर्दिनी ।
पद्ममालापापहरा विचित्रमुकुटानना ॥ ५० ॥

कान्ता चित्राम्बरधरा दिव्याभरणभूषिता ।
हंसाख्या व्योमनिलया जगत्सृष्टिविवर्द्धिनी ॥ ५१ ॥

निर्यन्त्रा मन्त्रवाहस्था नन्दिनी भद्रकालिका ।
आदित्यवर्णा कौमारी मयूरवरवाहिनी ॥ ५२ ॥

वृषासनगता गौरी महाकाली सुरार्चिता ।
अदितिर्नियता रौद्री पद्मगर्भा विवाहना ॥ ५३ ॥

विरूपाक्षी लेलिहाना महासुरविनाशिनी ।
महाफलानवद्याङ्गी कामपूराविभावरी ॥ ५४ ॥

विचित्ररत्नमुकुटा प्रणतर्द्धिविवर्द्धिनी ।
कौशिकी कर्षिणी रात्रिस्त्रिदशार्त्तिविनाशिनी ॥ ५५ ॥

विरूपा च सुरूपा च भीमामोक्षप्रदायिनी ।
भक्तार्त्तिनाशिनी भव्याभवभावविनाशिनी ॥ ५६ ॥

निर्गुणा नित्यविभवा निःसारा निरपत्रपा ।
यशस्विनी सामगीतिर्भवाङ्गनिलयालया ॥ ५७ ॥

दीक्षा विद्याधरी दीप्ता महेन्द्रविनिपातिनी ।
सर्वातिशायिनी विद्या सर्वशक्तिप्रदायिनी ॥ ५८ ॥

सर्वेश्वरप्रिया तार्क्ष्यी समुद्रान्तरवासिनी ।
अकलंका निराधारा नित्यसिद्धा निरामया ॥ ५९ ॥

कामधेनुर्वेदगर्भा धीमती मोहनाशिनी ।
निःसंकल्पा निरातङ्का विनया विनयप्रदा ॥ ६० ॥

ज्वालामालासहस्राढ्या देवदेवी मनोन्मनी ।
उर्वी गुर्वी गुरुः श्रेष्ठासगुणा षड्गुणात्मिका ॥ ६१ ॥

महाभगवती भव्या वासुदेवसमुद्भवा ।
महेन्द्रोपेन्द्रभगिनी भक्तिगम्यपरायणा ॥ ६२ ॥

ज्ञानज्ञेया जरातीता वेदान्तविषया गतिः ।
दक्षिणा दहना बाह्या सर्वभूतनमस्कृता ॥ ६३ ॥

योगमाया विभावज्ञा महामोहा महीयसी ।
सत्या सर्वसमुद्भूतिर्ब्रह्मवृक्षाश्रया मतिः ॥ ६४ ॥

बीजाङ्कुरसमुद्भूतिर्महाशक्तिर्महामतिः ।
ख्यातिः प्रतिज्ञा चित्संविन्महायोगेन्द्रशायिनी ॥ ६५ ॥

विकृतिः शाङ्करी शास्त्री गन्धर्वायक्षसेविता ।
वैश्वानरी महाशाला देवसेना गुहप्रिया ॥ ६६ ॥

महारात्री शिवानन्दा शचीदुःस्वप्ननाशिनी ।
पूज्याऽपूज्या जगद्धात्री दुर्विज्ञेयस्वरूपिणी ॥ ६७ ॥

गुहाम्बिका गुहोत्पत्तिर्महापीडा मरुत्सुता ।
हव्यवाहान्तरा गार्गी हव्यवाहसमुद्भवा ॥ ६८ ॥

जगद्योनिर्जगन्माता जगन्मृत्युर्जरागतिगा ।
बुद्धिर्माता बुद्धिमती पुरुषान्तरवासिनी ॥ ६९ ॥

तपस्विनी समाधिस्था त्रिनेत्रा दिविसंस्थिता ।
सर्वेन्द्रियमनोमाता सर्वभूतहृदिस्थिता ॥ ७० ॥

संसारतारिणि विद्या ब्रह्मवादिमनोलया ।
ब्रह्माणी बृहती ब्राह्मी ब्रह्मभूता भयावनिः ॥ ७१ ॥

हिरण्यमयी महारात्रिः संसारपरिवर्त्तिका ।
सुमालिनी सुरुपा च तारिणी भाविनी प्रभा ॥ ७२ ॥

उन्मीलनी सर्वसहा सर्वव्ययसाक्षिणी ।
तपिनी तापिनी विश्वा भोगदा धारिणी धरा ॥ ७३ ॥

सुसौम्या चन्द्रवदना ताण्डवा सक्तमानसा ।
सत्त्वशुद्धिकरी शुद्धिर्मलत्रयबिनाशिनी ॥ ७४ ॥

जगत्प्रिया जगन्मूर्तिस्त्रिमूर्तिरमृताश्रया ।
निराश्रया निराहारा निरङ्कुशरणोद्भवा ॥ ७५ ॥

चक्रहस्ता विचित्राङ्गी स्रग्विपि पद्मधारिणी ।
परापरविधानज्ञा महापुरुषपूर्वजा ॥ ७६ ॥

विश्वेश्वरप्रियाऽविद्या विद्युज्जिह्व जितश्रमा ।
विद्यामयी सहस्राक्षी सहस्रश्रवणात्मजा ॥ ७७ ॥

सहस्ररश्मिपद्मस्था महेश्वरपदाश्रया ।
ज्वलिनी सद्मनाव्याप्ता तैजसी पद्मरोधिका ॥ ७८ ॥

महादेवाश्रया मान्या महादेव मनोरमा ।
व्योमलक्ष्मीः सिंहस्थाचेकितान्यमित प्रभा ॥ ७९ ॥

विश्वेश्वरी विमानस्था विशोका शोकनाशिनी ।
अनाहता कुण्डलिनी नलिनी पद्मवासिनी ॥ ८० ॥

शतानन्दा सतां किर्त्तिः सर्वभूताशयस्थिता ।
वाग्देवता ब्रह्मकला कलातीता कलावती ॥ ८१ ॥

ब्रह्मर्षिर्ब्रह्महृदया ब्रह्मविष्णुशिवप्रिया ।
व्योमशक्तिः क्रियाशक्तिर्जनशक्तिः परागतिः ॥ ८२ ॥

क्षोभिका रौद्रिका भेद्या भेदाभेदविवर्जिता ।
अभिन्ना भिन्न संस्थाना वंशिनी वंशहारिणी ॥ ८३ ॥

गुह्यशक्तिर्गुणातीता सर्वदा सर्वतोमुखी ।
भगिनी भगवत्पत्नी सकला कालकारिणी ॥ ८४ ॥

सर्ववित्सर्वतोभद्रा गुह्यातीता गुहावलिः ।
प्रक्रिया योगमाता च गन्धा विश्वेश्वरेश्वरी ॥ ८५ ॥

कपिला कपिलाकान्ता कनकाभा कलान्तरा ।
पुण्या पुष्करिणी भोक्त्री पुरंदरपुरःसरा ॥ ८६ ॥

पोषणी परमैश्वर्यभूतिदा भूतिभूषणा ।
पञ्चब्रह्मसमुत्पत्तिः परमात्मात्मविग्रहा ॥ ८७ ॥

नर्मोदया भानुमती योगिज्ञेया मनोजवा ।
बीजरूपा रजोरूपा वशिनी योगरूपिणी ॥ ८८ ॥

सुमन्त्रा मन्त्रिणी पूर्णा ह्लादिनी क्लेशनासिनी ।
मनोहरिर्मनोरक्षी तापसी वेदरूपिणी ॥ ८९ ॥

वेदशक्तिर्वेदमाता वेदविद्या प्रकाशिनी ।
योगेश्वरेश्वरी माला महाशक्तिर्मनोमयी ॥ ९० ॥

विश्वावस्था वीरमुक्तिर्विद्युन्माला विहायसी ।
पीवरी सुरभी वन्द्या नन्दिनी नन्दवल्लभा ॥ ९१ ॥

भारती परमानन्दा परापरविभेदिका ।
सर्वप्रहरणोपेता काम्या कामेश्वरेश्वरी ॥ ९२ ॥

अचिन्त्याऽचिन्त्यमहिमा दुर्लेखा कनकप्रभा ।
कूष्माण्डी धनरत्नाढ्या सुगन्धा गन्धदायिनी ॥ ९३ ॥

त्रिविक्रमपदोद्भूता धनुष्पाणिः शिरोहया ।
सुदुर्लभा धनाध्यक्षा धन्या पिङ्गललोचना ॥ ९४ ॥

भ्रान्तिः प्रभावती दीप्ति पङ्कजायतलोचना ।
आद्या हृत्कमलोद्भूता परामाता रणप्रिया ॥ ९५ ॥

सत्क्रिया गिरिजा नित्यशुद्धा पुष्पनिरन्तरा ।
दुर्गा कात्यायनी चण्डी चर्चिका शान्तविग्रहा ॥ ९६ ॥

हिरण्यवर्णा रजनी जगन्मन्त्रप्रवर्तिका ।
मन्दराद्रि निवासा च शारदा स्वर्णमालिनी ॥ ९७ ॥

रत्नमाला रत्नगर्भा पृथ्वी विश्वप्रमाथिनी ।
पद्मासना पद्मनिभा नित्यतुष्टाऽमृतोद्भवा ॥ ९८ ॥

धून्वती दुष्प्रकम्पा च सूर्यमाता दृषद्वती ।
महेन्द्रभगिनी माया वरेण्यावरदर्पिता ॥ ९९ ॥

कल्याणी कमला रामा पञ्चभूतवरप्रदा ।
वाच्या वरेश्वरी नन्द्या दुर्जया दुरतिक्रमा ॥१००॥

कालरात्रिर्महावेगा वीरभद्रहितप्रिया ।
भद्रकाली जगन्माता भक्तानां भद्रदायिनी ॥१०१॥

कराला पिङ्गलाकारा नामवेदा महानदा ।
तपस्विनी यशोदा च यथाध्वपरिवर्तिनी ॥१०२॥

शङ्खिनी पद्मिनी सांख्या सांख्ययोगप्रवर्त्तिका ।
चैत्री संवत्सरा रूद्रा जगत्सम्पूरणीन्द्रजा ॥१०३॥

शुम्भारिः खेचरी श्वस्था कम्बुग्रीवा कलिप्रिया ।
खरध्वजा खरारूढा परार्ध्या परमालिनी ॥१०४॥

ऐश्वर्यरत्ननिलया विरक्ता गरूडासना ।
जयन्ती हृदगुहा रम्या सत्त्ववेगा गणाग्रणीः ॥१०५॥

संकल्पसिद्धा साम्यस्था सर्वविज्ञानदायिनी ।
कलिकल्मषहन्त्री च गुह्योपनिषदुत्तमा ॥१०६॥

नित्यदृष्टिः स्मृतिर्व्याप्तिः पुष्टिस्तुष्टिः क्रियावती ।
विश्वामरेश्वरेशाना भुक्तिर्मुक्तिः शिवामृता ॥१०७॥

लोहिता सर्वमाता च भीषणा वनमालिनी ।
अनन्तशयनाऽनाद्या नरनारायणोद्भवा ॥१०८॥

नृसिंही दैत्यमथिनी शङ्खचक्रगदाधरा ।
संकर्षणसमुत्पत्तिरंबिकोपातसंश्रया ॥१०९॥

महाज्वाला महामूर्तिः सुमूर्तिः सर्वकामधुक् ।
सुप्रभा सुतरां गौरी धर्मकामार्थमोक्षदा ॥११०॥

भ्रूमध्यनिलयाऽपूर्वा प्रधानपुरुषा बली।
महाविभूतिदा मध्या सरोजनयनासना ॥१११॥

अष्टादशभुजा नाट्या नीलोत्पलदलप्रभा।
सर्वशक्त्या समारूढा धर्माधर्मानुवर्जिता ॥११२॥

वैराग्यज्ञाननिरता निरालोका निरिन्द्रिया।
विचित्रगहना धीरा शाश्वतस्थानवासिनी ॥११३॥

स्थानेश्वरी निरानन्दा त्रिशूलवरधारिणी।
अशेषदेवतामूर्त्तिर्देवतापरदेवता ॥११४॥

गणात्मिका गिरेः पुत्री निशुम्भविनिपातिनी।
अवर्णा वर्णरहिता निर्वाणा बीजसम्भवा ॥११५॥

अनन्तवर्णाऽनन्यस्था शङ्करी शान्तमानसा।
अगोत्रा गोमती गोप्त्री गुह्यरूपा गुणान्तरा ॥११६॥

गोश्रीर्गव्यप्रिया गौरी गणेश्वरनमस्कृता।
सत्यमात्रा सत्यसन्धा त्रिसन्ध्या सन्धिवर्जिता ॥११७॥

सर्ववादाश्रया सांख्या सांख्ययोगसमुद्भवा।
असंख्येयाऽप्रमेयाख्या शून्या शुद्धकुलोद्भवा ॥११८॥

बिन्दुनादसमुत्पत्तिः शम्भुवामा शशिप्रभा।
विसङ्गा भेदरहिता मनोज्ञा मधुसूदनी ॥११९॥

महाश्रीः श्रीसमुत्पत्ति स्तमः पारे प्रतिष्ठिता।
त्रितत्वमाता त्रिविधा सुसूक्ष्मपदसंश्रया ॥१२०॥

शान्त्यतीता मलातीता निर्विकारा निराश्रया।
शिवाख्या चित्रनिलया शिवज्ञानस्वरूपिणी ॥१२१॥

दैत्यदानवनिर्मात्री काश्यपी कालकर्णिका।
शास्त्रयोनिः क्रियामूर्त्तिश्चतुर्वर्गप्रदर्शिका ॥१२२॥

नारायणी नवोद्भूता कौमुदीलिङ्गधारिणी।
कामुकी ललिता तारा परापरविभूतिदा ॥१२३॥

परांजततामहिमा बडवा वामलोचना।
सुभद्रा देवकी सीता वेदवेदाङ्गपारगा ॥१२४॥

मनस्विनी मन्युमाता महामन्युसमुद्भवा ।
अमृत्युरमृतास्वादा पुरूहूता पुरूप्लुता ॥१२५॥
अशोच्या भिन्नविषया हिरण्यरजतप्रिया ।
हिरण्या राजती हैमी हेमाभरणभूषिता ॥१२६॥
विभ्राजमाना दुर्ज्ञेया ज्योतिष्टोमफलप्रदा ।
महानिद्रा समुद्भूतिर्बलीन्द्रा सत्यदेवता ॥१२७॥

दीर्घा ककुद्मिनी विद्या शान्तिदा शान्तिवर्द्धिनी ।
लक्ष्म्यादिशक्तिजननी शक्तिचक्रप्रवर्तिका ॥१२८॥
त्रिशक्तिजननी जन्या षडूर्मिपरिवर्जिता ।
स्वाहा च कर्मकरणी युगान्तदलनात्मिका ॥१२९॥

संकर्षणा जगद्धात्री कामयोनिः किरीटिनी ।
ऐन्द्री त्रैलोक्यनमिता वैष्णवी परमेश्वरी ॥१३०॥
प्रद्युम्नदयिता युग्मदृष्टिस्त्रिलोचना ।
महोत्कटा हंसगतिः प्रचण्डा चण्डविक्रमा ॥१३१॥
वृषावेशा वियन्मात्रा विन्ध्यपर्वतवासिनी ।
हिमवन्मेरुनिलया कैलासगिरिवासिनी ॥१३२॥
चाणूरहन्त्री तनया नीतिज्ञा कामरूपिणी ।
वेदविद्या व्रतरता धर्मशीलाऽनिलाशना ॥१३३॥

अयोध्यानिलया वीरा महाकालसमुद्भवा ।
विद्याधरक्रिया सिद्धा विद्याधरनिराकृतिः ॥१३४॥
आप्यायन्ती वहन्ती च पावनी पोषणी खिला ।
मातृका मन्मथोद्भूता वारिजा वाहनप्रिया ॥१३५॥
करीषिणी स्वधा वाणी वीणावादनतत्परा ।
सेविता सेविका सेवा सिनीवाली गरुत्मती ॥१३६॥
अरुन्धती हिरण्याक्षी मणिदा श्रीवसुप्रदा ।
वसुमती वसोर्धारा वसुन्धरा समुद्भवा ॥१३७॥
वरारोहा वरार्हा च वपुः सङ्गसमुद्भवा ।
श्रीफली श्रीमती श्रीशा श्रीनिवासा हरिप्रिया ॥१३८॥

श्रीधऽी श्रीकरी कम्पा श्रीधरा ईशवीरणी ।
अनन्तदृष्टिरक्षुद्रा धात्रीशा धनदप्रिया ॥१३९॥

निहन्त्री दैत्यासिंहनां सिंहिका सिंहवाहिनी ।
सुसेना चन्द्रनिलया सुकीर्त्तिश्छिन्नसंशया ॥१४०॥

बलज्ञा बलदा वामा लेलिहानाऽमृताश्रवा ।
नित्योदिता स्वयं ज्योतिरूत्सुकामृतजीविनी ॥१४१॥

वज्रदंष्ट्रा वज्रजिह्वा वैदेही वज्रविग्रहा ।
मङ्गल्या मङ्गला माला मलिना मलहारिणी ॥१४२॥

गन्धर्वी गारुडी चान्द्री कम्बलाश्वतर प्रिया ।
सौदामनी जनानन्दा भ्रूकुटीकुटिलानना ॥१४३॥

कर्णिकारकरा कक्षा कंसप्राणापहारिणी ।
युगन्धरा युगावर्त्ता त्रिसन्ध्याहर्षवर्द्धिणी ॥१४४॥

प्रत्यक्षदेवता दिव्या दिव्यगन्धा दिवापरा ।
शक्रासनगता शाक्री साध्वी नारी शवासना ॥१४५॥

इष्टा विशिष्टाशिष्टेष्टा शिष्टाशिष्टप्रपूजिता ।
शतरूपा शतावर्त्ता विनिता सुरभिः सुरा ॥१४६॥

सुरेन्द्रमाता सुद्युम्ना सुषुम्ना सूर्यसंस्थिता ।
समीक्षा सप्रतिष्ठा च निर्वुतिज्ञानपारगा ॥१४७॥

धर्मशास्त्रार्थकुशला धर्मज्ञा धर्मवाहना ।
धर्माधर्मविनिर्मात्री धार्मिकाणां शिवप्रदा ॥१४८॥

धर्मशक्तिधर्ममयी विधर्मा विश्वधर्मिणी ।
धर्मान्तरा धर्ममध्या धर्मपूर्वा धनप्रिया ॥१४९॥

धर्मोपदेशा धर्मात्मा धर्मलभ्या धराधरा ।
कपाली शाकलामूर्त्तिः कलाकलितविग्रहा ॥१५०॥

सर्वशक्तिविनिर्मुक्ता सर्वशक्त्याश्रया सर्वा ।
सर्वेश्वरी सूक्ष्मा सुसूक्ष्मज्ञानरूपिणी ॥१५१॥

प्रधानपुरुषेशाना महापुरूषसाक्षिणी ।
सदाशिवा वियन्मूर्त्तिर्देवमूर्त्तिरमूर्धिका ॥१५२॥

एवं नाम्ना सहस्रेण तुष्टाव रघुनन्दनः ।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा सीतां हृष्टतनूरुहाम् ॥१५३॥
भरद्वाज महाभाग यश्चैतत्स्तोत्रमद्भुतम् ।
पठेद्वा पाठयेद्वापि स याति परमं परम् ॥१५४॥
ब्रह्मक्षत्रियविड्योनिर्ब्रह्म प्राप्नोति शाश्वतम् ।
शूद्रः सद्गतिमाप्नोति धनधान्यविभूतयः ॥१५५॥
भवन्तिस्तोत्रमाहात्म्यादेतत्स्वस्त्ययनं महत् ।
मारीभये राजभये तथा चोराग्निजे भये ॥१५६॥
व्याधीनां प्रभवे घोरे शत्रुत्थाने च संकटे ।
अनावृष्टिभये विप्र सर्वशान्तिकरं परम् ॥१५७॥
यद्यदिष्टतमं यस्य तत्सर्वंस्तोत्रतो भवेत् ।
यत्रैतत्पठ्यते सम्यक् सीतानामसहस्रकम् ॥१५८॥
रामेण सहिता देवी तत्र तिष्ठत्यसंशयम् ।
महापापातिपापानिविलयं यान्ति सुव्रत ॥१५९॥

अद्भु० रामा० (सर्ग २५)

श्रीहनुमत्कवचम्

"श्रीरामचन्द्रउवाच"

हनुमान् पूर्वतः पातु दक्षिणे पवनात्मजः।
पातु प्रतीच्यां रक्षोघ्नः पातु सागरपारगः॥ १॥
उदीच्यामूर्ध्वतः पातु केसरीनन्दनः।
अधस्तु विष्णुभक्तस्तु पातु मध्यं च पावनिः॥ २॥
लङ्काविदाहकः पातु सर्वापद्भ्यो निरन्तरम्।
सुग्रीवसचिवः पातु मस्तकं वायुनन्दनः॥ ३॥
भालं पातु महावीरो भ्रुवोर्मध्ये निरन्तरम्।
नेत्रे छायापहारी च पातु नः प्लवगेश्वरः॥ ४॥
कपोले कर्णमूले च पातु श्रीरामकिङ्करः।
नासाग्रमञ्जनीसूनुः पातु वक्त्रं हरीश्वरः।
वाचं रूद्रप्रियः पातु जिह्वां पिङ्गललोचनः॥ ५॥
पातु देवः फाल्गुनेष्टश्चिबुकं दैत्यदर्पहा।
पातु कण्ठं च दैत्यारिः स्कन्धौ पातु सुरार्चितः॥ ६॥
भुजौ पातु महातेजाः करौ च चरणायुधः।
नखान्नखायुधः पातु कुक्षौ पातु कपीश्वरः॥ ७॥
वक्षो मुद्रापहारी च पातु पार्श्वे भुजायुधः।
लङ्काविभञ्जनः पातु पृष्ठदेशे निरन्तरम्॥ ८॥
नाभिं च रामदूतस्तु कटिं पात्वनिलात्मजः।
गुह्यं पातु महाप्राज्ञो लिङ्गं पातु शिवप्रियः॥ ९॥
ऊरू च जानुनी पातु लङ्काप्रासादभञ्जनः।
जङ्घे पातु कपिश्रेष्ठो गुल्फौ पातु महाबलः।
अचलोद्धारकः पातु पादौ भास्करसन्निभः॥ १०॥
अङ्गान्यमितसत्त्वाढ्यः पातु पादाङ्गुलीस्तथा।
सर्वाङ्गानि महाशूरः पातु रोमाणि चात्मवित्॥ ११॥

हनुमत्कवचं यस्तु पठेद्विद्वान्विचक्षणः ।
स एव पुरुषश्रेष्ठो भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ॥ १२ ॥

त्रिकालमेककालं वा पठेन्मासत्रयं नरः ।
सर्वान् रिपून् क्षणाज्जित्वा स पुमान् श्रियमाप्नुयात् ॥१३॥

मध्यरात्रे जले स्थित्वा सप्तवारं पठेद्यदि ।
क्षयापस्मारकुष्ठादितापत्रयनिवारणम् ॥ १४ ॥

अश्वत्थमूलेऽर्कवारे स्थित्वा पठति यः पुमान् ।
अचलां श्रियमाप्नोतिसंग्रामे विजयं तथा ॥ १५ ॥

बुद्धिर्बलं यशो धैर्यं निर्भयत्वमरोगताम् ।
सुदार्ढ्यं वाक्स्फुरत्वं च हनुमत्स्मरणाद्भवेत् ॥ १६ ॥

मारणं वैरिणां सद्यः शरणं सर्वसम्पदाम् ।
शोकस्य हरणे दक्षं वन्दे तं रणदारूणम् ॥ १७ ॥

लिखित्वा पूजयेयस्तु सर्वत्र विजयी भवेत् ।
यः करे धारयेन्नित्यं स पुमान् श्रियमाप्नुयात् ॥ १८ ॥

स्थित्वा तु बन्धने यस्तु जपं कारयति द्विजैः ।
तत्क्षणान्मुक्तिमाप्नोति निगडात्तु तथैव च ॥ १९ ॥

ईश्वर उवाच

भान्विन्दोश्चरणारविन्दयुगलं कौपीनमौंजीधरं
काञ्चिश्रेणिधरं दुकूलवसनं यज्ञोपवीताजिनम् ।
हस्ताभ्यां धृतपुस्तकं च विलसद्धारावलिं कुण्डलं
विशिखं प्रसन्नवदनं श्रीवायुपुत्रं भजे ॥२०॥

यो वारांनिधिमल्पपल्वलमिवोलङ्घ्य प्रतापन्वितो
वैदेहीघनशोकतापहरणो वैकुण्ठभक्तप्रियः ।
अक्षाद्यर्जितराक्षसेश्वरमहादर्पापहारी रणे
सोऽयं वानरपुङ्गवोऽवतु सदा योऽस्मान्समीरात्मजः ॥२१॥

वज्राङ्गं पिङ्गनेत्रं कनकमयलसत्कुण्डलाक्रान्तगण्डं
दम्भोलिस्तंभसारं प्रहरणसुवशीभूतरक्षोधिनाथम् ।
उद्यल्लाङ्गूलसप्तप्रचलचलधरं भीममूर्तिं कपीन्द्रं
ध्यायेत्तं रामचन्द्रं भ्रमरद्ढकरं सत्त्वसारं प्रसन्नम् ॥२२॥

वज्राङ्गं पिङ्गनेत्रं कनकमलयसत्कुण्डलैः शोभनीयं
सर्वापीड्यादिनाथं करतलविधृतं पूर्णकुम्भं दृढं वा ।
भक्तानामिष्टकारं विदधति च सदा सुप्रसन्नं हरीशं
त्रैलोक्यत्रातुकामं सकलभुवि गतं रामदूतं नमामि ॥२३॥

वामेकरे वैरिभिदं वहन्तं परं शैलं शृङ्खलहारकण्ठम् ।
दधानमाच्छाद्य सुपर्णवर्णं भजे ज्वलत्कुण्डलमाञ्जनेयम् ॥२४॥

पद्मरागमणिकुण्डलत्विषा पाटलीकृतकपोलमण्डलम् ।
दिव्यदेहकदलीवनान्तरे भावयामि पवमाननन्दनम् ॥ २५ ॥

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम् ।
बाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम् ॥ २६ ॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥ २७ ॥

विवादे दिव्यकाले च द्यूते राजकुले रणे ।
दशवारं पठेद्रात्रौ मिताहारो जितेन्द्रियः ॥ २८ ॥

विजयं लभते लोके मानवेषु नरेषु च ।
भूते प्रेते महादुर्गेऽरण्ये सागरसंप्लवे ॥ २९ ॥

सिंहव्याघ्रभये चोग्रे शरशस्त्रास्त्रपातने ।
शृङ्खलाबन्धने चैव कारागृहनियन्त्रणे ॥ ३० ॥

कोपे स्तम्भे वह्निचक्रे क्षेत्रे घोरेसुदारुणे ।
शोके महारणे चैव ब्रह्मग्रहनिवारणम् ॥ ३१ ॥

सर्वदा तु पठेन्नित्यं जयमाप्नोति निश्चितम् ।
भूर्जे वा वसने रक्ते क्षौमे वा तालपत्रके ॥ ३२ ॥

त्रिगन्धिना वा मष्या वा बिलिख्य धारयेन्नरः ।
पञ्चसप्तत्रिलोहैर्वा गोपितः सर्वतः शुभम् ॥ ३३ ॥

करे कट्यां बाहुमूले कण्ठे शिरसि धारितम् ।
सर्वान्कामानवाप्नोति सत्यं श्रीरामभाषितम् ॥ ३४ ॥

अपराजित नमस्तेऽस्तु नमस्ते रामपूजितः ।
प्रस्थानं च करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा ॥ ३५ ॥

इत्युक्त्वा यो व्रजेद्ग्रामं देशं तीर्थान्तरं रणम् ।
आगमिष्यति शीघ्रं स क्षेमरुपो गृहं पुनः ॥ ३६ ॥

इति वदति विशेषाद्राघवे राक्षसेन्द्रः
प्रमुदितवरचित्तो रावणस्यानुजो हि ।
रघुवरपदपद्मं वन्दयामास भूयः
कुलसहितकृतार्थः शर्मदं मन्यमानः ॥ ३७ ॥

तं वेदशास्त्रपरिनिष्ठितशुद्धबुद्धिं
शर्मप्रदं सुरमुनीन्द्रनुतं कपीन्द्रम् ।
कृष्णत्वचं कनकपिङ्गजटाकलापं
व्यासं नमामि शिरसा तिलकं मुनीनाम् ॥ ३८ ॥

य इदं प्रातरुत्थाय पठेत्त्र कवचं सदा ।
आयुरारोग्यसन्तानैस्तस्य स्तव्यः स्तवो भवेत् ॥ ३९ ॥

एवं गिरीन्द्रजे श्रीमद्धनुमत्कवचं शुभम् ।
त्वया पृष्टं मया प्रीत्या विस्तराद्विनिवेदितम् ॥ ४० ॥

—आनन्द रामायणम् (८, १३)

श्रीआदित्यहृदयस्तोत्रम्

सर्व देवात्मकोह्येष तेजस्वी रश्मि भावनः ।
एष देवासुरगणाँल्लोकान् पाति गभस्तिभिः ॥ १ ॥

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः ।
महेन्द्रोधनदः कालो यमः सोमो ह्यपांपतिः ॥ २ ॥

पितरोवसवः साध्या अश्विनौ मरुतो मनुः ।
वायुर्वह्निः प्रजाःप्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः ॥ ३ ॥

आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान् ।
हरिदश्वः सहस्त्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ॥ ४ ॥

सुवर्ण सद्दशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः ।
तिमिरोत्मथनः शंभुस्त्वष्टा मार्तन्डकोऽशुमान् ॥ ५ ॥

हिरण्यगर्भः शिशिर स्तपनोऽहस्करो रविः ।
अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः ॥ ६ ॥

व्योमनाथ स्तमो भेदी ऋग्यजु- साम पारग ।
घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथी प्लवं गमः ॥ ७ ॥

आतपी मण्डली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः ।
कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः ॥ ८ ॥

नक्षत्र ग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः ।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तुते ॥ ९ ॥

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः ।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः ॥ १० ॥

जयाय जय भद्राय हर्यश्वाय नमो नमः ।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमोनमः ॥ ११ ॥

नम उग्राय वीराय सारंगाय नमोनमः ।
नमः पद्मप्रबोधाय मार्तण्डाय नमोनमः ॥ १२ ॥

ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे ।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥ १३ ॥

तमोघ्राय हिमघ्रय शत्रुघ्नायामितात्मने ।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥ १४ ॥

तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे ।
नमस्तमोभिनिघ्नाय रुचये लोक साक्षिणे ॥ १५ ॥

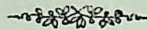
नाशयत्येष वै भूतं तमेव सृजति प्रभुः ।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः ॥ १६ ॥

एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः ।
एष चैवाग्नि होत्रं च फलं चैवाग्निहोतृणाम् ॥ १७ ॥

देवाश्च कृतवश्चैव क्रतूनां फल मेव च ।
यानिकृत्यानि लोकेषु सर्व एष रवि प्रभुः ॥ १८ ॥

एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च ।
कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघवः ॥ २९ ॥

इति वाल्मीकिरामायणे युद्धकाण्डे १०५ सर्गे रामचन्द्राय
महर्षिः अगस्त्योपदिष्टमादित्यहृदयस्तोत्रम् ॥



॥ श्रीः ॥

सीतापरित्यागसमीक्षा

विभिन्न रामायणान्तर्गत **'सीता परित्याग'** कथा भिन्न-भिन्न रुपेण विद्यते। बहुषु रामायणेषु चर्चाऽपि न दृश्यते। अत्रापि संक्षिप्त विवरणं प्रदीयते। बाल्मीकि कालादारभ्येदनींतन पर्यन्तं निरन्तरं निर्बाधरूपेण विषयेऽस्मिन् **चर्चा समीक्षा** भत विभिन्नता च श्रूयते ऽवलोक्यते च--

१. आदिकविना बालमोकिना **स्वकीय 'बाल्मीकिरामायणे'** सर्वं प्रथमं 'सीतापरित्यागकथा' कथिता। तदनु सारिणाऽन्येन रामकाव्य कविना विभिन्न शैल्यां चर्चा विहिता। महाराजः रामचन्द्रः गुप्त-चर द्वारा सीता सम्बन्धिनीं सामान्यालोचनां श्रुत्वा सर्वथा निष्पापां पतिव्रतामग्निपरीक्षापरिशुद्धां धर्मपत्नीं सीतां तत्याज। इदमपि जानन् यत सीता पूर्णगर्भाऽधुना विद्यते। बनभ्रमणव्याजेन लक्ष्मण द्वारा निर्वासिता सीता रामचन्द्रेन।

राजतन्त्रेऽपि जनतन्त्र पद्धत्या राज्यसंचालनं कुर्वन् रामः सर्वं जानन्नपि जगत्पावनकर्त्री सर्वश्रेयस्करीं सीतां निर्वासितवान् महाराजः रामचन्द्रः।

सा बालमीकिना स्वाश्रमं नीता, तत्रैव पुत्रद्वयं प्रसूतवती। तत्रैव उभौ कुमारौ शिक्षितौ संकारसम्पन्नौ बभूवतुः। राम-चन्द्रस्य यज्ञे महर्षिणा साकं तौ कुमारौ समागतवन्तौ, सीताऽपि बालमीकिना साकमेवागतवती। बालमीकिश्च सुस्पष्टरूपेण सीतां निष्कलुषां परिशुद्धां प्रमाणितवान्। सीता तत्रैव सर्वेषां समक्षं पातालं प्रविष्टा। विस्तृतेयं धटना बालमकि रामायणे र्बणिता। रामश्च क्षमां ययाच।

बालमकि रामायणस्य उत्तरकाण्डे ९६, ९७ सर्गयोरिदं र्वणितम्; यतः पद्यत्रयमेवात्रोद्धृतम्।

बाल्मीकिः कथयतिः—

इयं दशरथे सीता सुव्रता धर्मचारिणी
अपवादपरित्यक्ता ममाश्रमसमीपतः ।।
बहुवर्षसहस्त्राणि तपश्चर्या मया कृता
नोपाश्नीयां फलं तस्याः दुष्टेयं यदि मैथिली ।।

उ० का० ९६।१६,२०

रामः कथयतिः—

ज्ञेयं लोक भयाद् ब्रह्मन्नपापेत्यभिजानता
परित्यक्ता मया सीता तद् भवान् क्षन्तुमर्हति ।।

उ० का० ९७।४

(२)**बाल्मीकि निर्मिते एव 'आनन्दरामायणे'** सीतापरित्याग कथा भिन्न रुपेण विद्यते। लोकापवादं श्रुत्वा रामः जनकेन साकं परामर्शं कृत्वा सीतां बाल्मीकेराश्रमे प्रेषणार्थं लक्ष्मणमादिदेश। लक्ष्मणश्च सीतां वने विसृज्य निर्वतितः। तत्रैव सीता पुत्रद्वयं प्रसूतवती। ऋषिणा शिक्षितौ तौ रामयज्ञे वाल्मीकिना साकमागतौ, तेनैब सह सीतापि समागतवती। तां दृष्ट्वा रामो विस्मयमाप्तवान्। वाल्मीकिः सर्ववृत्तान्तं कथयामास, सीतायाः पातिव्रत्यं पवित्रतां च वर्णितवान्। एतन्मध्ये सर्वेषां सभासदमग्रे सीता पृथिव्यां प्रविष्टा। ततो रामः पृथ्वीं प्रति क्रुद्धो भूत्वा सीतां प्रत्यावर्तयितु मादिष्टवान्। पृथ्वी तथैत कृतवती।

रामश्च सीतया सह अश्वमेधयज्ञं कृतवान्। ततश्च सुचिरं सीता सहितः पुत्रपौत्रादियुक्तः राज्यं चकार।

फलतोऽस्मिन् रामायणे **"सीता-संयोगात्मिका"** कथा दृश्यते।

३. बाल्मकि निमिते **"अद्भुत-रामायणे"** सीता परित्याग चर्चा न विद्यते।

४. राजशेखरकृत **'बाल-रामायणे'** कथा समुपलब्धा।

५. हनूमता निर्मिते **हनुमन्नाटकेऽपि** 'सीता-परित्याग' कथा नैव वर्तते।

६. भगवता वेदव्यासेन निर्मिते **'अध्यात्मरामायणे'** भिन्नरीत्या कथेयं वर्णिता। तथाहि लोकापवादोद्विग्नः रामचन्द्रः सीतया सह

एकान्ते विचचार विमर्श कृत्वा बाल्मीकेराश्रमे लक्ष्मणद्वारा वनं प्रेषयामास। तत्रैव सा गर्भस्थ शिशो प्रसवः स्यादित्यपि सङ्केतितं रामेण।

पुनश्च बाल्मोकिना सहिता सीता रामसभायामागता। तत्र समुपस्थितानां देवानां ऋषीणां च समक्षमेव सीता दिव्य संकल्पवचसा मातरं पृथिवीं प्रार्थितवती, तत्क्षणमेव पृथ्वीं विदार्य दिव्य सिंहासनं प्रादुरभूतम्। तदुपरि सीता समुपविश्य पृथिव्यामन्तर्भूता।

(७) महाकवि कालिदासेन रघुवंश महाकाव्यस्य १४-१५ सर्गे बाल्मीकि वदेव घटनेय मार्मिकरूपेण वर्णिता।

(८) महाकवि भवभूते **'उत्तर-रामचरिते'** तु सीता निर्वासन सन्दर्भे कारूणिकघटनाऽइति विशिष्टरूपे विद्यते यत्र करूण रसधारा प्रवाहिता विद्यते। तत्रापि छायारूपेण सीता-संमिलनं जातम्। अत्रापि परम्परया सीतारामयोः संयोग एव।

(९) **कुन्दमाला नाटके**ऽत्यन्तकरूणरसधारां प्रवाहयन् कवि दिङ्नागाचार्यः सीतापरित्याग-कथां व्याजहार। किन्तु पुनः सीता मिलनपूर्वकं रामस्य यज्ञ सम्पन्नता **कथा सुखान्तमेव** वर्णिताऽस्ति।

(१०) **तमिल भाषायां प्रसिद्धे 'कम्बन-रामायणे'** सीता परित्यागकथैव नास्ति। तत्रतु युद्धकाण्डस्यैव पूर्वार्धोत्तरार्ध रूपेण लङ्कातोऽयोध्या प्रत्यागमन पर्यन्तमेव कथा विद्योतते।

(११) **गुजराती भाषायां** प्रख्याते **'गिरिधर रामायणे'** रजक द्वारा स्वगृहे सीतासम्बन्धे समालोचनां विज्ञाय यद्यपि रामचन्द्रेण लक्ष्मणद्वारा सीता बने निर्वासिता। तत्र च बालमीकेराश्रमे तस्याः अवस्थानं कुश लवयोर्जन्म-संस्कार पूर्वकं रामकथा ज्ञानं च विशदं विवेचितमस्ति। किन्तु बालमीकिना सह रामसभायां सीतागमनं रामद्वारा सादरं सस्नेहं च सीतायाः स्वीकरणं तथा सह पुत्राभ्यां च सह अयोध्याप्रत्यागमनं कुशलवाभ्यां यथास्थानं राज्यप्रदानवर्णनं च सविस्तारं विद्यते। अन्ते च पुनः कैकेय्याः कपटेन सीतायाः पाताल-प्रवेश कथा चास्ति। इयं कथा आनन्दरामायणानुगामिनी दृश्यते। फलतोऽत्रापि **'सीता-संयोग' रूपैव** कथा विद्यते। यतोहि

सीतायाः पाताल प्रवेशानन्तरमेव सपरिवारस्य रामस्य देहत्याग घटना वर्णिताऽस्ति ।

(१२) **कश्मीरी भाषायां रामावतार चरित नामके** रामायणे सीता परित्याग कथानैव विद्यते । किन्तु स्वकीय ननान्ह (ननद) द्वारा समुद्वेजिता सीता सहसा तिरोहिता (अन्तर्ध्यानंगता) । त्वरितमेव रामोऽपि देहं तत्याज-स्वर्गारोहणं च कृतवान् ।

(१३) **ओड़िया भाषायां 'वैदेहीविलास'** नामके सुविशदे छान्द-गीतात्मके रामकाव्ये सीता परित्याग चर्चा न विद्यते । ग्रन्थस्यान्तिमे भागे ४६ पद्ये कविता लिखितं यदियं करूण रसात्मिका घटना नैवोल्लिखिता यतोहि एतादृशी कथा विवरणं वर्जितमस्ति ।

(१४) **असमिया भाषायां 'माधवकन्दली'** नाम्नि रामायणे उत्तरकाण्डे सीता परित्याग कथा, रामयज्ञशालायां बाल्मीकेरागमनं, हनूमद्द्वारा वनात् सीताऽनयन वर्णनं, सीतायाः पातालप्रवेशवर्णनं रामस्य पृथ्वीं प्रति क्रोध वर्णनादिकं प्रायः आनन्दरामायणवत् कथा विद्यते ।

(१५) **मराठी भाषायां 'श्रीरामविजय'** नामके महति रामचरित-काव्ये सीतापरित्याग कथानु वर्तते किन्तु पुनः वनात् सीतां प्रत्यावर्त्य रामः शान्तित्येमे इति वर्णितमस्ति । फलतः **संयोगन्तेमिदं** रामकाव्यम् ।

(१६) **वंगला भाषायाः प्रख्याते 'कृत्तिवास-रामायणे'** सीता-परित्याग कथा वाल्मीकेरामश्रमेकथा तथा सीता पाताल-प्रवेश कथा च बाल्मीकिरामायणवदेव विद्यते ।

(१७) **कन्नड़ भाषाया**मतिविस्तृते **"तोरवे-रामायणे"** सीता-परित्याग कथानैव दृश्यते । राम राज्याभिषेकानन्तरं महाकाव्यमिदं सम्पूर्णम् ।

(१८) **मलयालम् भाषायां** लिखिताध्यात्म**रामायणस्योत्तर रामायणे** सीता परित्याग कथा विद्यते । बाल्मीकेराश्रमेऽवस्थान वर्णनमात्रमस्ति तत्र । नात्र लवकुश चर्चा नैव रामयज्ञ चर्चा वा ।

(१६) **मैथिली भाषायां** कवि कवीश्वर चन्द्रझा कृत **'मिथिला-**

रामायणे' बाल्मीकि रामायणवत् सीतापरित्याग-यज्ञ-वर्णनादिकं विद्यते।

(२०) **गोस्वामिना तुलसीदासेन तु स्वकीय 'रामचरितमानसे'** रामराज्याभिकान्तमेव वर्णनं व्यधायि। तत्र सीतापरित्यागादि चर्चाऽपि नास्ति।

इत्थंचोपर्युक्तविंशति **(२०) रामकाव्यामतिसंक्षिप्त** विवरणैः काश्चित् जिज्ञासाः संजायन्ते। तत्सम्बन्धे मदीया समीक्षाधारणा चेयम्।

१. चक्रवर्तिसाम्राज्यपदेऽवस्थितस्य महाराजरामचन्द्रस्य कठोरतमशासनक्रमे **'सीता-परित्याग' घटना वाल्मीकि कालत एव** महत्याश्चर्चायाः विषयेऽवलोक्यते। यस्मिन् महति वाल्मीकि रामायणे मूलतः कथेयं वर्णिता। तत्रापि स्वयं महर्षिणा बाल्मीकिना स्वकीय तपोवचोभिः सुस्पष्ट शब्दैः रामः प्रतिबोधितस्तथा अविचारितममुं कार्यं प्रति स्वकीयाक्रोशश्च प्रदर्शितः। रामेण एतदर्थं क्षमां ययाचे।

२. तदनन्तरं येषु राम काव्येषु सीता परित्याग-कथा दृश्यते तत्र सर्वत्र पृथक् शैल्यां वर्णिताऽस्मि। बहुषु रामकाव्येषु अस्याः कथायाश्चर्चाऽपि नैव विद्यते। यत्रापि विद्यते तत्रापि सद्यः परम्परया वा सीता संयोगात्मिकैव कथा विलसिता विद्यते।

३. **भारतीय काव्यपरम्परायां भव्यभावनानुरूपं वियोगान्त वर्णनं नैव श्रेयस्करं प्रेयस्करं च प्रतिपादितमस्ति।**

४. वर्तमान-परिप्रेक्ष्ये सन्दर्भे च विशेषतो घटनेयं महत्याश्चर्चायाः विषयः संजातः। तत्र च विविधरूपेण महान्तश्चिन्तकाः मनीषिणः स्वकीयसमीक्षां प्रस्तूयन्ते प्रस्तुतवन्तश्च। जागरूकोऽयं प्रश्नः ? समाधानं च नैवसुकरम्। अत्र निश्चितरूपेण किमपि कथनं न वरम्। किन्तु समीक्षा क्रमे स्वकीय भावनामपि अभिव्यक्तं कर्तुमुचितम्।

५. इदंतु सुस्पष्टतरं यत् **राजतन्त्रात्मके शासनेऽपि महाराजः रामचन्द्रः 'लोकतन्त्र-पद्धत्या' शासनं चकार।** केवलमेकस्यैव कस्यचिन्नागरिकस्य प्रतिकूलालोचनां गुप्तचरैरवगम्य लोकाराधनाय सीतां परित्यक्तवान्। महाकविना भवभूतिना कथितम् :

स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि
आराधनाय लोकानां मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा ।

६. यद्यपीदं कथितं किन्तु रामस्य सीता परित्यागानन्तरं सर्वेषु रामकाव्येषु मर्मन्तुद-विरह वेदना-व्यथा-तथा कारूणिकी । यस्याः वर्णनं सर्वथा दुष्करम् । तेनैव भवभूतिनोक्तम्––

"पुटपाक प्रतीकाशो-रामस्य करूणो रसः"

एवं कृतेऽप्यस्मिन् दारूण-कर्मणि रामस्य परितापोऽवर्णनीयोऽसह्यश्च बभूव। एतावता रामेण शीघ्रतायां सुविचारितं बिना यत् कर्म कृतं तत्तु नैव शोभनम् । "अलपस्य हेतोर्बहुहातुमिच्छन् विचार-मूढः प्रतिभासि मे त्वम्"-कविकुलगुरोः कालिदासस्यास्मिन् प्रसङ्गेऽन्यत्र कथितेयमुक्तिरत्र संघटते ।

७. लोकानुरञ्जनमेव केवलं न राजधर्मः। तत्र तु सर्वविध पौर्वापर्य्यं पर्यालोचनमपि सदैवापेक्षितम् । येनाचरणेन "यावच्चन्द्र दिवाकरौ" भूमण्डले तर्कवितर्कस्यावकाशः स्यात्तथा च "आजीवनं तेन सदुष्करेण कर्मणा व्यथितं सुतपं जीवनं यापयेत्" इति नैव हृदयग्राहि जायते ।

८. भवतान्नाम :लोकरञ्जनं राजचरित्रोज्ज्वलता वा किन्तु सामान्यरूपेण मानवोचित कर्तव्यमपि तु वर्तते ! लङ्का परावर्तनकाले तत्र देवादि समक्षमग्निपरीक्षिताऽकलुषा सर्वश्रेयस्करी सीता कथं सहसा वेगेन लक्ष्मणम् अध्यादेश (Ordinance) रूपे छलेन व्याजेन सीता परित्यागार्थमादिष्टो रामचन्द्रः इति न मनसि विभाव्यते ।

९. रामचन्द्र समक्षं तेषां **पितामहस्य 'अजस्य'** चरित्रं दृष्टान्त-त्वेनासीत् यत् 'अजस्य' पत्नी दशरथस्य जननी 'इन्दुमती' सहसा दिवंगता। तस्याः वियोगे अजः अवधराज्यं स्वपुत्राय दशरथाय प्रदाय स्वयं बनं जगाम ।

१०. यदि रामचन्द्रः वाह्याभ्यन्तरो 'भय-विधिना निश्चितरूपेण जानातिस्म यत् सीता सर्वथाऽपापा निष्कलुषा पतिव्रताऽस्ति तर्हि कस्यापि कथनेन राज्ञा रामेण कथं-तथा व्यधायि इति चिन्तनीयः प्रश्नः ?

११. तिष्ठतु नाम विष्णोरवतारो रामः। तद्रूपेतु रामकाव्य परिशीलनं नैव विद्यन्ते। मर्यादापुरूषः कर्तव्यनिष्ठः सर्वगुणोपेतः महामहिमशाली दाशरथिः रामः इति बुद्धया एव कापी समीक्षा, किमपि चिन्तनं क्रियते रामकाव्य मर्मज्ञैः।

१२. आधुनिकैस्तु नारी प्रपीड़नोपेक्षा-परिप्रेक्ष्येऽपि यद्यपि घटनेयं दृश्यते विचार्यते च। किन्तु नेदं तथ्यं मम मते। न केवलं भारत भूभागेऽपितु समस्तेऽस्मिन् विश्वस्मिन् समुपलब्धरामकाव्येषु राम-द्वारा-नारी-समर्चा-ममाराधना सुविहिता विद्यते।

मयातु सर्वथाऽनुमीयतेऽनुभूयते च यदियं घटना केवलं स्वोत्कर्ष-प्रदर्शनार्थमेव सहसाऽविचारिता विहिता राज्ञा रामचन्द्रेण।

१३. यतोहि रजकालोचना श्रवणानन्तरं **"यदि राजा रामचन्द्रः भरताय राज्यं प्रदाय सीतया सह स्वयमेव वनमगमिष्यत् तर्हि सर्वथा लोक-वेदोमय रक्षणं रञ्जनं चाभविष्यत्।"** नारी प्रपीडनो-पेक्षाक्षेपोऽपि नायास्यत्। नापि तर्क वितर्कस्यावकाशः स्यात्। एवं हि चरित्रे च महती समुत्कृष्टतासमेधमानाऽभविष्यत्।

१४. इत्थ हि घटनामिमां सर्वथा स्तुत्य रूपेणग्रहीतुं समीक्षकाः मर्मज्ञाः सामान्यज्ञानयुताः जनाश्चबाध्याः अभविष्यन् नात्र कश्चन सन्देहः। न च रामचरिते किमपि केनापि रूपेणलाञ्छनं स्यात्।

"काश्चित् महत्त्वपूर्णाः सूक्तयः"

"बाल्मीकि रामायणात्"

यस्यत्वेतानि चत्वारि वानरेन्द्र यथा तव ।
धृतिर्दृष्टिर्मतिदाक्ष्यं स कर्मसु न सीदति ॥

(सु. का. १।२००)

यः समुत्पतितं क्रोधं क्षमयैव निरस्यति ।
यथोरगस्त्वचं जीर्णां स वै पुरुष उच्यते ॥

(सु. का. ५५।६)

धिगस्तु खलु मानुष्यं धिगस्तु परवश्यताम् ।
न शक्यं यत् परित्यक्तुमात्मच्छन्देन जीवितम् ॥

(सु. का. २५।२०)

कार्ये कर्मणि निर्वृत्ते यो बहून्यपि साधयेत् ।
पूर्व कार्याविरोधेन स कार्यं कर्तुं मर्हति ॥
नह्येकः साधने हेतुः स्वल्पस्यापीह कर्मणः ।
योह्यर्थं बहुधा वेद स समर्थोऽस्ति साधने ॥

(सु. का. ४१।५, ६)

भुवन वाणी ट्रस्ट (पञ्जीकृत)

मौसम बाग (सीतापुर रोड)

लखनऊ-२२६०२०

सेवा में,

श्री पं० आद्याचरण झा

पूर्व प्रति कुलपति,

ग्रा०, पो०-मंगरौनी,

जिला-मधुबनी (बिहार)

आदरणीय,

२-२-८८ का कृपापत्र तथा 'भारतीय वाङ्मयेषु राम-कथा-वर्णनम्' परियोजना की संक्षिप्त रूपरेखा की प्रति प्राप्त हुई। अवश्य आपने हमसे ग्रन्थ मंगाये थे। मध्यप्रदेश को पत्र भी लिखा था, भले ही वहाँ की प्रतिक्रिया उपेक्षा की रही जो शासन की परिपाटी है। आपकी योजना अलौकिक और अलौकिक से अधिक कल्पनातीत साहस को देखकर मन मुग्ध हो गया।

यही नहीं, हम जैसे अपंग की भावना को आपने साकार कर दिया। हमारे कार्य के दो पक्ष हैं। आदिम तो सानुवाद निप्यन्तरण और बाद में दूसरा-'संस्कृत वाङ्मय' को जन-सामान्य में प्रविष्ट करने की सामग्री का प्रस्तुतीकरण।

प्रथम की भूमिका इस प्रकार है। समाज की सेवा में सहज रुचि जन्मजात होने के फलस्वरूप अपनी सामान्य स्थिति से निस्तार कभी न पा सके, परन्तु सुख-सन्तोष भगवान ने उसी में दिया। अतः जीवन का दूसरा अध्याय स्वराज्य प्राप्ति के बाद आरम्भ होता है। ध्यान गया कि सतयुग से वर्तमान युग तक, भारत अथवा बृहत्तम भारत, धार्मिक और सांस्कृतिक इकाई तो रहा परन्तु स्थायी रूप में राजनैतिक इकाई कभी नहीं रहा। वह अवसर, धरा के प्राप्त इतिहास में सर्वप्रथम स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद ही मअस्सर हुआ।

अतः स्वाधीनता के बाद के भारत में एक राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि की आवश्यकता की ओर ध्यान गया। अवशिष्ट भारत भी विशाल ही कहा जायगा। उसमें अनेक भाषाओं एवं उनमें पुरातन पवित्र वाङ्मय का होना स्वाभाविक है। अतः उसकी अक्षुण्ण रखते हुए, सारे राष्ट्र को जोड़ने के लिए एक राष्ट्रभाषा एवं राष्ट्रलिपि का होना अनिवार्य था। संस्कृत का ज्ञाता न होते हुये भी, देवभाषा संस्कृत ही उसके उपयुक्त थी, यह मेरी समझ में आया।

किसी समय आर्य प्रदेश भारत की जन-भाषा संस्कृत थी। जिन देशों में विद्वानों तक ही संस्कृत सीमित थी वहाँ की जनता भिन्न-भिन्न अपभ्रंशों की शैली में काम चलाती थी। ऐसे क्षेत्र ही आर्य-प्रदेश के बजाय म्लेच्छ देश कहे जाते थे। आज भारत का स्वरूप म्लेच्छ देश जैसा है, जहाँ कतिपय विद्वान् तो संस्कृत के हैं, जनता नाना बोलियों में विभक्त है। यदि संस्कृत को राष्ट्रभाषा का रूप दिया गया होता तो म्लेच्छ देश न रहकर आर्य देश हो जाता और आज भी संस्कृत-वाङ्मय की रत्नराशि जन-जन में व्याप्त होती। देश में भाषाई बिघटन के भी अंकुर न फूटते। इस्राइल जैसे छोटे देश ने सहस्राब्दियों से भूली-बिसरी अिब्राती को अनिवार्य रूप से प्रतिष्ठित कर दिया तो संस्कृत जैसी सरल, एकरूपा सदाबहार भाषा को कठिन कहना नादानी ही तो है। देश का गौरव जाग उठता। विश्व को नये सिरे से यह नई देन होती।

डा० कैलाशनाथ काटजू, ओड़िसा के श्री विश्वनाथ दास जैसे मनीषियों ने संस्कृत को राष्ट्र भाषा बनाने का बड़ा जोर लगाया परन्तु हिन्दीवालों के उन्माद ने नहीं चलने दी। यह आभास पहले से ही हो जाने के कारण, अकिंचन ने भाषा नहीं, नागरी लिपि को लक्ष्य स्थापित कर सभी देशी-विदेशी भाषाओं के श्रेष्ठ वाङ्मय को नागरी लिपि में, उनकी विशिष्ट ध्वनियों को दर्शाते हुए यथावत हिन्दी अनुवाद सहित प्रस्तुत करने का सङ्कल्प लिया। राष्ट्र भाषा का भण्डार भरे, भारत को सभी भाषाओं का अपूर्व साहित्य अपने क्षेत्रों में अपनी लिपि में और शेष राष्ट्र में नागरी कलेवर में व्याप्त हो जाय। एक राष्ट्र की एक ज्ञान सम्पत्ति। भगवान की कृपा हुई, संत्रस्त पंगु को भी वरदान दिया। राम काव्य ही सारे राष्ट्र में

सर्वाधिक लोकप्रिय है। अतः रामायणें स्वतः आ गई, हम नहीं लाये। संलग्नक (क) में नागरी लिपि पर विवरण, और (ख) में अब तक की उपलब्धि अवलोकनार्थ प्रस्तुत है।

बीच में संस्कृत का मोह नहीं छूटा। संस्कृत-वाङ्मय की हिन्दी अनुवाद सहित लाने की बात सर्वत्र तथा मेरे भी ध्यान में आती रही। सामान्य सा किया भी। किन्तु 'मानस भारती', यह अकेली आपकी सूझ का प्रारूप अचेतन में हम तक पहुँच गया। तुलसी संस्कृत-अभिमानियों द्वारा प्रपीड़ित रहे। अतः उनके काव्य की पंक्ति-अनुपंक्ति संस्कृत में प्रविष्ट करके, एक नई विधा आरम्भ की जाय। दैवयोग की वह उपक्रम सुन्दर बन गया।

आज तीन वर्ष पूर्व संस्कृत विद्यालयों की तथा डिग्रीधारी विद्यार्थियों की दशा देख कर भावना ने फिर जोर मारा और तब संस्कृत का यह दूसरा स्तम्भ कायम किया। तदर्थ देखिये संलग्न (ग)।

शासन द्वारा संस्कृत पर अपार व्यय, विद्यालयों की अगणित संख्या, परीक्षा हेतु धर-पकड़कर विद्यार्थि और शास्त्री-आचार्यों की बौछार। फिर भी संस्कृत का लोप हो रहा है। यही दशा रही तो अगली दो पीढ़ी में संस्कृत की वही स्थिति होगी, जो आज पाली-प्राकृत की है। इसे अनहोना कौतुक न समझिये। भूलने की बात नहीं है। अभी कल स्वतंम्त्रता मिली है और सुदूर ग्रामाञ्चलों तक में धोती पहनना भूल गये।

यह भी ध्यान आया कि सम्प्रदाय-मुक्त एक मात्र मानवग्रन्थ वेद को धरोहर रखने वाले ही नहीं पहचानते। केवल नाममात्र जानते हैं। बिना पंक्ति भेद, सबको पठनीय, जनता संस्करण चारों वेदों का, यह बोझिल कार्य हो रहा है। आशीर्वाद दीजिये।

अब आता है आपका आयोजन। यह बिलकुल नया है और परम आवश्यक है। संस्कृत को बचाने वाला यह सरल और अकेला मार्ग है। संस्कृत के अनुवाद मूलपाठ सहित प्रस्तुत करना भी अति आवश्यक है, पुराना चलन है। परन्तु संस्कृत को जन-जन तक पैठालना इसके लिये आपका यह नया दीपक अद्भुत है।

मानस भारती करते समय-कुछ ऐसा ही विचार था-परन्तु वह धुंधला सा। आपने नई मशाल उठाई है। भगवान बल दे।

शासन का बल तो सर्वोपरि है ही। जब योग्य और प्रभावों सचिवों का सहयोग होगा तो धन की सहायता तो प्रमुख है ही। परन्तु यत्न कीजिये कि वह सरल संस्कृत नूतन गद्य काव्य किसी प्रकार आंशिक ही सही पाठ्यक्रमों में आवे। जनता में संस्कृत की पैठ हो। देश की विचार-विधा ही बदल जायगी। ईश्वर आपको, इस पद्धति के सूत्रधार को सफलता दे।

संस्कृत-विद्वान अनुवादकों से भी प्रार्थना है कि वे रचना को सरल से सरल अति सरल बनावें ताकि सामान्य व्यक्ति भी पढ़कर कुछ पाता जाय। अपने पाण्डित्य को भूल जायँ। राम का सर्वविदित कथानक तो सहायता करेगा ही।

८१ वर्ष अप्रैल में समाप्त हो रहा है। गत दो वर्षों से हृदय-रोग ने अपना लिया है। दो-दो माह दोनों साल शय्याग्रस्त होना पड़ा। काम तो कर ही रहे हैं। परन्तु आपकी योजना से बड़ी प्रसन्नता हुई।

ट्रस्ट पर भार बड़ा है, योजना बड़ी श्रमशील और व्ययशील है। परन्तु आपके वाणीयज्ञ में पत्र-पुष्प भी न दे सकें तो यह कौन सुख होगा। भुवन वाणी ट्रस्ट १००१/- रु० की राशि प्रस्तुत करेगा। कृपया लिजिये किस नाम पते पर ड्राफ्ट भेजा जाय।

बड़े ग्रन्थ को छोटे खण्डों में भी रखें। घर में रखना-पढ़ना धर्म समझा जाय, किसी ऐसे जनान्दोलन पर सोचिये। वह स्वाध्याय, गृहस्थ का एक अनिवार्य पवित्र दैनिक कर्तव्य बन जाय। हम तो सोचते ही रह गये और समाप्ति के निकट आ गये। देखिये, भगवान् किसी को प्रकट करें।

भवदीय

नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति

भुवन वाणी ट्रस्ट

I have to say :—

I. Bharatiya Vanmayesu Ramakatha Varnanam project's description aims and the views of some scholars are given in short in Hindi, and English, in the following pages. Please see and think.

II. Endless like sky and calm like sea, the project may achieve success by the grace of ommipotent Rama. There is no other way, no, other helper.

III. I had observed in the preface that the Srimad Valmiki Ramayana's Ramakatha is the main basis and banking on the story of Valmiki Ramayana the analysis and illustration of all Indian literatures Ramakatha will be presented. This was also the view of all scholars.

IV. When there will be dissimilarity with that of Valmiki then that will be indicated with necessary references and reasonable causes there of.

V. In this way in the first phase descriptive account of the Valmiki R., Ananda R., Adhyatma R., Adbhut R. and Bal Ramayana will be mentioned in volume I in simple Sanskrit prose. This vol. Will also include a list of books related to Ramakatha.

VI. This work is too vast, hectic, time exorbing expensive. Knowing all these I had began this severe project. Only the blessing of god is helper.

VIII. Appealing Scholars, general citizens, high educational institutions, university Grants Commission

etc. to Letter they will support the project or not, I donot know.

Advices regarding the project are invited.

VIII. I start this great sacrifice (mahayajna) in the name of Karunanidhana, adarsacaritanayaka lord Ramachandra.

IX. Send just proper, unbiased guidance.

Adya Charan Jha
Chief Editor
&
Project Chairman.

BHARATIYA VANMAYESU RAMAKATHA VARNANAM PROJECT INTRODUCTORY-NOTE

by

Adyacharan Jha

I am expressing my views regarding the Bharatiya Vanmayesu Ramakatha Varnanam Project.

In my early youth I got the opportunity of reading the Sundarakanda of Tulsi Ramayana, which was in the syllabus when I was a Madhyama student, and thence forward the Dohas and Caupais impressed me. Afterwards a curiocity arose to read the whole Ramayana and gradually I read it.

After this, hearing from some respectable and virtuous persons that all the wishes are achieved by the recitation of Sundra kanda of Valmiki Ramayana, I began the chanting of the Sundarakanda of Valmiki, primarily only one chapter & later on three every day. I performed the chanting of the whole Sundarakanda in a days about 25 times in student age, and the recitation of 3 chapters every day is coutinuing till present time. This is the basic source of affection towards the Ramakatha. Hence in the protracted journey of life I had the opportunity of hearing and reading hundreds of Ramakathas in different languages, and my interest in Ramakatha increased deeply.

In this regard I want to decipher that enamour of my bereaved wife Indrakala Jha towards Ramakatha also became an inspiring element. And this huge

project is also an attempt to give a permanent shape to her memory and to pay an endless affectionate reverence to her.

I have felt that in different Indian languages Ramakathas are imbued in different ways. All have mentioned both protacted and concise Ramakathas. That is present in different sanskrit epics, plays, stories beginning from the Ramayana of Valmiki to Ananda, Adbhut, Adhyatma and Bala Ramayanas. Apart from this in Hindi since Tulasi's Ramacarita Manasa it is mentioned in hundreds of kavyas, Khanda-kavyas and stories. Llong with this the Ramayana and Ramakatha have a large literature in Bengali, Maithili, Marathi, Gujarati, Telugu, Kannada, Malayalama, Kashmiri and Tamil in which Tamil's huge kamba Ramayana, full of qualities, is splendouring the world like Valmiki and Tulasi Ramayanas. Apart from this in Urdu & Persian many Ramakatha books are available. A number of writings are present in southeast Asian countries also.

An idea awoke in my mind that is a critical and analytical Ramakatha, which is extended like ocean, be written in simple and understandable Sanskrit, that will be good for myself and the whole nation as well. Abiding this idea I decided to do this great hectc and tiresome work though not impossible. Accordingly an article entitled 'Bhartiya Vanmayesu Ramakatha Varnanam Pariyojana' was published in Visvamanisa magazine of KSDSU and sanskrit Sammelanam magazine published from Patna city.

Side by side I contacted persons interested in Ramakatha. My old friend Veteran critic and Director of A. I. R. Darbhanga, Sri Chaturbhuja told me that the Bhuvan publication, Lucknow had published all types of available Ramakatha meterials of Indian and some of the foreign languages in their original forms and a translation there of in Hindi. Immediately I contacted there and received the reply within ten days, and purchased some important publications. In collection of these books, the sympathy of my boyhood friend Dr. Jayamanta Mishra who is the co-ordinator of this project, was with me and which will continue. I also purchased certain books according to my financial suitablity besides this.

I am the life-long subscrber of Manasa Bharati, basically a Ramakatha journal publishing from Bhopal, The introduction of a foresaid magazine was owing to the close contact with my respectable friend Dr. Prabhu Dayal Agnihotri. After reading some sensitive articles related to Ramakatha my deceased wife requested me for life long subscription, and I did. Here I do not mean improper to tell that in 1984 January she spent her aching time smiling on the bed of the nursing home of the world famed hospital of Vellore (Tamilanadu reading Manasa Bharati's issues.

I had contacted some of the authors whose articles were published in Manasa Bharati.

In this way I, without consulting anyone, mentally decided to do this big work (mahayajna). Now it (help) depends upon my brother, sons, daughters

and children. Besides this it depends upon the help and advices of my vast friend circle extended not only in this state but in different part of the country.

In short my conception is following :

1. Valmiki Ramayana is the basis of all Ramakathas of Indian languages like the Asvatha tree of Gita and developed in different branches.

II. Among these Ramayanas Valmiki R., Ananda R., ꓕdbhut R., ꓕdhyatma R., and Bala Ramayana are important. In addition to these more than fifty Ramayanas are available in Sanskrit. The scatered vast Ramakathas of these Ramayanas will be collected, mentioning their dissimilarities, minute study will be given in prose form of Sanskrit (with references of verses as needed) in volum I.

After this the collection of the Ramakathas of dramas, epics, khandakavyas and stories which is the lagacy of Indian emotion will be presented. This second volume will be also not less than 1500 pages.

III. Next, from Tulasi's Ramacarita Manas and Vinayapatrika to present day's Hindi Ramakathas classified in sanskrit form will be the third volum. This, too, will be not less than 1500 pages.

Afterwards, in volume IV a classified sanskrit description of Maithili, Bengali, Bhojpuri, Marathi, Gujrati, Telugu, Malayalam, Kannada, Tannada, Tamil and Kashmiri Ramayanas will be presented. The limitation of page-numbers of this volume has not been guessed. This might be in sevaral parts.

V. And volume V, along with mentioning the Urdu and Partian Ramakathas, will also include the projects concluding version and tenets as a guideline of the journey of life.

In this way I had presented an outline of my hypothesis In my phenomenon this Ramakatha is like endless blue sky and ocean with hightides.

Now the matter of thinking is the solvence of financial side and what is necessary to do on state level. In this regard my experienced friends and family members will express their views.

Finally, this is to say that by the grace of god and with the help and advices of yours this work will be like the symbol, of, jahi vidhi rakhe Rama.

ILLUSTRATION OF RAMAKATHA OF INDIAN LANGUAGES

An important meeting of the '*B*hartiya Vanmayesu Ramakatha Varnanam' project's executive committee, advisory committee and special invited scholars was held today. 9.10.85, at 4 P. M., at the Darbhanga residence of Pt. Adya Charan Jha, the Provicechancellor of Kameshwar Singh Darbhanga Sanskrit University. On this ocasion garlands were offered to the photograph of Pt. Jha's deceased wife, Mrs. Indrakala Jha from whose inspiration this project began.

The meeting stared with the recitation of Vedic psalms by Dr. Upendra Jha, Assistant Professor of the P. G. Deptt. Pt. Adya Charan Jha presented a short description of the huge project and requested the present scholars for further guidance.

Dr. Prabhu Dayal Agnihotri, former V. C. of Jobalpore University (M. P.), said that the work to complete the huge project like this needs large amount of money, energy and time. There are so many literature (prose, poetry, campu) related to Rama. In Hindi alone more than hundred Kavyas are written beginning from Hariaudha including Rambriksha Benipurits Sita ki. Katha. If we publish only ten thousand pages it will cost 5 lakh Rs. Besides authors will be given remunerations and the scattered Ramakatha materials should be collected. A list of scholars and linguists should be prepared. Only anxiety will not fulfill the work. He further said that sanskrit lacks

that type of critical approach which the readers want today. Furthermore Ramakathas have many variations and the co-ordination of all views is not less difficult. Patiala has Mata Kausalya temple, in Amritsar a Valmiki fair takes place. The people of Punjab regard Kausalya and Valmiki Punjabi. The Buddhists of Sri Lanka beat Tamils and say them fiends (raksasas). There is a confusion about the location of Lanka. We say the upper villages lanka in M. P. K. Agnihotri advised the collection of fund from different sources for this huge project and expressed his life long help's assurance to this project.

Dr. Vidhata Mishra, Prof. & Head of the Post-Graduate Department of Vyakarana & Philology, describing certain sources of Ramakatha said about the necessity of the collection of these materials. He informed that 28 Ramayanas were compiled before Tulsi. Recently Prof. V. C. Pathak of Gorakhapur University has worked on the different places depicted in the Ramayana. He said. help should be taken from the Indian Literature' published by National Book Trust, New Delhi He further said ws should stress on the illustration of the merits of the character of Ramayana's personalities. Thousands of Kavyas had came into existence from different Ramayanas, Three in Pali, three in Prakrita and setubhandha Ramayana in Apabhramsa are available. In Bengal we have 6-7 Ramayanas excluding that of Krittavas Ojha. In Assam we found Smkaradeva's Ramayana. Dr. Kailash Chandra Bhatia, under the U. G. C. scheme of Meerut University, has recently surveyed the Ramakavya in

8 yrs. Dr. Vidya Niwas Mishra (Agra) has surveyed the Ramakavya of Thailand and other countries.

Sir Chaturbhuja, Director, AIR, Darbhanga, after describing different Rama stories said that the literature related to Rama is an ocean and stressed that we should take a vow within which period we should complete the project. Whether it will be for the general reader or for scholars must be decided prior to the publication of first volume, and accordingly a content list be published. He also advised for a summary of Ramakathas of different languages must be given in Sanskrit in the first volume. He said there is a query among the people what is in Kanaanda or Malayalama Ramayana and so on. In Kashmiri Ramayana the description of more than 300 wives of Kakshmana is given. According to this Ramayana Ayodhya Lanka etc. were in Kashmir. Sita is believed Rama's daughter in their Ramayana. In Kashmiri-Ramayana Mandodari saya Rama that sita is my daughter and take her away from this place soon, because the story in her father's house is not good for a girl. Sri Chaturbhuja's advice was for the curtailment of the project and after the publication of first volume further planning might be settled for the succeeding volumes.

Dr. Nagendra Prasad, the Regional Deputy Director of Education, Darbhanga Division, said that this work should be done for the benefit of general reader. Now, this is not that age when any book should be written only for the scholars. People of different communities have adopted Rama and other characters of Ramakatha according to their system. Jain poet

Svayambhu and mahakavi Vimalsuri have mentioned sports (lilas) of Rama. Svayambhu has depicted Rama in the lanes of whores. Rama & Sita are described brother and sister in one of the Buddhist Jatakas viz-Dasaratha Jataka. A riost had occured in Jobolpore when Theraist Acharya Tulsi wrote some new things about-Rama. He advised such type of books should be written which can entertain the people and increase the knowledge as well. He thanked the Pro-Vice-Chancellor who has dedicately decided to jump high at the youth age of 66. He informed that the Hanumana image of Patna museum is some different type than our general conception of Hanumana statuettes, and in Thai Ramayana viz Ramakiyan, Hanmana means a strong man. One part of Ramayana i. e. sundarakanda is after the name of Sundara, one of the names of Hanumana.

Describing the importance of Ramayana in the Indian Astadasavidya, Prof. Ram Sevaka Jha, head of the department of Philosophy, requested for the greater evalution of Rama stories. Which is sadvriti that is duty, he added, Jaimini has accepted tatparyartha as vakyartha. The goal of vidyas are to vanish the asadvrtti, and this type of work will be for the public welfare, he commented. At the time of Raghuvamsa's writing Kalidasa had some doubt that the characters whom he was mentioning were the descendants of surya and how much he would succeed. He said about the removal of prejudices (Kusamskaras) among the people through the large scale of advertisement of Ramakatha.

Dr. Udayakant Jha, head of the Sahitya depti., said that the atmosphere has become pious due to the talks of Ramakatha. Rama was the devotee (upasaka) upasya was siva. Describing the legends of Ramakatha's characters, he said that still there is an island whose people say themselves the genus of bears. Appaya Dikshit has said that Rama had such power due to the devotion of siva. He hoped that this Ramakatha project will be fruitful.

The former Principal of Shokahara (Barauni) Sanskrit College, Pt. Diwakara Shastri said about the importance of Ramakatha in Indian literature & culture and pointed out the difficulties which will come in the way of the completion of this project. He indicated that this project would be for the general people. We should present the summaries of all Ramayanas in simple and understandable sanskrit We should not mean it a research work. Immediately if we take 5–7 works and publish a summary of 800 pages of each, it will become a magnum opus. We take the original story of Rama in Indian languages as central theme. Expressing his views about the expenditure Shastryji said we can take advance-money from the buyers like the felicitation books.

Agreeing about the utility of the project Vidyavachaspati Pt. Ramachandra Mishra expressed his views that a list must be given in the first volume about all the Ramakathas of different languages.

Renowned grammarian Pt. Arjuna Jha stated that Ramayan is above the logic. The world of aptapurusa is pramian, Instituting the difference between birth

and incaration he said that the depiction of Rama-katha is a difficult task. Tulsi has himself said that there are hundreds of crores of Ramayans.

The retired principal of Govt. Sanskrit College (Bhagalpur) Pt. Phulkumar Jha mentioned some vital incidents of Ramayana, like Rama's banishment and Hanumana stuti as the incartation of Samkara. We should know all the sports (lilas) of Rama, and a eollection there of should have in Sanskrit. Heartiest Heartiest contribution of all should have in this project, when Krishna lifted the Goverdhana Mountain, the cowheres attached their stiths thereto.

Pt. Upendra Jha, upacarya of Veda-Dharmasastra, said that Ramayana is in various languages. A comparative and concise form of those in Sanskrit be presented, because people want to know much more knowledge in a short period. His opinion was that the portions of Ramakatha be published in short book forms by which the story of Rama can be popularized, preferably on the basis of characterization of Ramayana's characters.

Dr. Sachchida Nand Chaudhary, the Registrar of KSDSU, who earlier welcoming the guests invited their opinions, again expressing his own views said probably this project has become very huge and doubted about the finishing of the project. He opined that this type of project can take 50 yrs too, for one man. Referring a series of 13 volumes published by Nagari Pracharani Sabha, he said this type of work is possible merely by any institution. Showing the instance of Belgian-Origin

Father Camille Bulke, he said, after his life long attachment to the study of Ramakatha something remained incomplete to him. He further said that at first a bibliography of the scattered Rama literature should be prepared with a short description of each book. After that any comparative study can be taken. He said when Terner had compiled the dictionary and Grierson had surveyed the Indian languages and dialects, then anything can be done if there is dedication. He pointed out that it is better to elucidate each character than kneading the sea.

Making adjustment among different views expressed in the concert, the University Vice-chancellor Dr. Jayamanta Mishra, presented a list of rare books of Rama literature, and said that Rama and Krishan were such type of inarnations who were always respectable. Both were adorned with splendour and sweetness. Querying how we shall put Rama in our project he answered himself as adikavi Valmiki has seen Rama that will be our ideal. We shall go with the speciality of Valmiki Ramayana's Rama, the representative of the tenfacets of Dharma. If we accomodate the available materials in the first volume that will be a magnum opus. Describing the monetary problems Mr. Vice-Chancellor announced that at present we have managed 30-40 thousands and when the work will start if will be managed. He informed about the donation of Rs. 5000/-given at the meeting place by Shweta Nath Ojha, the Principal of Sanskrit College Dhauri (Bhojpur). Mr. Vice-Chancellor gave the assurance of the constitution of a five man body to give the project a concret shape.

At first pro-Vicechancellor Pt. Adya Charan Jha presented the available list of books related to Ramakatha and stated how since his boyhood the Ramakatha had impressed and enlightened him and how his deceased wife had given fillip to this sentiment. He reiterated his will for the working to this project. Finally he thanked the invited scholars for their precious opinions.

The meeting came to an end with refreshment.



ग्रन्थ कर्तुः संक्षिप्तपरिचयः

“प्रथमश्चरणः”

मिथिलायां सुविख्याता 'मंगरौनी' शिवप्रदा ।
तत्रैव जन्म संजातं पित्रोर्नित्यं मुदावहम् ॥ १ ॥

'ताराचरण' नामायं पिता विजयते बुधः ।
शब्दशास्त्रे पारगामी रसशास्त्रविशारदः ॥ २ ॥

भारतस्य प्रसिद्धो यो वेदज्ञः काव्यमर्मवित् ।
'कालीचरण' नामासौ पितृव्यो राजते सुधीः ॥ ३ ॥

'भुवनेश्वरी' च माता मे सुशीला धर्म पारगा ।
शील दाक्षिण्ययुक्ता या शब्दशास्त्रे विचक्षणा ॥ ४ ॥

पितृव्यपत्नी सादेवी साक्षात् भगवतीव या ।
'भगवती' विभात्यग्रे चाद्यापि सुखदा सदा ॥ ५ ॥

पत्नी 'कुमुदिनी' देवी प्रथमा गुणवती सदा ।
रूपलावण्यसंयुक्ता दयाभावसमन्विता ॥ ६ ॥

पिता पितृव्यो स्वर्याती मध्ये वयसि ता बुभौ ।
मणिद्वीपं गता माता पत्नी कुमुदिनी तथा ॥ ७ ॥

विपत्सागरमग्नोऽयं जनः पठन - पाठने ।
संघर्षेण कृतं सर्वं निष्ठया साहसेन च ॥ ८ ॥

“द्वितीयश्चरणः”

'नमोनारायणाख्यो'ऽसौ बृहस्पतिरिवापरः ।
तस्मादधीतं सकलं शब्दशास्त्रादिकं महत् ॥ ९ ॥

धर्मपत्नी द्वितीयामेऽद्वितीयागुणैर्युता ।
'इन्द्रकलेति' साऽऽख्याता चन्द्रिकेवप्रभान्विता ॥ १० ॥

पितृव्यजोऽनुजोऽन्वर्थसंज्ञो 'पूरन' संज्ञकः ।
भ्रातृभक्तियुतः सोऽयं वंशानुक्रमणे सदा ॥ ११ ॥

भ्रातृजाया च यां 'सीया' साक्षात् सीतास्वरूपिणी।
'इन्द्रकला'-यथासक्ता गृहकार्यरतासदा ॥ १२ ॥

पुत्रास्त्रयो विवर्धन्ते सुयोग्याः सेवनेरताः।
मदनश्च सुधीरश्च सुशीलः शील संयुताः ॥ १३ ॥

अशोकश्च प्रकाशश्च सुभाषश्च तथा शुभाः।
भ्रातृजास्ते त्रयो नित्यं विनयेनमुदान्विता ॥ १४ ॥

अन्नपूर्णा च सरिता वेणुश्चैव तथा विधाः।
पुत्र वध्वश्च तिस्रो मे विराजन्ते सुधा समाः ॥ १५ ॥

एको मम प्रियश्छात्रः सेवको भक्तिभावतः।
पुत्रत्वेन गृहीतोऽसौ 'महेन्द्रः' स्वेच्छया मुदा ॥ १६ ॥

तस्य पत्नी सुयोग्या या 'शान्तिः' शान्तिमयी सदा।
साऽपिपुत्रवधूत्वेन स्नेहेन स्वीकृता मया ॥ १७ ॥

कन्याश्चतस्रो विद्यन्ते गुणैः सर्वैः समन्विताः।
'भवानी' चैव 'कल्याणी' 'मोहिनी' चाशया युताः ॥ १८ ॥

'विभा' 'प्रभा' तथा 'चाभा' 'शुभा' तु सर्वदा शुभा।
सुशोभन्ते भ्रातृजास्ताः नित्यं सर्वाः प्रभान्विता ॥ १९ ॥

जामातरश्च सर्वे मे विद्याशीलगुणान्विताः।
महाकान्तो ऋषीकेशो मदनानन्द एव च ॥ २० ॥

चन्द्रोपमः सतीशश्च दयाशंकर एव च।
'कमलः' कमलतुल्यो यो 'शेखर'श्चन्द्रशेखरः ॥ २१ ॥

दौहित्रादयश्च ये सर्वे 'किशोर' सहिता सदा।
समेधन्ते यथायोग्यं राजेशाद्याः विचक्षणाः ॥ २२ ॥

'वासन्ती' च तथा 'मुन्नी' 'सोनी'चापि शुभार्चना।
पौत्रीभिः सहिताः पौत्राः समेधन्ते शुभाननाः।

'अरविन्दो' 'मिलिन्द'श्च 'नलिन'स्तु तथा विधा।
नित्यं मे कुर्वते मोदं हसन्तो हर्ष संयुताः ॥ २३-२४ ॥

"अन्तिमश्चरणः"

सत्यामेवं स्थितौ चात्र वज्रपातो महानभूत् ।
भूकम्पवत् हठात् जातो विदीर्णोऽयं जनः पुनः ॥ २५ ॥

पत्नी 'चन्द्रकला' याता गोलोकं सहसा च या ।
पारावारे विपत्तेश्च पुनर्मग्नाः समे वयम् ॥ २६ ॥

येन केन प्रकारेण तस्याः प्रेरणया मया ।
दिव्या रामकथां वक्ष्ये स्वान्तःशान्तः मुदान्वितः ॥ २७ ॥

तेनैव भाग्यहीनेन सदाद्याचरणेन हि ।
तस्यै इन्द्रकलायै सा कृतिः स्नेहात् समर्प्यते ॥ २८ ॥

इति

विदुषां वसम्बदः
आद्याचरण झा

विनम्र निवेदनम्

सत्यामपि सावधानतायां शीघ्रतायां मुद्रणजन्या कियती अशुद्धिः त्रुटिश्च संजाता । गुणैकपक्षपातिनः कृपया संशोध्य पठन्तु-इति भृशं निवेदयति ।

—प्रकाशकः

